उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय
प्रयागराज

# BLIS-102
## पुस्तकालय प्रबन्धन

## खण्ड

## 1

## प्रबन्धन एवं नियोजन

इकाई - 1
प्रबन्धन के सिद्धान्त : सामान्य, शास्त्रीय एवं वैज्ञानिक सिद्धान्त 5

इकाई - 2
भौतिक नियोजन : भवन, उपस्कर और उपकरण 41

इकाई - 3
मानव संसाधन विकास एवं कार्मिक नियोजन 64

इकाई - 4
सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन एवं सहभागी प्रबन्धन 88

## विशेषज्ञ समिति - पाठ्यक्रम अभिकल्पन

| | |
|---|---|
| डॉ0 पाण्डेय एस0 के0 शर्मा | अवकाश प्राप्त मुख्य ग्रंथालयी, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली, |
| डॉ0 ए0 पी0 गक्खर | विश्वविद्यालय ग्रंथालयी, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इला0 |
| डॉ0 यू0 सी0 शर्मा | एसोसियेट प्रो0 एवं विभागाध्यक्ष, बी0आर0 अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा |
| डॉ0 सोनल सिंह | एसोसिएट प्रोफेसर, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन |
| डॉ0 ए0 पी0 सिंह | एसोसिएट प्रोफेसर, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी |
| डॉ0संजीव सर्राफ | उपपुस्तकालयाध्यक्ष, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी |
| डॉ0 टी0एन0 दुबे (सदस्य सचिव) | विश्वविद्यालय ग्रंथालयी, उ0प्र0रा0ट0 मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद |

## सम्पादक मण्डल

| | |
|---|---|
| डॉ0 टी0 एन0 दुबे | विश्वविद्यालय ग्रंथलयी, उ0 प्र0 रा0ट0 मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद |
| श्री आर0 जे0 मौर्य | सहायक ग्रन्थालयी, उ0 प्र0 रा0ट0 मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद |
| श्री राजेश गौतम | प्रवक्ता, पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान विभाग, उ0 प्र0 रा0ट0 मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद |



## लेखक

| | |
|---|---|
| डॉ0 एच0 के0 चक्रवर्ती | एसोसिएट प्रोफेसर, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी |

## परिमापक

| | |
|---|---|
| डॉ0 वेदानन्द त्रिपाठी | ग्रन्थालयी, नारायण पी0 जी0 कालेज, शिकोहाबाद, (उ0प्र0) |


प्रस्तुत पाठ्य सामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के स्वयं के हैं।


**© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज - 2024**


**ISBN -**



**उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।**


**प्रकाशक- उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की ओर से विनय कुमार, कुलसचिव द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित वर्ष - 2024.**

**मुद्रक - के0 सी0 प्रिंटिंग एण्ड एलाइड वर्क्स , पंचवटी , मथुरा - 281003.**

[RIL-023]

BLIS-02/2

# खण्ड परिचय - ( प्रबन्धन एवं नियोजन )

किसी भी संस्था या संगठन को किसी विशेष निर्धारित उद्देश्य की प्राप्ति हेतु स्थापित किया जाता है। संस्था या संगठन को अपने विशेष निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतु विभिन्न मानवीय प्रयासों को नियोजित, निर्देशित, संगठित, समन्वित एवं नियन्त्रित करने की आवश्यकता पड़ती है। जिसके लिए प्रबन्धन अत्यन्त आवश्यक है। प्रबन्ध एक व्यापक एवं सार्वभौमिक शब्द है। जो मानव सभ्यता के लिए विभिन्न क्रिया-कलापों में प्रारम्भ से ही विद्यमान रहा है। अतः समय, परिस्थिति एवं विकास के विभिन्न चरणों में विभिन्न विद्वानों द्वारा विभिन्न रूपों में परिभाषित किया गया है। इस प्रकार प्रबन्ध एक कलात्मक एवं वैज्ञानिक प्रक्रिया है, जो संस्था के निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु विभिन्न व्यक्तियों के व्यक्तिगत एवं सामूहिक प्रयासों का नियोजन, संगठन, निर्देशन, समन्वय, नियन्त्रण, अभिप्रेरण एवं निर्णयन करता है। प्रबन्धन एक निश्चित उद्देश्य को पूर्ण करने के लिए, निश्चित की गई क्रियाविधि का प्रयोग करते हुए, निश्चित अवधि में कार्य को सम्पन्न कराने की प्रक्रिया है। अतः इस खण्ड में उचित प्रबन्धन एवं नियोजन के लिए प्रबन्ध के सामान्य एवं वैज्ञानिक सिद्धान्तों का उल्लेख किया गया है, जिसमें जार्ज आर॰ टेरी, हेनरी फेयोल आदि के सिद्धान्त प्रमुख हैं। प्रबन्ध के कार्यों को लूथर गुलिक ने POSDCORB के माध्यम से भलिभाँति प्रस्तुत किया है। साथ ही प्रबन्ध की विशेषताओं, उसके विभिन्न स्तर, प्रबन्ध क्षेत्र तथा उसकी विचारधाराओं के उद्गम एवं विकास की व्याख्या करते हुए विभिन्न स्कूलों (विचारधाराओं) का उल्लेख किया गया है।

खण्ड में पुस्तकालय के विभिन्न कारकों (पाठक, पाठ्य सामग्री एवं पुस्तकालय भवन) में से एक प्रमुख पुस्तकालय भवन का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि पुस्तकालयों द्वारा अपने सामग्रियों को संग्रहीत करने तथा उसके माध्यम से विभिन्न प्रकार के कार्य एवं सेवाओं को सुचारू रूप से संचालित करने के लिए जिस भवन का प्रयोग किया जाता है, उसे पुस्तकालय भवन कहते हैं। पुस्तकालय भवन निर्माण से पूर्व विभिन्न बिन्दुओं पर विचारोपरान्त एक आकर्षक एवं क्रियाशील भवन निर्माण का प्रावधान किया गया है। जिसके लिए विभिन्न सिद्धान्तों एवं मानकों का विस्तृत उल्लेख किया गया है। पुस्तकालय भवन की उपयोगिता में वृद्धि करने हेतु उसमें उपयोग में आने वाले विभिन्न उपस्करों, उपकरणों तथा मानकों को भी इंगित किया गया है, जिससे पुस्तकालय भवन को अधिक उपयोगी बनाया जा सके। साथ ही भवन निर्माण में पुस्तकालयाध्यक्ष की भूमिका को भी बताया गया है।

किसी भी संस्था या संगठन का अस्तित्व मानव संसाधन पर ही निर्भर करता है क्योंकि मानव ही संगठन में मूल्यों एवं संस्कृति का निर्माण करते हैं तथा उसे अपने प्रयासों से ऊँचाईयाँ प्रदान करते हैं। अतः मानव संसाधन के समुचित प्रयोग हेतु मानव

NMDC-019

संसाधन प्रबन्धन अत्यन्त आवश्यक है। मानव संसाधन से अभिप्राय संगठन या संस्था में विभिन्न कार्यों को क्रियान्वित करने वाले कर्मचारियों से है, तथा उन कर्मचारियों के हितों की रक्षा एवं कार्यों में सहयोग प्राप्त करने के लिए प्रबन्धन मानव संसाधन प्रबन्धन कहलाता है। मानव संसाधन प्रबन्धन के द्वारा संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु मानव संसाधन के विकास पर अत्यधिक बल दिया जाता है। यह एक प्रक्रिया है, जो संगठन के कर्मचारियों में उनके कौशल तथा उनमें प्रतिस्पर्धा की भावना में निरन्तर वृद्धि में सहायता करता है। जिससे संगठन का विकास होता है। इस खण्ड में मानव संसाधन विकास के उद्देश्य, आवश्यकता, उसके प्रणालियों तथा कार्मिक नियोजन को परिभाषित करने के साथ-साथ उसकी आवश्यकता एवं उद्देश्य तथा पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्र में कार्मिक नियोजन प्रक्रिया का विस्तृत उल्लेख किया गया है।

खण्ड में सम्पूर्ण गुणवत्ता एवं सहभागी प्रबन्धन की व्याख्या, उद्देश्य, आवश्यकताओं, प्रणालियों, तत्वों तथा स्वरूपों का उल्लेख करते हुए निर्दिष्ट किया गया है कि प्राचीन काल में पुस्तकालयों का स्वरूप मात्र पुस्तक भण्डार गृह के रूप में था परन्तु आधुनिक युग में तकनीकियों के विकास के परिणामस्वरूप पुस्तकालय ने एक सूचना केन्द्र का स्वरूप धारण कर लिया है, जिसका उद्देश्य पाठकों को, उपयुक्त समय में उपयुक्त सूचनाएँ उपलब्ध कराना है। इसके लिए पुस्तकालय के सुचारू प्रबन्धन में सम्पूर्ण गुणवत्ता एवं सहभागी प्रबन्धन अत्यन्त आवश्यक है। सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन किसी भी संस्था या संगठन में गुणवत्ता केन्द्रित प्रबन्धकीय अभिगम है, जो संस्था या संगठन के सभी व्यक्तियों के प्रतिभागिता पर आधारित है, और जिसका उद्देश्य दीर्घकालिक सफलता प्राप्त करना है, जो उपयोक्ता एवं संगठन के सभी व्यक्तियों तथा समाज के लिए लाभप्रद हो।

खण्ड को प्रबन्धन एवं नियोजन की सम्पूर्णता के लिए चार इकाईयों में विभक्त किया गया है। जिसके अध्ययन से आप अपनी पाठ्यक्रम सम्बन्धी आवश्यकताओं को प्राप्त करने में सफल होंगे।

# इकाई - 1: प्रबन्धन के सिद्धान्त : सामान्य, शास्त्रीय एवं वैज्ञानिक सिद्धान्त

## इकाई की रूपरेखा


1.0 उद्देश्य

1.1 विषय परिचय

1.2 प्रबन्धन : अर्थ एवं परिभाषा

1.3 प्रबन्धन की विशेषताएँ या लक्षण

1.4 प्रबन्धन के कार्य

1.5 प्रबन्धन के विभिन्न स्तर

1.6 प्रबन्धन के क्षेत्र

1.7 प्रबन्धन के सामान्य सिद्धान्त

- 1.7.1 हेनरी फेयोल द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त
- 1.7.2 जॉर्ज आर॰ टैरी द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त
- 1.7.3 एल॰ एफ॰ उर्विक द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त

1.8 प्रबन्धन के वैज्ञानिक सिद्धान्त

1.9 प्रबन्धकीय विचारधारा : उद्‌गम एवं विकास

1.10 प्रबन्धकीय विचारधारा के विभिन्न स्कूल

1.11 पुस्तकालय एवं प्रबन्धन

1.12 सारांश

1.13 अभ्यास -.कार्य

1.14 संदर्भ - ग्रंथ


## 1.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में प्रबन्धन को परिभाषित करते हुए इसकी विशेषताओं, कार्यों, क्षेत्र विस्तार एवं विभिन्न स्तरों का सामान्य अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इसके साथ ही इस इकाई में प्रबन्धन के सामान्य सिद्धान्तों के अन्तर्गत हेनरी फेयोल के 14 सिद्धान्तों, जार्ज आर॰ टैरी के सिद्धान्तों तथा एल॰ एफ॰ उर्विक के सिद्धान्तों पर प्रकाश डाला गया है।

प्रस्तुत इकाई में वैज्ञानिक प्रबन्धन के सिद्धान्तों, प्रबन्धन की शास्त्रीय विचारधारा तथा अन्य विचारधाराओं के साथ ही पुस्तकालय में प्रबन्ध के सिद्धान्तों के अनुप्रयोग को

NMDC-019

भी स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। आशा है कि आप प्रस्तुत इकाई के माध्यम से प्रबन्धन की अवधारणा के साथ ही इसके विभिन्न सिद्धान्तों को समझने में सक्षम हो सकेंगे।

## 1.1 विषय - परिचय

आधुनिक सभ्य समाज में प्रबन्धन को एक व्यापक एवं सार्वभौमिक शब्द के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। आज के सभ्य समाज में प्रबन्धन सर्वत्र व्याप्त है। आज मानव सभ्यता के प्रत्येक क्षेत्र, चाहे वह खेत हो या कारखाना, व्यवसाय हो या उद्योग, स्कूल हो या विश्वविद्यालय, अस्पताल हो या पुस्तकालय इत्यादि सभी स्थानों एवं सेवाओं के सफल संचालन का आधार प्रबन्धन ही है।

वास्तव में प्रबन्धन की अवधारणा कोई नई खोज नहीं है, अपितु यह उतनी ही पुरानी है, जितना की मानव सभ्यता का इतिहास, अर्थात् मानव सभ्यता के प्रारम्भिक काल से ही प्रबन्धन किसी न किसी रूप में उनकी विभिन्न क्रियाकलापों में विद्यमान रहा है। परन्तु समय, परिस्थिति एवं विकास के साथ-साथ ही प्रबन्धन की अवधारणा में भी परिवर्तन आता गया, जो आज के इस विकसित युग में आधुनिक एवं वैज्ञानिक प्रबन्धन का स्वरूप धारण कर चुका है।

विश्वविद्यालय प्रबन्धशास्त्री एफ॰सी॰ हूपर के अनुसार - ''प्रबन्धन उद्योग को चलाने वाली एक शक्ति है, जो औद्योगिक इकाई को प्रेरणा प्रदान करती है। उसको एक इकाई के रूप में संगठित करती है तथा सम्पूर्ण शक्तियों एवं साधनों के सर्वोत्तम उपयोग के लिए दशाएँ एवं सम्बन्ध निर्धारित करती हैं।'' इसी प्रकार पीटर ड्रकर के अनुसार- ''प्रबन्धन प्रत्येक व्यवसाय का गतिशील एवं जीवन दायक तत्व है। इसके नेतृत्व के अभाव में उत्पादन के साधन केवल साधन मात्र ही रह जाते हैं, कभी उत्पाद नहीं बन पाते हैं। अतः संक्षेप में कहा जा सकता है कि 'प्रबन्धन वास्तव में व्यवसाय रूपी शरीर का मस्तिष्क अथवा उसकी जीवनदायिनी शक्ति है, जिसके अभाव में कोई भी संगठन अथवा संस्था, भूमि, मानव श्रम, पूँजी इत्यादि का एक निष्क्रिय समूह मात्र रह जायेगा।'

आधुनिक युग में प्रबन्ध को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में जाना जाता है, जो सभी प्रकार के संगठनों या संस्थाओं में या जहाँ भी कहीं कुछ व्यक्तियों द्वारा मिलकर सामूहिक रूप से किसी पूर्व निर्धारित उद्देश्य एवं आदर्शों की प्राप्ति हेतु कार्य किया जाता है। इसमें आर्थिक क्रियाकलाप भी सम्मिलित है। दूसरे शब्दों में किसी संस्था विशेष के पूर्व निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु अपनायी जाने वाली सुव्यवस्थित प्रक्रिया को ही प्रबन्धन कहा जाता है।

आधुनिक तकनीकी एवं वैज्ञानिक युग में अन्य सभी विशिष्ट विषयों की भाँति प्रबन्धन को भी एक स्वतन्त्र विषय के रूप में स्वीकार किया जाता है, तथा इसे नये सिरे



HMDC-019

से परिभाषित करने एवं इसमें आधुनिक नवीन वैज्ञानिक तकनीकियों के प्रयोग पर बल दिया जाने लगा है।



## 1.2 प्रबन्ध : अर्थ एवं परिभाषा

अर्थ— अंग्रेजी भाषा के शब्द Management को हिन्दी भाषा में 'प्रबन्धन' कहते हैं। जिसका अर्थ-कार्य तथा कार्य करने वालों की कौशलपूर्ण व्यवस्था करने से है। इस इकाई के विषय-परिचय शीर्षक के अन्तर्गत पहले ही स्पष्ट किया जा चुका है कि प्रबन्ध एक व्यापक एवं सार्वभौमिक शब्द है,जो मानव सभ्यता के विभिन्न क्रियाकलापों में प्रारम्भिक काल से ही विद्यमान रहा है। अतः समय, परिस्थिति एवं विकास के विभिन्न चरणों में इसको अलग-अलग ढंग या अर्थों में परिभाषित किया गया है, इस कारण प्रबन्धन की प्राचीन अवधारणा से लेकर आधुनिक अवधारणाओं तक को, अध्ययन की सुविधा हेतु प्रमुख रूप से दो अर्थों में प्रकट किया जा सकता है।

### (1) संकुचित अर्थ के रूप में प्रबन्धन–

"प्रबन्धन दूसरे व्यक्तियों से कार्य कराने की युक्ति है।" अर्थात् वह व्यक्ति जो दूसरे व्यक्तियों से कार्य करा सकता है। वह प्रबन्धक कहलाता है।

### (2) व्यापक अर्थ के रूप में प्रबन्धन-

"प्रबन्धन एक कला एवं विज्ञान है, जो निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए विभिन्न मानवीय प्रयासों से सम्बन्ध रखता है।" इस अर्थ में प्रबन्धन में निम्नलिखित कार्य सम्मिलित होते हैं- नियोजन, संगठन, समन्वयन, निर्देशन, अभिप्रेरण, नियन्त्रण तथा नीति निर्धारण इत्यादि।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि जब कोई संस्था विशेष (इसमें पुस्तकालय भी सम्मिलित है) अपने निर्धारित लक्ष्यों या उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए विभिन्न मानवीय प्रयासों को नियोजित, निर्देशित, संगठित, समन्वित एवं नियन्त्रित करता है, तब यह क्रिया विधि उस संस्था का प्रबन्धन कहलाती है। वस्तुतः संगठित एवं सामूहिक प्रयासों को उद्देश्यपूर्ण बनाने की प्रक्रिया को ही प्रबन्धन कहा जाता है। प्रबन्धन के अभाव में कोई संगठन ठीक उसी प्रकार निरर्थक एवं निरंकुश हो जाता है, जैसे आत्मा के बिना मनुष्य का शरीर प्रबन्धन ठीक उसी प्रकार संस्था के विभिन्न कर्मचारियों एवं अधिकारियों को निर्देशित, संचालित एवं नियंत्रित करता है, जिस प्रकार मानव मस्तिष्क शरीर के विभिन्न अंगों में समन्वय, संचालन एवं नियंत्रण रखता है।

प्रसिद्ध प्रबन्ध शास्त्री हैमन ने प्रबन्धन को तीन दृष्टिकोणों से निम्न प्रकार परिभाषित किया है—



NMDC-019

**1. प्रबन्धन अधिकारियों के अर्थ में -** इस दृष्टिकोण के अनुसार प्रबन्धन से तात्पर्य प्रबन्धक अथवा उन अधिकारियों से है, जिनके द्वारा किसी संस्था या संस्था को किसी इकाई में कार्य करने वाले लोगों के कार्यों पर नियन्त्रण स्थापित किया जाता है।

**2. प्रबन्धन विज्ञान के अर्थ में -** इस दृष्टिकोण के अन्तर्गत प्रबन्धन को एक ऐसे विज्ञान के रूप में परिभाषित किया गया है, जिसके अनुसार किसी संस्था के विभिन्न क्रियाकलापों एवं व्यक्ति समूह को नियोजित, निर्देशित, समन्वित, अभिप्रेरित एवं नियन्त्रण से सम्बन्धित सिद्धान्तों को वैज्ञानिक आधार पर विश्लेषित किया जाता है।

**3. प्रबन्धन प्रक्रिया के अर्थ में -** इस दृष्टिकोण के अन्तर्गत प्रबन्धन को एक सतत् प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया गया है। थियोहैमन ने इसे सर्वाधिक महत्वपूर्ण दृष्टिकोण माना है। जिसके अन्तर्गत किसी पूर्व निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु अन्य लोगों के साथ मिल-जुलकर कार्य किया जाता है।

**परिभाषा -**

समय, परिस्थिति एवं विकास के परिणामस्वरूप प्रबन्धन की अवधारणा में निरन्तर परिवर्तन होता रहा है। प्रबन्ध शास्त्री समय-समय पर अपने दृष्टिकोण के आधार पर प्रबन्धन को परिभाषित करते रहे हैं, फिर भी आज तक प्रबन्धन की कोई ऐसी सर्वमान्य एवं निश्चित परिभाषा प्रस्तुत नहीं की जा सकी है। अतः आज की बदलती हुई परिस्थितियों में प्रबन्धन को समझने के लिए कुछ प्रमुख प्रबन्ध शास्त्रियों द्वारा दी गयी परिभाषाओं को नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है—

**1. एफ॰ डब्ल्यू॰ टेलर के अनुसार–**

"प्रबन्धन यह जानने की कला है कि आप क्या करना चाहते हैं, तथा यह देखना कि उसे सर्वोत्तम एवं मितव्ययितापूर्ण ढंग से कैसे किया जा सकता है।"

**2. स्टेनले वेन्स के अनुसार–**

"प्रबन्धन केवल निर्णय करने तथा मानव की क्रियाओं पर नियन्त्रण करने की विधि है ताकि नियत लक्ष्यों की प्राप्ति हो जाये।"

**3. जेम्स एल॰ लुण्डी के अनुसार–**

"प्रबन्धन मुख्य रूप से विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए दूसरे के प्रयत्नों को नियोजित, समन्वित, प्रेरित तथा नियन्त्रित करने का कार्य है।"



HMDC-019

**4. हेनरी फेयोल के अनुसार–**

"प्रबन्धन से आशय पूर्वानुमान लगाना एवं योजना बनाना, संगठित करना, आदेश देना, समन्वय करना तथा नियन्त्रण करना है।"

**5. जॉर्ज आर॰ टेरी के अनुसार–**

"प्रबन्धन एक पृथक प्रक्रिया है, जिसमें नियोजन, संगठन, क्रियान्वयन तथा नियन्त्रण को सम्मिलित किया जाता है तथा इनका निष्पादन व्यक्तियों एवं साधनों के उपयोग द्वारा उद्देश्यों को निर्धारित एवं प्राप्त करने के लिए किया जाता है।" (प्रबन्धन की यह एक व्यापक परिभाषा है।)

**6. सी॰ डब्ल्यू॰ विल्सन के अनुसार–**

"निश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु मानवीय शक्तियों के प्रयोग एवं निर्देशन की प्रक्रिया को प्रबन्धन कहा जाता है।"

**7. जॉन एफ॰ मी के अनुसार–**

"प्रबन्धन से आशय न्यूनतम प्रयास के द्वारा अधिकतम परिणाम प्राप्त करने की कला से है, जिससे नियोक्ता एवं कर्मचारी दोनों के लिए अधिकतम समृद्धि तथा जन समाज के लिए सर्वश्रेष्ठ सेवा सम्भव् हो सकें।"

**8. अमेरिकन प्रबन्ध समिति के अनुसार–**

"प्रबन्धन मानवीय तथा भौतिक साधनों को क्रियाशील संगठनों की इकाईयों में लगता है, जिसका उद्देश्य व्यक्तियों को सन्तोष प्रदान करना तथा सेवकों में उच्च नैतिक स्तर पर तथा कार्य पूरा करने का उत्तरदायित्व उत्पन्न करना है।" (प्रबन्धन की यह एक पूर्ण एवं उपयुक्त परिभाषा है)।

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर संक्षेप में कहा जा सकता है कि – "प्रबन्धन एक कलात्मक एवं वैज्ञानिक प्रक्रिया है, जो संस्था के निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए विभिन्न व्यक्तियों के व्यक्तिगत एवं सामूहिक प्रयासों का नियोजन, संगठन, निर्देशन, समन्वय नियन्त्रण, अभिप्रेरण एवं निर्णयन करती है।"

## 1.3 प्रबन्धन के लक्षण या विशेषताएँ

प्रबन्धन की विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाओं एवं अवधारणाओं का विवेचन करने से उसकी निम्न प्रमुख विशेषताएँ प्रकट होती हैं–

HMDC-019

**1. प्रबन्धन एक प्रक्रिया है –**

जॉर्ज आर॰ टैरी के अनुसार – ''प्रबन्धन एक सतत् प्रक्रिया है।'' जो उस समय तक चलती रहती है, जब तक कि निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति नहीं हो जाती है। जो लोग इस प्रक्रिया को चलाते हैं, वे अधिशासी अथवा प्रबन्धनक कहलाते हैं। उनका प्रमुख कार्य किसी संस्था के सीमित साधनों को मानव समाज के लिए अधिकतम उपयोगी बनाना है। वस्तुतः प्रबन्धन वह महत्वपूर्ण प्रक्रिया है, जिसमें प्रबन्धन की उन समस्त तकनीकों को सम्मिलित किया जाता है, जिनके द्वारा प्रबन्धन तन्त्र अन्य लोगों की विभिन्न क्रियाकलापों को नियोजित, क्रियान्वित, नियन्त्रित एवं समन्वित करता है।

**2. प्रबन्धन एक प्रक्रिया है –**

ई॰एफ॰एल॰ ब्रेच के अनुसार – ''मानवीय तत्व की विद्यमानता ही प्रबन्धन को सामाजिक प्रक्रिया का विशेष लक्षण प्रदान करती है।'' अर्थात् प्रबन्धन के कार्य मौलिक रूप से मानवीय क्रियाओं से सम्बन्धित है तथा समाज में होने वाली घटनाओं एवं परिस्थितियों का प्रभाव प्रबन्धन पर पड़ता है। अतः प्रबन्धन को एक सामाजिक प्रक्रिया कहा जा सकता है, जिसके अन्तर्गत मानवीय क्रियाओं को नियोजित, संगठित, निर्देशित, समन्वित, प्रेरित एवं नियन्त्रित किया जाता है।

**3. प्रबन्धन पूर्व निर्धारित उद्देश्य की प्राप्ति है-**

प्रत्येक प्रबन्धनकीय क्रियाकलाप का कुछ न कुछ उद्देश्य अवश्य होता है, जो स्पष्ट या गर्भित हो सकता है। उन उद्देश्यों का निर्धारण प्रशासन अथवा संस्था विशेष द्वारा किया जाता है, परन्तु इन पूर्व निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति प्रबन्धन द्वारा किया जाता है। वस्तुतः प्रबन्धन की सफलता इन उद्देश्यों अथवा लक्ष्यों की प्राप्ति पर निर्भर करता है। जार्ज आर॰ टैरी, थियों हैमन इत्यादि विद्वानों ने प्रबन्धन द्वारा उद्देश्यों की प्राप्ति पर बल दिया है। उनके अनुसार-''यदि उद्देश्य ही नहीं है तो फिर प्रबन्धन कैसा?

**4. प्रबन्धन एक सामूहिक प्रयास है –**

कूण्ट्ज, ओ॰ डोनैल, लारेंस एप्पले, हेन्स, मेसी इत्यादि प्रमुख विद्वानों ने प्रबन्धन को 'सहकारी अथवा संगठित समूहों का प्रयास' माना है। इन विद्वानों के अनुसार- प्रबन्धन सदैव सामूहिक प्रयासों की ओर ही इंगित करता है न कि किसी व्यक्तिगत प्रयास की ओर। अतः संक्षेप में कहा जा सकता है कि – 'प्रबन्धन किसी एक व्यक्ति विशेष की क्रियाओं से सम्बन्ध नहीं रखता है, अपितु एक समूह विशेष की क्रियाओं से सम्बन्धित होता है, जहाँ सभी व्यक्ति मिलकर प्रबन्धन के कार्य को सामूहिक प्रयास से सम्पन्न करते हैं।


HMDC-019

### 5. प्रबन्धन कला एवं विज्ञान दोनों ही हैं –

प्रबन्धन कला एवं विज्ञान दोनों ही हैं। प्रबन्धन को कला इस कारण कहा जाता है क्योंकि प्रबन्धनकीय कला एक व्यक्तिगत कला है, जो एक प्रबन्धनक को विभिन्न परिस्थितियों के अनुरूप उचित निर्णय लेने में सहायता करता है। वस्तुतः यह प्रबन्धन का व्यावहारिक पक्ष हैं, जो कार्य अनुभवों एवं अन्तर्ज्ञान के द्वारा प्राप्त होता है। दूसरी तरफ, प्रबन्धन को विज्ञान इसलिए कहा जाता है क्योंकि इसके कुछ निश्चित सिद्धान्त एवं नियम हैं। जिनका प्रयोग लगभग सभी स्थानों पर एक समानरूप से किया जाता है।

### 6. प्रबन्धन का पृथक अस्तित्व है–

प्रबन्धन का अन्य पक्षों पर अपना एक पृथक एवं भिन्न अस्तित्व होता है। प्रबन्धन का प्रमुख कार्य स्वयं कार्य करना नहीं है अपितु दूसरों से कार्य करवाना है। दूसरों से, किस प्रकार कार्य करावाया जाय अथवा लिया जाय ताकि पूर्व निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति हो सके ही प्रबन्धन कहलाता है। वस्तुतः यह कोई साधारण कार्य नहीं है, अपितु इसके लिए अनुभव ज्ञान, चातुर्य एवं अत्यन्त धैर्य की आवश्यकता होती है।

### 7. प्रबन्धन सार्वभौमिक है–

प्रबन्धन के सिद्धान्त सार्वभौमिक है। जहाँ भी कहीं भी किसी कार्य अथवा सेवा का क्रियान्वयन सामूहिक रूप से किया जाता है, उन सभी स्थानों अथवा संगठनों में प्रबन्धन के सिद्धान्त समान रूप से लागू होते हैं। अतः संक्षेप में कहा जा सकता है कि 'प्रबन्धकीय सिद्धान्त एवं प्रक्रियायें किसी विशिष्ट कार्य, संस्था या स्थान तक सीमित न रहकर सभी कार्यों संस्थाओं एवं स्थानों में विद्यमान है।

पुस्तकालयों को एक जटिल समाजिक संस्था के रूप में जाना जाता है, जिसके सामाजिक एवं शैक्षणिक उत्तरदायित्व अत्यन्त विस्तृत हैं। जिनका निर्वाह करने के लिए पुस्तकालय विभिन्न योग्यता एवं स्तर के व्यक्तियों का एक कार्यात्मक संगठन तैयार करते हुए अपनी गतिविधियों एवं सेवाओं का संचालन करती है। अतः पुस्तकालयों के सफल संचालन में भी प्रबन्धन की व्यापकता दृष्टिगोचर होती है।

### 8. प्रबन्धन एक अदृश्य कौशल है–

प्रबन्धन एक अदृश्य कौशल होता है, जिसे हम देख नहीं सकते और न ही छू सकते हैं, परन्तु इसकी विद्यमानता का आभास हम सभी को होता है अर्थात् किसी विशिष्ट कार्य की दशाओं एवं उसके परिणाम के आधार पर उसकी उपस्थिति का आभास होता है। यदि कार्य के अच्छे परिणाम प्राप्त होते हैं तो प्रबन्धन अच्छा कहलाता है। इसके विपरीत यदि कार्य का परिणाम अच्छा नहीं होता, तो प्रबन्धन अकुशल कहा जाता है।

HMDC-2019

### 9. प्रबन्धन एक पेशा है–

आधुनिक प्रबन्धशास्त्री प्रबन्धन को पेशा मानते हैं क्योंकि इनमें वे सभी लक्षण पाये जाते हैं, जो कि एक पेशे में होते हैं। इसका कारण यह है कि किसी भी पेशे का अपना एक शास्त्र होता है, जिसके अध्ययन के बिना वह पेशा नहीं कहा जा सकता। प्रबन्धन का भी अपना एक शास्त्र होता है। इसके सिद्धान्त नीतियाँ एवं नियम इत्यादि है, जिनका प्रबन्धन करने एवं प्रबन्धन की शिक्षा देने में उपयोग किया जाता है। वर्तमान में यह अनुभव किया जाने लगा है कि बिना प्रबन्धन शास्त्र के अध्ययन के कोई भी व्यक्ति प्रबन्धन का कार्य सफलता पूर्वक नहीं चला सकता है। आज स्थिति यह है कि सभी देशों एवं सभी स्थानों पर पूँजीपति प्रबन्धनकों का स्थान धीरे-धीरे पेशेवर प्रबन्धनक ग्रहण करते जा रहे हैं।

### 10. प्रबन्धन की आवश्यकता सभी स्तरों पर है–

प्रबन्धन की यह एक प्रमुख विशेषता है कि इसकी आवश्यकता संगठन के सभी स्तरों पर पड़ती है। अर्थात् प्रबन्धन किसी भी संगठन के उच्च स्तर से लेकर उसके पर्यवेक्षीय स्तर तक आवश्यक माना जाता है। दूसरे शब्दों में किसी संस्था के संचालक मण्डल से लेकर उस संस्था के फोरमैन तक के द्वारा किये जाने वाले कार्य का निर्धारण बिना प्रबन्धन के सम्भव नहीं है।

### 11. नियत अवधि-

किसी भी कार्य को सम्पन्न करने के लिए प्रबन्धन-तन्त्र द्वारा एक नियत अवधि का नियोजन किया जाता है। जैसे-पंचवर्षीय, द्विवर्षीय, वार्षिक अथवा मासिक योजनाएँ इत्यादि। प्रबन्धन एक निश्चित अवधि में कार्य को सम्पन्न कराता हैं।

## 1.4 प्रबन्धन के कार्य

प्रबन्धन के कार्यों का प्रतिपादन सर्वप्रथम सन् 1916 ई० में श्री हेनरी फेयोल ने किया था, उनके अनुसार "प्रबन्धन करने से आशय पूर्वानुमान एवं आयोजन करने, संगठन करने, आदेश देने, समन्वयन करने तथा नियन्त्रण करने से है।" इस प्रकार फेयोल ने प्रबन्धन के निम्न पाँच कार्य बतलाये हैं-

1. पूर्वानुमान एवं आयोजन करना।
2. संगठन बनाना।
3. आदेश देना।
4. समन्वयन करना।

5. नियन्त्रण करना।

प्रबन्धन की परिभाषा की भाँति प्रबन्धन के कार्यों के सम्बन्ध में भी विभिन्न विद्वानों के विभिन्न मत रहे हैं। यथा-

1. कूण्टज तथा ओ डेनेल के अनुसार प्रबन्धन के निम्न पाँच प्रमुख कार्य हैं-

   1. नियोजन, 2. संगठन, 3. निर्देशन, 4. नियन्त्रण, 5. नियुक्तियाँ।

2. श्री ई०एफ०एल० ब्रेच के अनुसार - प्रबन्धन के निम्न चार कार्य होते हैं-

   1. नियोजन, 2. समन्वय, 3. नियन्त्रण तथा अभिप्रेरण।

3. श्री जार्ज आर० टैरी ने प्रबन्धन के निम्न चार कार्यों का उल्लेख किया है-

   1. नियोजन, 2. संगठन, 3. गति देना तथा, 4. नियन्त्रण।

4. हैराल्ड स्मिडी के संकेत शब्द POIM के अनुसार प्रबन्धन के निम्न चार कार्य हैं-

प्रबन्धन के कार्यों के सम्बन्ध में हेनरी फेयोल की विचारधारा से प्रभावित होकर श्री लूथर गुलिक महोदय ने (जो कि अमेरिका की एक संस्था 'राष्ट्रीय लोक प्रशासन संस्थान' के प्रथम संचालक थे) प्रबन्धन के सात कार्यों की सूची तैयार की। उन्होंने इसके लिए POSD CORB नामक एक संकेत शब्द का प्रतिपादन किया। प्रबन्धन के ये सात कार्य निम्नलिखित हैं-

| | | |
|---|---|---|
| 1. नियोजन करना | (Planning) | [P] |
| 2. संगठित करना | (Organising) | [O] |
| 3. नियुक्त करना | (Staffing) | [S] |
| 4. निर्देशन देना | (Directing) | [D] |
| 5. समन्वय करना | (Co-Ordination) | [CO] |
| 6. प्रतिवेदन प्रस्तुत करना | (Reporting) | [R] |
| 7. बजट प्रस्तुतीकरण | (Budgeting) | [B] |

**1. नियोजन करना ( Planning )-**

नियोजन प्रबन्धन का एक आधारभूत कार्य है, जिसके महत्व को समझते हुए लूथर मुलिक ने प्राथमिकता के क्रम में इसे प्रथम स्थान प्रदान किया है। वस्तुतः यह एक बौद्धिक एवं तार्किक कियाकलाप से सम्बन्धित कार्य है। जिसमें किसी संस्था का संगठन के निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए विभिन्न वैकल्पिक, विधियों, नीतियों एवं कार्यक्रमों

HMDC-019

में से सर्वश्रेष्ठ विकल्प का चयन किया जाता है, तथा विभिन्न तार्किक अनुमानों के आधार पर कार्य को पूरा करने से पूर्व ही यह निर्णय लिया जाता है कि क्या करना है, कहाँ करना है, कब करना है, कैसे करना है तथा किस व्यक्ति द्वारा किया जाना है। इन सभी बातों पर ध्यान देते हुए प्रबन्धक द्वारा उक्त कार्य के लिए पहले से ही कार्यक्रम तैयार कर लिया जाता है, साथ ही कार्य में बाधा उत्पन्न करने वाले कारकों तथा उनके समाधानों पर भी विचार कर लिया जाता है।

"नियोजन भविष्य के गर्भ में देखने की एक विधि अथवा तकनीक है, यह भविष्य की आवश्यकताओं का पूर्वानुमान लगाता है ताकि निर्धारित लक्ष्यों की दृष्टि से किये जाने वाले वर्तमान प्रयासों को उनके अनुरूप बनाया जा सकें।"

- जॉर्ज आर० टैरी

नियोजन की आवश्यकता सभी प्रकार के छोटे एवं बड़े उपक्रमों अथवा संस्था में होती है। पुस्तकालय भी अन्य सामाजिक संस्था की भाँति एक जटिल सामाजिक संस्था है। इस भी अपने उद्देश्यों का प्राप्ति तथा कार्यो एवं सेवाओं के निष्पादन के सम्बन्ध में योजना तैयार करना आवश्यक होता है।

### 2. संगठित करना ( Organising )-

किसी संस्था अथवा संगठन के विभिन्न क्रिया-कलापों को छोटी-छोटी इकाई में बाँटकर उन्हें संस्था के कर्मचारियों का समूह बनाकर उनके मध्य कार्यो, अधिकारों तथा उत्तरदायित्वों का विभाजन करना ही संगठन कहलाता है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि — किसी संस्था द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति करने वाले तन्त्र को संगठन कहा जाता है। इस प्रकार किसी संस्था की योजनायें, चाहे कितनी ही अच्छी एवं प्रभावशाली क्यों न हों, यदि उनको कार्यान्वित करने के लिए, अच्छे संगठन का अभाव है तो सफलता की आशा नहीं की जानी चाहिए। अतः यह आवश्यक है कि संस्था में कुशल एवं प्रभावी संगठन का निर्माण किया जाना चाहिए, जिसमें नियुक्त समस्त अधिकारी एवं कर्मचारी अपने-अपने निर्धारित कार्यों को इस प्रकार से सम्पन्न करें कि उनके कार्यों में किसी भी प्रकार की कोई कठिनाई उत्पन्न न हो।

"संगठन का तात्पर्य इच्छित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए व्यक्तियों को विवेकपूर्ण तरीके से समन्वित अथवा संगठित करना है।"

— क्रूण्टज एवं ओ० डोनेल

वस्तुतः यह वह प्रक्रिया है, जिसमें उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए संस्था के कर्मचारियों, सामग्री, उपकरण एवं अन्य संसाधनों के मध्य सम्बन्ध स्थापित किया जाता है।


HMDC-019

### 3. नियुक्ति करना ( Staffing )-

किसी संस्था विशेष द्वारा कर्मचारियों की नियुक्ति करना प्रबन्ध तन्त्र का एक महत्वपूर्ण प्रशासनिक कार्य है, जिसमें मानव संसाधन नियोजन, चयन, नियुक्ति, प्रशिक्षण एवं विकास, प्रोन्नति, पुरस्कार, अभिप्रेरण, सुरक्षा इत्यादि कार्य सम्मिलित है। इसके अतिरिक्त कार्य विश्लेषण, कार्य विवरण, कार्य संस्तुति और कार्य मूल्यांकन भी इसके अर्न्तगत सम्मिलित है। संस्था के कर्मचारी एवं पदाधिकारी जितने अधिक योग्य, प्रशिक्षित एवं अनुभवी होंगे, उस सस्था का प्रबन्धन उतना ही अधिक प्रभावी एवं कुशल होगा।

संक्षेप में हम कह सकते हैं, कि - नियुक्ति करना प्रबन्धन का एक महत्वपूर्ण कार्य एवं उत्तरदायित्व है, जो संस्था के कार्य-संचालन हेतु पर्याप्त संख्या में प्रबन्धीय कर्मचारियों एवं अन्य कर्मचारियों को उपलब्ध कराने, उनका विकास करने और उन्हें संस्था में बनाये रखने से सम्बन्ध रखती है।

पुस्तकालय के संदर्भ में कर्मचारियों एवं पदाधिकारियों की नियुक्ति करना तो और भी अधिक उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य है। चूंकि पुस्तकालयों का उत्तरदायित्व समाज के प्रति अन्य संस्था से कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण माना जाता है। अतः पुस्तकालय में कर्मचारियों की नियुक्ति करते समय यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि कर्मचारी शिक्षित एवं प्रशिक्षित होने के साथ-साथ उनका व्यवहार अच्छा एवं सहयोगपूर्ण होना चाहिए।

### 4. निर्देश देना ( Directing )-

निर्देशन एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रबन्धकीय कार्य है। जिसके अभाव में प्रशासनिक सफलता प्राप्त नहीं की जा सकती है। कर्मचारियों की कार्य-कुशलता एवं सामंजस्य संस्था के प्रमुख के नेतृत्व पर निर्भर करती है। कर्मचारियों में आत्म-विश्वास, उत्साह एवं नैतिक आचरण का विकास संस्था के प्रमुख के कुशल निर्देशन से ही संभव है।

वस्तुतः प्रबन्धन अन्य व्यक्तियों से कार्य कराने की युक्ति है। जिसमें संस्था के निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए अधीनस्थ कर्मचारियों को क्या, कैसे और कब करना है, इसके बारे में आदेश तथा कोई समस्या उत्पन्न होने पर मार्गदर्शन प्रदान करना ही निर्देशन कहलाता है।

दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि – निर्देशन प्रबन्ध का वह महत्वपूर्ण कार्य है, जो संस्था के संगठित प्रयत्नों को प्रारम्भ करता है, तथा प्रबन्धकीय निर्णयों को वास्तविकता का स्वरूप प्रदान करता है, और संस्था के निर्धारित उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए दिशा प्रदान करता है। किसी भी पुस्तकालय में निर्देशन का वही

NMDC-019

महत्व है, जो कि एक रेलगाड़ी में उसके गार्ड का, खेल में रेफरी का तथा फिल्म बनाने में उसके निर्देशक का होता है।

"निर्देशन समूह को प्रेरणात्मक शक्ति प्रदान करता है। अतः निदेशन को सफल एवं उपयोगी बनाने के लिए यह आवश्यक है कि निर्देशन पूर्णतया स्पष्ट, व्यावहारिक, सुसंगठित तथा उपयुक्त हो, जहाँ तक हो सके निर्देश लिखित रूप में दिये जाने चाहिए, ताकि इसके पालन एवं अवहेलना पर आवश्यक नियन्त्रण रखा जा सके।"

- जॉर्ज आर॰ टैरी

**5. समन्वय करना ( Co-Ordination )-**

किसी भी संस्था विशेष (जिसमें पुस्तकालय भी सम्मिलित है) में अनेक व्यक्ति कार्य करते हैं, जिनके कार्य-क्षेत्र, कार्य करने के तरीके तथा आवश्यक योग्यतायें पृथक-पृथक होती हैं। इसी प्रकार एक उपक्रम या संस्था में अनेक विभाग होते हैं, जो कि पृथक् - पृथक् कार्य सम्पन्न करते हैं किन्तु इन सभी का उद्देश्य समान ही होता है अर्थात् संस्था के निर्धारित उद्देश्य एवं लक्ष्यों की प्राप्ति करना। अतः संस्था के निर्धारित उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु संस्था में कार्य करने वाले सभी व्यक्तियों तथा विभागों के प्रयत्नों के मध्य सामन्जस्य स्थापित करना ही समन्वय कहलाता है।

"कार्य की एकता की स्थापना हेतु सामूहिक प्रयास की नियमित व्यवस्था ही समन्वय कहलाती है।" —मूने एवं रेले

"किसी संस्था के विभिन्न सदस्यों के मध्य इस ढंग से कार्यों का आवंटन करना कि उनमे परस्पर सन्तुलन एवं सहयोग बना रहे तथा यह देखना कि कार्य सद्भावना के साथ सम्पन्न हो जाय, समन्वय कहलाता है।" एफ॰एल॰ ब्रेच

**6. प्रतिवेदन प्रस्तुत करना ( Reporting )-**

प्रतिवेदन प्रस्तुत करने से तात्पर्य है कि किसी संस्था विशेष द्वारा अपने प्राधिकरण को संस्था के विभिन्न क्रिया-कलापों के सम्बन्ध में सूचना प्रदान करना है। वस्तुतः संस्था के विभिन्न क्रिया-कलापो, सेवाओं एवं अन्य सम्बन्धित प्रकरणों के सम्बन्ध में सक्षम अधिकारी के समक्ष प्रतिवेदन प्रस्तुत करना भी प्रबन्धन का एक महत्वपूर्ण कार्य है।

इसके अन्तर्गत एक विशिष्ट अवधि या नियत समय में संस्था की गतिविधियों, प्राप्तियों, कर्मियों एवं विभिन्न विभागों से सम्बन्धित सूचनाएँ उच्चाधिकारियों अथवा सक्षम अधिकारी या प्राधिकरण को उपलब्ध कराया जाता है, ताकि सक्षम अधिकारी संस्था की सफलता एवं असफलता अर्थात् संस्था की अच्छाइयों एवं कमजोरियों को ज्ञात

कर सकें और उसके आधार पर सस्था के लिए भविष्य की योजनायें बना सकें तथा संस्था के कमजोरियों को दूर कर संस्था को सबल बना सकें।

**7. बजट प्रस्तुतिकरण ( Budgeting )-**

शाब्दिक अर्थ में किसी संस्था के वित्तीय संसाधनों का नियोजित आवंटन सम्बन्धी विवरण बजट कहलाता है। यह सर्वमान्य तथ्य है कि धन के अभाव में किसी भी संगठन अथवा संस्था को संचालित नहीं किया जा सकता है। अतः संस्था के अर्जित आय को संस्था के विविध कार्यों हेतु उचित ढंग से आवंटित करना नितान्त आवश्यक कार्य माना जाता है।

प्रत्यक्ष रूप से पुस्तकालय कोई उत्पादन या आर्थिक लाभ पहुँचाने वाली संस्था नहीं होती है। बल्कि पुस्तकालय को व्यय की संस्था कहा जाता है। अतः इसके लिए धन की व्यवस्था करना, अत्यन्त आवश्यक होता है। पुस्तकालयाध्यक्ष को निरन्तर पुस्तकालय की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ करने हेतु प्रयत्न करते रहना चाहिए एवं पुस्तकालय प्राधिकरण का समर्थन एवं सहयोग प्राप्त करने हेतु उन्हें पुस्तकालय के उद्देश्यों, उपयोगिता, लोकप्रियता, आवश्यकता इत्यादि की जानकारी देते हुए पुस्तकालय के सामाजिक उत्तरदायित्वों की जानकारी भी प्रभावशाली ढंग से देना चाहिए।

## 1.5 प्रबन्धन के विभिन्न स्तर

प्रबन्धन के स्तर से तात्पर्य किसी संस्था के प्रबन्धन से सम्बन्ध रखने वाले विभिन्न पदाधिकारियों के वर्गीकरण से है। चूंकि प्रबन्धन एक सामाजिक एवं सतत् प्रक्रिया है, जिसमें एक संस्था के विविध क्रिया-कलापों के प्रभावी नियोजन एवं नियन्त्रण का उत्तरदायित्व समाहित होता है। अतः इन उत्तरदायित्वों को ध्यान में रखते हुए संस्था के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए विभिन्न कार्यक्रमों का निर्धारण, कर्मचारियों का मार्गदर्शन, विभिन्न विभागों में सामन्जस्य, एकीकरण तथा पर्यवेक्षण इत्यादि विविध क्रियाकलाप संचालित किये जाते हैं। यद्यपि संस्थाओं में प्रबन्धन के स्तरों की कोई संख्या निर्धारित नहीं की गई, फिर भी इनके कार्य प्रकृति के आधार पर सुविधानुसार इन्हें तीन प्रमुख वर्गों में विभक्त किया जा सकता है। जिनका वर्णन इस प्रकार से है-

**1. सर्वोच्च प्रबन्धन स्तर -**

सर्वोच्च प्रबन्धन स्तर किसी संस्था का वह उच्च स्तर होता है, जो संस्था के सम्पूर्ण क्रिया कलापों के लिए उत्तरदायित्व होता है तथा जिनका संस्था पर पूर्ण नियन्त्रण होता है, जैसे- संचालक मण्डल, संचालक, प्रबन्धक इत्यादि। सर्वोच्च प्रबन्धन संस्था के लिए नीतियों का निर्धारण, गुणवत्ता, नियन्त्रण, संसाधनों की व्यवस्था इत्यादि अनेक

HMDC-019

कार्यों के लिए उत्तरदायी होते हैं। प्रबन्धन का यह स्तर संस्था के सभी प्रकार के महत्त्वपूर्ण निर्णयों को लेने, अधीनस्थों के कार्यों का मूल्यांकन करने, दिशा-निर्देश देने तथा नियन्त्रण बनाये रखने के लिए जिम्मेदार होता है। किसी पुस्तकालय के सन्दर्भ में सर्वोच्च प्रबन्ध के अन्तर्गत कुलपति/प्राचार्य/पुस्तकालय परिषद् इत्यादि को रखा जाता है।

**2. मध्य प्रबन्धन स्तर -**

किसी संस्था के उच्चस्तरीय प्रबन्धन एवं निम्नस्तरीय प्रबन्धन के मध्य के प्रबन्धन को मध्यस्तरीय प्रबन्धन कहा जाता है। यह किसी भी संस्था का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण प्रबन्ध स्तर है। जिसके अन्तर्गत सर्वोच्च स्तरीय प्रबन्धन द्वारा निर्धारित नीतियों एवं योजना को क्रियान्वित किया जाता है तथा संस्था के विविध क्रियाकलापों के मध्य समन्वय स्थापित कर उन्हें सकारात्मक स्वरूप प्रदान किया जाता है। इस स्तर के अधिकारियों को प्रबन्धक, उप प्रबन्धक तथा सहायक प्रबन्धक कहा जाता है। ये मुख्य रूप से संस्था के दिन-प्रतिदिन के क्रियाकलापों का संचालन करते हैं एवं करवाते हैं। इस स्तर के अधिकारियों का चयन अत्यन्त सावधानी पूर्वक करना चाहिए क्योंकि इनकी कुशलता पर ही संस्था की सफलता निर्भर होती है। इस स्तर के अधिकारी हो एक तरफ जहाँ सर्वोच्च प्रबन्ध द्वारा निर्धारित नीतियों एवं योजना को क्रियान्वित करना होता है, वहीं दूसरी ओर क्रियान्वयन में सहयोग देने वाले सेविवर्गीयों की भावनाओं एवं प्रतिक्रियाओं का भी ध्यान करना पड़ता है। अतः इस स्तर के प्रबन्धकों की नियुक्ति शैक्षणिक योग्यता के साथ ही व्यावहारिक योग्यता के आधार पर ही किया जाना चाहिए। इस स्तर का प्रमुख कार्य कार्यविधियों का निर्धारण,नियोजन, समन्वय तथा नियन्त्रण करना होता है।

**3. पर्यवेक्षणीय प्रबन्धन स्तर -**

इसे निम्नस्तरीय प्रबन्ध भी कहा जाता है। दिन-प्रतिदिन के क्रिया-कलापों का सम्पादन करना, इसी स्तर के अधिकारी एवं कर्मचारियों का उत्तरदायित्व होता है। संस्था के विविध कार्यों तथा उनके परिणामों के लिए ये प्रत्यक्षतः उत्तरदायी माने जाते हैं। इस स्तर के प्रबन्धक या अधिकारियों का संस्था के कर्मचारियों के साथ सर्वाधिक निकटतम सम्बन्ध होता है। अतः ये ही संस्था की छोटी-छोटी आवश्यकताओं, समस्याओं, विचारों एवं सुझावों को संस्था के सर्वोच्च प्रबन्ध तक पहुँचाते हैं। किसी भी संस्था की सफलता के लिए वह अत्यन्त जरूरी है कि उस संस्था का सर्वोच्च स्तर, प्रबन्ध के इस निम्नस्तरीय प्रबन्धकों के माँगों, सुझावों एवं आवश्यकताओं पर गम्भीरतापूर्वक विचार करके की संस्था के लिए किसी प्रकार का नीति नियम निर्धारित करें। इस स्तर करे अधिकारियों में अधीक्षकों, पर्यवेक्षकों तथा फोरमैन इत्यादि को सम्मिलित किया जाता है।

प्रबन्धन के उपरोक्त सभी स्तरों के लिए अलग-अलग योग्यता, क्षमता एवं दक्षता की आवश्यकता होती है, जिनके द्वारा किसी संस्था का संचालन एवं प्रबन्धन सुव्यवस्थित

ढंग से किया जा सकता है। सामान्यतः प्रबन्धक से तीन प्रकार की दक्षता एवं कौशल की अपेक्षा की जाती है - 1. तकनीकी कौशल, 2. मानव संसाधन कौशल और 3. वैचारिक कौशल। इनके अभाव में कोई प्रबन्धक अपना कार्य कुशलता पूर्वक सम्पन्न नहीं कर सकता है।

प्रबन्धन के उपरोक्त स्तरों को निम्न तालिका द्वारा प्रर्दशित किया जा सकता है–

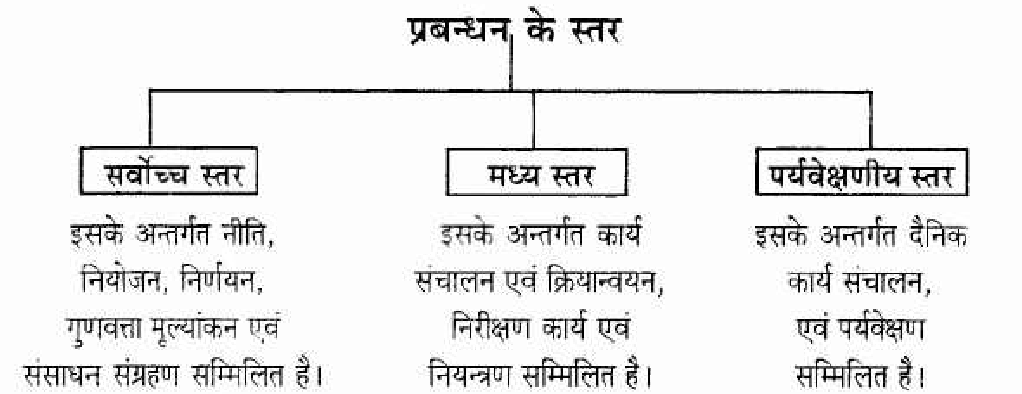


## 1.6 प्रबन्धन का क्षेत्र

विद्वानों के मतानुसार प्रबन्धन सर्वत्र व्याप्त है अर्थात् मानवीय क्रियाकलापों के प्रत्येक क्षेत्र के लिए उपयोगी होता है। वस्तुतः प्रबन्धन एक सर्वाभौमिक शब्द है, जिसकी व्यापकता का क्षेत्र एवं सीमा निर्धारित करना एक अत्यन्त जटिल कार्य है। वर्तमान समय में प्रबन्धन मनुष्य के सभी क्रियाकलापों जैसे घर, मन्दिर, सेना, शैक्षणिक संस्थाओं, व्यावसायिक संस्थाओं, गैर व्यावसायिक सस्थाओं, सरकारी संस्थाओं, गैर सरकारी संस्थाओं इत्यादि सभी स्थानों एवं कार्यों में व्याप्त है।

1. "प्रबन्ध एक सार्वभौमिक विज्ञान है, जो वाणिज्य, उद्योग, राजनीति, धर्म, युद्ध या जन कल्याण सभी पर समान रूप से लागू होता है।"

–हेनरी फेयोल

2. "वैज्ञानिक प्रबन्धन के आधारभूत सिद्धान्त हमारे साधारण से साधारण व्यक्तिगत कार्यों से लेकर हमारे विशाल निगमों के कार्यों तक लागू होते हैं।"

--एफ॰ डब्ल्यू॰ टेलर

अतः संक्षेप में प्रबन्धन की उपयोगिता एवं व्यापकता को ध्यान में रखते हुए आधुनिक प्रबन्धन को निम्नलिखित क्षेत्र के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है:-

### 1. विकास प्रबन्धन -

विकास प्रबन्धन के अन्तर्गत औद्योगिक प्रक्रियाओं, तकनीकी, प्रक्रियाओं, मशीन व्यवस्था तथा विभिन्न विज्ञान से सम्बन्धित अनुसन्धान, अन्वेषण, उत्पादन


HMDC-019

अभिकल्पन, वस्तु विकास अभिकल्पन, उपयोक्ताओं की माँग तथा उत्पादन सामग्रियों इत्यादि से सम्बन्धित क्रियाकलाप सम्मिलित किये जाते हैं।

**2. सेविवर्गीय प्रबन्धन -**

कुछ विद्वान प्रबन्धन को कर्मचारियों के प्रशासन के रूप में ही परिभाषित करते हैं। कर्मचारी प्रबन्धन के अन्तर्गत श्रमशक्ति का पूर्वानुमान, उनका चयन, नियुक्ति, कार्यभार, प्रशिक्षण, पदोन्नति, पदावनयन, सेवानिवृत्ति, स्थानान्तरण, छटनी, सेवा समाप्ति, कल्याण, सुरक्षा इत्यादि बातों का समावेश किया जात है।

**3. वित्तीय प्रबन्धन -**

वित्तीय प्रबन्धन के अन्तर्गत आर्थिक पूर्वानुमान, लेखाकंन, प्रबन्धनकीय लेखांकन, लागत नियन्त्रण, सांख्यिकी नियन्त्रण, बजटिंग तथा बजट नियन्त्रण, वित्तीय योजना, आय का प्रबन्धन, व्यय का प्रबन्धन, बीमा तथा अन्य वित्तीय समस्याओं को सम्मिलित किया जाता है।

**4. उत्पादन प्रबन्धन -**

व्यावसायिक प्रबन्धन का यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण अंग माना जाता है। वर्तमान में तो हमें इसे एक स्वतन्त्र विषय के रूप में पढ़ा एवं पढ़ाया जा रहा है। उत्पादन प्रबन्धन के अन्तर्गत उत्पादन, नियोजन, नियन्त्रण, कार्य-विश्लेषण, कार्य सूचीयन, कार्य निष्पादन, गुण नियन्त्रण, निरीक्षण, समय एवं विधि नियन्त्रण, अध्ययन तथा सामग्री का प्रबन्धन इत्यादि को सम्मिलित किया जाता है।

**5. विपणन प्रबन्धन -**

विपणन प्रबन्धन के अन्तर्गत वस्तु विपणन, विपणन अन्वेषण, अनुसंधान, मूल्य-निर्धारण, विपणन की जोखिमें तथा उनकी रोकथाम, विक्रय संवर्द्धन एवं विज्ञापन, आन्तरिक बाजार एवं निर्यात व्यापार की व्यवस्था इत्यादि को सम्मिलित किया जाता है। इसे वितरण प्रबन्धन के नाम से भी जाना जाता है। आधुनिक प्रबन्धन के अन्तर्गत यह एक लोकप्रिय विषय क्षेत्र के रूप में विकसित हो रहा है।

**6. कार्यालय प्रबन्धन -**

कार्यालय प्रबन्धन के अन्तर्गत कार्यालय की विविध व्यवस्थाओं तथा उसकी साज-सज्जा, श्रम बचत के साधन, संदेश वाहन के साधन, अभिलेख व्यवस्था तथा कार्यालयीन नियोजन व नियन्त्रण इत्यादि का प्रबन्धन किया जाता है।

**7. क्रय प्रबन्धन -**

क्रय प्रबन्धन को विपणन प्रबन्धन के एक अंग के रूप में देखा जा सकता है, जिसके अन्तर्गत उत्पाद के वितरक से टेण्डर माँगना, आदेश देना, क्रय प्रक्रिया का

निर्वहन, अनुबन्ध करना, सामग्री का संग्रहण, संरक्षण तथा सामग्री नियन्त्रण से सम्बन्धित क्रिया कलापों को इसमें सम्मिलित किया जाता है।

**8. परिवहन प्रबन्धन -**

वर्तमान समय में किसी भी उत्पाद के विपणन के लिए कई अन्य सहायक क्रियाविधि की भूमिका भी अत्यन्त महत्वपूर्ण मानी जाती है। जैसे उत्पाद की पैकेजिंग, उनका संग्रहण तथा उत्पाद की सुपुर्दगी हेतु उचित परिवहन व्यवस्था इत्यादि। यदि इन सहायक क्रियाविधियों पर ध्यान न दिया जाये तो विपणन प्रबन्धन की सम्पूर्ण व्यवस्था ध्वस्त हो जाती है।

**9. समय प्रबन्धन -**

वर्तमान समय में सभी प्रकार की सेवाओं एवं कार्यों (जिसमें पुस्तकालय कार्य एवं सेवा भी सम्मिलित है) में लगने वाले समय का प्रबन्धन के अन्तर्गत अपना एक अलग महत्वपूर्ण स्थान है। कहा जाता है कि "समय ही धन है" यह सदैव देखने में आया है कि समय सीमित होता है, जबकि कार्य अधिक होते हैं। अतः प्रबन्धन के समक्ष कार्य हेतु समय के समुचित बँटवारे एवं उसके अधिकतम उपयोग की समस्या सामने आती है। आधुनिक प्रबन्धकों को कम समय में ही निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति करनी पड़ती है। इसीलिए आधुनिक प्रबन्धन के अन्तर्गत समय प्रबन्धन को भी सम्मिलित किया जाता है।

**10. अनुरक्षण प्रबन्धन -**

अनुरक्षण प्रबन्धन का सम्बन्ध संस्था के भौतिक संस्थापन या अनुरक्षण या देखभाल से है। इसके अन्तर्गत संस्था के भवन, संयन्त्रों, मशीनों सामग्रियों इत्यादि का रखरखाव तथा उनकी उचित देखभाल करना सम्मिलित है। इसके अतिरिक्त संस्था के विकास हेतु नये-नये प्रयोग, अनुसंधानों इत्यादि को भी इसमें सम्मिलित किया जाता है।

वर्तमान में आधुनिक प्रबन्धन की अनेक नयी-नयी विधायें प्रचलित एवं लोकप्रिय होती जा रही हैं। जैसे-वातावरण प्रबन्धन, प्रतिरक्षा प्रबन्धन, चिकित्सा प्रबन्धन,शिक्षण एवं प्रशिक्षण प्रबन्धन इत्यादि। चूँकि प्रस्तुत इकाई में पुस्तकालय के संदर्भ में प्रबन्धन के विविध क्षेत्रों का अध्ययन किया जाना है। अतः यहाँ पर उपयोगी प्रबन्धन के रूप में वित्तीय प्रबन्धन, सेवीवर्गीय प्रबन्धन, कार्यालय प्रबन्धन, अनुरक्षण प्रबन्धन, समय प्रबन्धन, विकासात्मक प्रबन्धन का अध्ययन श्रेयस्कर होगा।

## 1.7 प्रबन्धन के सामान्य सिद्धान्त

जॉर्ज आर० टैरी के शब्दों में–"सिद्धान्त आधारभूत विवरण है अथवा सत्य है,



HMDC-019

जो विचार या प्रयास का मार्गदर्शन करते हैं।'' विज्ञान की प्रत्येक शाखा के कुछ न कुछ निश्चित सिद्धान्त अवश्य होते हैं। प्रबन्धन को विज्ञान की श्रेणी में रखा जाता है, इसलिये इसमें भी कुछ निश्चित सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है, जिनके आधार पर प्रबन्धनक अपने दिन-प्रतिदिन के कार्यों हेतु मार्गदर्शन प्राप्त करते हैं। सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि सिद्धान्तों को किसी भी प्रकार एवं प्रकृति की संस्था के प्रबन्धनन हेतु लागू किया जा सकता है, इसमें पुस्तकालय प्रबन्धनन भी सम्मिलित है।

प्रबन्धन के सिद्धान्त मुख्य रूप से विचारधाराओं का समूह होते हैं, जिनका विकास अनेक वर्षों के अध्ययन, शोध एवं अनुभवों के आधार पर किया गया है। समय-समय पर प्रबन्धन के महान विद्वानों ने प्रबन्धन के विभिन्न सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है। सर्वप्रथम हेनरी फेयोल ने प्रबन्धन के 14 सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है। जॉर्ज आर॰ टैरी ने प्रबन्धन के 27 सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया, जबकि कूण्टज एवं ओ' डोनैल ने लगभग 57 तथा एल॰एफ॰ उर्विक ने प्रबन्धन के केवल 6 सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है।

### 1.7.1 हेनरी फेयोल द्वारा प्रतिपादित प्रबन्धन के सिद्धान्त-

फ्रांस के प्रमुख उद्योगपति एवं प्रबन्धन विशेषज्ञ हेनरी फेयोल ने सर्वप्रथम अपनी पुस्तक में अपने व्यावहारिक अनुभवों के आधार पर प्रबन्धन के 14 आधारभूत सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया था, जो वर्तमान में भी उपयुक्त एवं व्यवहारिक प्रतीत होते हैं। इन सिद्धान्तों का सारांश अग्रलिखित है-

#### 1. कार्य विभाजन का सिद्धान्त -

किसी भी संस्था में विशिष्टीकरण और प्रमाणीकरण का लाभ प्राप्त करने के लिए समस्त कार्यों को उनकी विशेषता के आधार पर विभाजित करके, उनका निष्पादन किया जाना चाहिए। संस्था के प्रत्येक व्यक्ति को उसकी योग्यता, दक्षता तथा रूचि के अनुसार कार्य सौपा जाना चाहिए, क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति प्रत्येक कार्य को सम्पन्न नहीं कर सकता, अर्थात् एक विशिष्ट व्यक्ति को विशिष्ट कार्य और सामान्य व्यक्ति को सामान्य कार्य सौंपा जाना चाहिए। इस प्रकार कार्य विभाजन से कार्य का निष्पादन न्यूनतम लागत पर सम्भव होता है। संक्षेप में इस सिद्धान्त के अनुसार जो व्यक्ति जिस कार्य को लिए योग्य होता है, उसे वही कार्य सौंपा जाना चाहिए।

#### 2. अधिकार एवं उत्तरदायित्व का सिद्धान्त -

अधिकार एवं उत्तरदायित्व सहगामी होते हैं, अर्थात् ये एक ही सिक्के के दो पहलू के समान है। इस सिद्धान्त के अनुसार यदि किसी व्यक्ति को कोई महत्वपूर्ण कार्य का उत्तरदायित्व सौंपा जाए तो कार्य के अनुपात में उसे अधिकार भी अवश्य सौंपे जाएँ,

क्योंकि बिना अधिकार या सत्ता के उत्तरदायित्वों को निभाना, सम्भव नहीं है। अतः एक अधिकारी अपने उत्तरदायित्व को भली प्रकार से निभा सकें, इसके लिए उसे सत्ता का अधिकार प्राप्त होना, परम आवश्यक होता है। हेनरी फेयोल ने इस सम्बन्ध में अधिकारों के प्रत्यायोजन (Delegation of Authority ) पर बल दिया है।

### 3. अनुशासन का सिद्धान्त -

इस सिद्धान्त के अनुसार संस्था के सभी कर्मचारियों एवं अधिकारियों को स्वेच्छा से अपने से उच्च अधिकारियों की आज्ञा का पालन करना चाहिए। संस्था तथा संस्था के नियमों के प्रति आस्था रखनी चाहिए तथा सम्बन्धित पदाधिकारियों के प्रति आदर भाव बनाये रखना चाहिए। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि यह सिद्धान्त इस बात पर विशेष बल देता है कि संस्था की सफलता के लिए अनुशासन अत्यंत आवश्यक है।

वस्तुतः अनुशासन एक शक्ति है, जो किसी व्यक्ति या समूह को निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए नीतियों, विषयों एवं कार्यविधियों का पालन करने के लिए प्रेरित करती है।

### 4. आदेश की एकता का सिद्धान्त -

इस सिद्धान्त के अनुसार एक कर्मचारी को कार्य के सम्बन्ध में केवल एक ही अधिकारी से आदेश प्राप्त होना चाहिए। यदि एक कर्मचारी को अनेक अधिकारियों से आदेश एवं निर्देश प्राप्त होंगे तो कर्मचारी न केवल भ्रमित होगा, अपितु अपने उत्तरदायित्व का निर्वाह वह ठीक से नहीं कर सकेगा। साथ ही उनके मन में असन्तोष की भावना जाग्रत होगी। जिसका कार्य के करने पर निश्चित रूप से प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। अतः प्रबन्धन को सदैव आदेश की एकता का पालन करना चाहिए।

### 5. निर्देश की एकता का सिद्धान्त -

इस सिद्धान्त के अनुसार एक समान्य उद्देश्य वाले सभी कार्यों के लिए एक ही प्रबन्धनक या अधिकारी तथा एक ही योजना होनी चाहिए। जिससे एक ही लक्ष्य के प्रति समस्त गतिविधियों, क्रियाकलापों और संसाधनों को समन्वित किया जा सके। एक समान कार्य करने वाले कर्मचारियों को जब एक ही अधिकारी से निर्देश प्राप्त होंगे तो कार्य में एकरूपता बनी रहेगी तथा कर्मचारियों की कार्यकुशलता का तुलनात्मक अध्ययन भी सरल हो जायेगा।

### 6. सामूहिक हितों के लिए व्यक्तिगत हितों के त्याग का सिद्धान्त -

निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति एवं संस्था की प्रगति के लिए आवश्यक होने पर व्यक्तिगत हितों का त्याग कर देना चाहिए। प्रबन्धनकों को व्यक्तिगत एवं सामूहिक हितों में समन्वय रखना चाहिए किन्तु इसमें अवरोध होने पर उन्हें सामूहिक हितों की रक्षा के

लिए व्यक्तिगत हितो का समर्पण कर देना चाहिए। ऐसा करना संस्था के निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति एवं संस्था की प्रगति के लिए आवश्यक है।

### 7. पदाधिकारी सम्पर्क श्रृंखला का सिद्धान्त -

किसी संस्था के पदाधिकारी ऊपर से नीचे तक एक सीधी रेखा के रूप में संगठित होने चाहिए, अर्थात् आज्ञा देने तथा लेने का मार्ग बिल्कुल स्पष्ट होना चाहिए। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि विभिन्न अधिकारियों के मध्य सम्प्रेषण के उद्देश्य से सम्पर्करुपी एक शृंखला होनी चाहिए तथा किसी अधिकारी को इसका उल्लंघन तब तक नहीं करना चाहिए, जब तक कि अत्यन्त आवश्यक परिस्थिति उत्पन्न न हो जाये। फिर भी यदि ऐसा करना जरूरी हो जाये तो इसकी सूचना पहले से ही उच्च्व अधिकारियों को दे दिया जाना चाहिए।

### 8. कर्मचारियों के कार्यकाल में स्थायित्व का सिद्धान्त -

इस सिद्धान्त के अनुसार कर्मचारियों का कार्यकाल स्थायी होना चाहिए। कोई कर्मचारी जब किसी नये काम पर लगाया जाता है तो उसे उस काम को सीखने एवं समझने में कुछ समय लगता है, यदि उसका बार-बार स्थानान्तरण किया जाय तो वह कोई काम न ठीक से सीख सकता है और न किसी काम में उसे कुशलता ही प्राप्त हो सकती है। अतः यह सिद्धान्त नये कर्मचारियों को कार्य सीखने एवं समझने का पूरा अवसर एवं पर्याप्त समय देने की वकालत करता है। इसके द्वारा संस्था के अनावश्यक कार्य को भी नियन्त्रित किया जा सकता है।

### 9. कर्मचारियों के पारिश्रमिक का सिद्धान्त -

इस सिद्धान्त के अनुसार संस्था विशेष में कार्यरत कर्मचारियों को उनके द्वारा प्रदत्त की गई सेवाओं का उचित पारिश्रमिक प्राप्त होना चाहिए। इस पारिश्रमिक के निर्धारण में कर्मचारियों एंव नियोजकों दोनों की संतुष्टि होनी चाहिए। कर्मचारी संस्था के कार्यों को पूर्ण लगन, रूचि और पूर्ण क्षमता से तभी करते हैं, जब उनकी सेवाओं का पर्याप्त प्रतिफल प्राप्त होता है। कर्मचारियों को देय पारिश्रमिक के भुगतान की पद्धति संतोषजनक और न्यायसंगत होनी चाहिए।

### 10. पहलपन का सिद्धान्त -

इस सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक प्रबन्धक को अपने अधीनस्थ कर्मचारियों को उनके कार्यों की योजनाएँ बनाने तथा उन्हें क्रियान्वित करने की कुछ स्वतन्त्रता देनी चाहिए। इससे उनकी सृजनात्मक क्षमता का विकास होगा तथा उन्हें मानसिक संतुष्टि प्राप्त होगी। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि यदि कर्मचारी वर्ग किसी कार्य को अपनी योग्यता एवं अनुभव के आधार पर सम्पन्न करने में पहल करता है तो उसको उस कार्य को करने के लिए आवश्यक स्वतन्त्रता एवं प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

**11. केन्द्रीयकरण एवं विकेन्द्रीकरण का सिद्धान्त -**

इस सिद्धान्त के अनुसार जब संस्था विशेष में निर्णय लेने के सभी अधिकार एक उच्च अधिकारी के हाथों में केन्द्रित रहते हैं, तब संस्था में केन्द्रीयकरण की स्थिति होती है। इसके विपरीत जब निर्णय लेने के लिए अधिकार अधीनस्थों को सौंप दिये जाते हैं तो वह विकेन्द्रीकरण की स्थिति कहलाता है। हेनरी फेयोल के अनुसार - संस्था में न तो अधिकारों का अधिक केन्द्रीयकरण होना चाहिए और न ही अधिक विकेन्द्रीकरण होना चाहिए। अतः संस्था के कार्यों एवं परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए दोनों में उचित संतुलन बनायें रखना चाहिए।

**12. समता का सिद्धान्त -**

इस सिद्धान्त के अनुसार प्रबन्धकों को अपने अधीनस्थों के साथ व्यवहार करते समय न्याय एवं उदारता का प्रदर्शन करना चाहिए, जिससे कि उनमें सद्‌भावना तथा सहयोग निरन्तर बना रहे। हेनरी.फेयोल के अनुसार इससे मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध विकसित होते हैं तथा कर्मचारियों का मनोबल ऊँचा उठता है, जिसके परिणाम स्वरूप वे स्वेच्छा से अधिकाधिक कार्य करने के लिए प्रेरित होते हैं।

**13. व्यवस्था का सिद्धान्त -**

इस सिद्धान्त के अनुसार संस्था में प्रत्येक व्यक्ति, वस्तु और उपकरणों इत्यादि की उपयुक्त एवं तर्कसंगत व्यवस्था करनी चाहिए। इसके अन्तर्गत प्रत्येक कर्मचारी को सही स्थान पर लगाया जाना चाहिए तथा उसका एक स्थान निर्धारित कर देना चाहिए। साथ ही संस्था के सभी संसाधनों को उचित व्यवस्था में रखा जाना चाहिए। यदि ऐसा किया जाय तो मानव, मशीन तथा सामग्रियों का सही अनुमान लगाकर न्यूनतम प्रयासों से अधिक परिणाम प्राप्त किये जा.सकते हैं।

**14. सहयोग भावना का सिद्धान्त -**

इस सिद्धान्त के अनुसार प्रबन्धन की सफलता के लिए प्रबंधकों को अपने कर्मचारियों में सहयोग तथा एकता की भावना का विकास करना चाहिए। इसके लिए प्रबंधकों को कर्मचारियों के साथ प्रत्यक्ष सम्पर्क बनाये रखना चाहिए तथा उनकी शंकाओं, समस्याओं और कठिनाईयों का अतिशीघ्र निवारण करना चाहिए। वस्तुतः यह सिद्धान्त ''संगठन ही शक्ति है'' की मान्यता का समर्थन करता है, तथा उच्च अधिकारियों को ''मैं जो कहता हूँ वह करो'' के स्थान पर ''मैं जो कहता हूँ'' वह करो की नीति का अनुकरण करने का सुझाव देती है।

## 1.7.2 जॉर्ज आर॰ टैरी द्वारा प्रतिपादित प्रबन्धन के सिद्धान्त -

जॉर्ज आर॰ टैरी के अनुसार - "सिद्धान्त आधारभूत विवरण है अथवा सत्य है जो विचार या प्रयास का मार्गदर्शन करता है।" इन्होंने प्रबन्धन के कुल 27 सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया, इनमें से कुछ प्रमुख सिद्धान्तों का वर्णन इस प्रकार से है-

### 1. प्रयोग एवं अनुसंधान का सिद्धान्त -

इस सिद्धान्त के अनुसार संस्था विशेष के कार्यों का सही-सही पूर्वानुमान लगाने के लिए विभिन्न प्रकार के प्रयोग किये जाने चाहिए। यह प्रयोग कई तरह के हो सकते हैं। जैसे-समय अध्ययन, थकान अध्ययन इत्यादि। ऐसे प्रयोगों से प्रबन्धन की नवीन युक्तियों एवं तकनीकियों का उन्नयन एवं विकास होता है।

### 2. सेवा का सिद्धान्त -

टैरी महोदय ने इस सिद्धान्त को प्रबन्धन के सर्वाधिक व्यापक एवं प्रमुख सिद्धान्त के रूप में प्रस्तुत किया है। उनके अनुसार सभी प्रकार की संस्थाओं, संगठनों या उपक्रमों की स्थापना समाज को श्रेष्ठ सेवाएं एवं सुविधायें प्रदान करने के लिए की जाती है। अतः संस्था को अपने विविध कार्यों एवं सेवाओं में दक्षता एवं मितव्ययिता प्राप्त करने हेतु इस सिद्धान्त का पालन करना चाहिए। इसके अन्तर्गत अनुशासन, सद्भावना, विश्वास एवं प्रेरणा के द्वारा कर्मचारियों एवं अधिकारियों के मध्य सामन्जस्य बनाये रखने पर बल दिया जाता है, ताकि संस्था के निर्धारित लक्ष्यों को नियत समय पर श्रेष्ठ रूप में प्राप्त किया जा सके।

### 3. नियन्त्रण का सिद्धान्त -

इस सिद्धान्त के अनुसार कोई भी प्रबन्धक या अधिकारी असीमित लोगों का नियन्त्रण नहीं कर सकता। अतः प्रत्येक अधिकारी के द्वारा नियन्त्रण की सीमा निश्चित की जानी चाहिए तथा उसे कुछ सीमित अधीनस्थों को नियन्त्रित करने के अधिकार तक सीमित रखा जाना चाहिए। इससे कार्यों एवं सेवाओं के निस्तारण में सुगमता रहेगी, साथ ही एक निश्चित कार्य हेतु उनकी जवाबदेही भी स्पष्ट एवं निर्धारित की जा सकेगी।

### 4. उद्देश्यों का सिद्धान्त -

इस सिद्धान्त के अनुसार किसी संस्था विशेष में कार्य करने वाले प्रत्येक व्यक्ति को संस्था के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों से भली-भाँति परिचित होना चाहिए। साथ ही संस्था के सभी क्रियाकलाप उसी निर्धारित लक्ष्य एवं उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए किए जाने चाहिए। इस हेतु सर्वप्रथम यह अत्यन्त आवश्यक है कि संस्था के स्थापना काल में ही


HMDC-019

उसके लक्ष्य एवं उद्देश्य निर्धारित किए जाने चाहिए और उसका ज्ञान संस्था में कार्यरत सभी व्यक्ति हो होना चाहिए। इससे संस्था के सभी कर्मचारियों एवं अधिकारियों के द्वारा किए जाने वाले कार्य की दिशा एवं नीति निर्धारित करना सरल एवं सुविधा जनक हो जाता है।

## 5. नेतृत्व का सिद्धान्त -

इस सिद्धान्त के अनुसार किसी संस्था विशेष की विभिन्न क्रियाओं, जैसे- संगठन, नियोजन, संचालन, नियुक्ति, नियन्त्रण इत्यादि में समन्वय स्थापित करने हेतु संस्था में कुशल नेतृत्व के गुणों से सम्पन्न व्यक्तियों की आवश्यकता होती है। नेतृत्व एक मानवीय गुण हैं, जो कुछ विशिष्ट व्यक्तियों को जन्मजात ही प्राप्त होती है परन्तु यहाँ यह कहना अनुचित होगा कि नेतृत्व जन्मजात गुण है। अर्थात् कुछ अवसरों पर देखा गया है कि मनुष्य कार्य व्यवहार-प्रशिक्षण, वातावरण एवं अनुभवों के आधार पर कुशल नेतृत्व की क्षमता प्राप्त कर लेता है।

इस सिद्धान्त का मन्तव्य है कि प्रत्येक संस्था की सफलता के लिए कुशल नेतृत्व की क्षमता से युक्त व्यक्तियों की आवश्यकता होती है, जिनके बिना संस्था की सफलता अनिश्चित होती है। अतः संक्षेप में कहा जा सकता है कि "नेतृत्व ऐसे व्यक्तियों से सम्बन्धित है, जिसमें एक व्यक्ति अथवा नेता दूसरों को सम्बन्धित कार्यों को स्वेच्छा के साथ-साथ कार्य करने को प्रेरित करता है, ताकि नेता द्वारा इच्छित उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सके।"

## 6. अभिप्रेरणा का सिद्धान्त -

यह सिद्धान्त 'कार्य करने की क्षमता' और 'कार्य करने की इच्छा' इन दो बातों पर विशेष जोर देता है। इस सिद्धान्त के अनुसार- हो सकता है कि कोई व्यक्ति किसी कार्य को करने के लिए दैहिक, मानसिक और तकनीकी क्षमतायें रखता हो, किन्तु नियोक्ता के लिए उस व्यक्ति का तब तक कोई महत्व नहीं है, जब तक कि वह अपनी क्षमताओं का संस्था की उन्नति के लिए प्रयोग करने को तैयार न हो।" अतः इस सिद्धान्त के अनुसार उक्त व्यक्ति को संस्था के कार्य को उत्साह एवं पूर्ण लगन के साथ करने को तत्पर करने हेतु प्रेरित किया जाना चाहिए। संक्षेप में- 'सहयोग प्राप्त करने की कला को ही अभिप्रेरणा कहते हैं।"

## 7. भारार्पण का सिद्धान्त -

भारार्पण एक साधन है, जिसके माध्यम से एक उच्च अधिकारी दूसरे अधीनस्थ



HMDC-019

अधिकारियों के साथ अपने प्रबन्धकीय दायित्व में हिस्सा बाँटता है। अधीनस्थ अधिकारी निर्धारित सीमाओं के अन्तर्गत ही कार्य करते हैं। अतः संक्षेप में एक उच्च अधिकारी द्वारा अपने अधीनस्थ अधिकारी को किसी कार्य विशेष को करने हेतु अधिकृत करने की क्रिया हो ही भारार्पण कहते हैं। यह प्रबन्धन का एक प्रमुख सिद्धान्त है,जिसका अनुसरण करके संस्था विशेष द्वारा अपने समस्त कार्यों को कई ईकाईयों में बाँटा जाता है तथा प्रत्येक इकाई के अधिकारी को कार्य करने हेतु अधिकृत किया जाता है। जिससे कार्य उच्च कोटि एवं अतिशीघ्र सम्पन्न होता है, जिससे संस्था के समय, श्रम एवं धन की बचत होती है।

### 1.7.3 एल॰ एफ॰ उर्विक द्वारा प्रतिपादित प्रबन्ध के सिद्धान्त -

एल॰ एफ॰ उर्विक ने प्रबन्धन के निम्नलिखित सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है, जिसका संक्षेप में नामोल्लेख निम्नवत् है-

1. जाँच का सिद्धान्त
2. उद्देश्य का सिद्धान्त
3. संगठन का सिद्धान्त
4. प्रयोग का सिद्धान्त
5. नियन्त्रण का सिद्धान्त
6. निर्देशन का सिद्धान्त

## 1.8 प्रबन्धन के वैज्ञानिक सिद्धान्त

### वैज्ञानिक प्रबन्धन का अर्थ–

वैज्ञानिक प्रबन्धन दो शब्दों के संयोग से मिलकर बना है—विज्ञान एवं प्रबन्धन। इसमें विज्ञान को पुनः दो खण्डों में विभाजित किया जा सकता है- वि+ज्ञान। जिसमें 'वि' का अर्थ अधिक या योग से है और 'ज्ञान' का अर्थ सभी प्रकार की सामान्य जानकारी से है। इस प्रकार संयुक्त रूप से विज्ञान शब्द का अर्थ है- सामान्य ज्ञान की अभिवृद्धि। वैज्ञानिक प्रबन्धन का दूसरा शब्द है प्रबन्धन, जिसका अर्थ किसी कार्य को सुव्यवस्थित ढंग से करने एवं कराने की क्रिया से लगाया जाता है। इस प्रकार संक्षेप में कहा जा सकता है कि किसी भी कार्य को अभिवृद्धि ज्ञान की सहायता से योजनाबद्ध रूप से किसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सुव्यवस्थित रूप से चलाने को वैज्ञानिक प्रबन्धन कहते हैं।

एफ० डब्ल्यू० टेलर को वैज्ञानिक प्रबन्धन का जनक माना जाता है। आपने सन् 1911 ई0 में 'Principles of Industrial Management' नामक ग्रंथ का प्रकाशन किया। जिसमें सर्वप्रथम वैज्ञानिक प्रबन्धन शब्द का प्रयोग किया गया था। टेलर के अनुसार प्रबन्ध कार्य, यदि वैज्ञानिक दृष्टिकोण से किया जाए तो उसके परिणाम और भी उत्तम होंगे। इन्होंने अपनी पूरी जिन्दगी मे उत्पादन में कार्य कुशलता प्राप्त करने, लागत कम कर लाभ बढ़ाने के प्रयत्न किये, साथ ही उच्च उत्पादन के माध्यम से कर्मचारियों को ऊँचा पारिश्रमिक दिलाने के लिए संघर्ष किया।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि- वैज्ञानिक प्रबन्धन समस्याओं के विश्लेषण का एक तार्किक ढांचा प्रदान करता है। इसमें मुख्य रूप से समस्या का विवरण, डेटा एकत्रीकरण, डेटा विश्लेषण, विकल्पों का विकास एवं बेहतर विकल्प का चयन सम्मिलित होते हैं। टेलर का विश्वास था कि यदि वैज्ञानिक विधियों का अनुसरण किया जाए तो विभिन्न कार्यों का सम्पादन सर्वाधिक विद्वता एवं प्रभावशाली ढंग से किया जा सकता है।

**परिभाषा :-**

**1. एफ० डब्ल्यू० टेलर के अनुसार -**

"वैज्ञानिक प्रबन्धन आपके यह जानने की कला है कि आप लोगों से क्या कराना चाहते हैं तथा यह देखना चाहते हैं कि वे उसको सुन्दर से सुन्दर तथा सम्पूर्ण ढंग से करें।"

**2. एच० एस० पर्सन के अनुसार -**

"वैज्ञानिक प्रबन्धन सामूहिक प्रयत्नों की पद्धति एवं संगठन प्रणाली है, जो कि वैज्ञानिक अन्वेषण एवं विश्लेषण से निकाले गये सिद्धान्तों अथवा नियमों पर आधारित है.....।" दूसरे शब्दों में "निरीक्षण, विश्लेषण, प्रयोग द्वारा कारण परम्परा पर आधारित किसी भी पद्धति का उत्पादन क्रियाओं में उपयोग करने को वैज्ञानिक प्रबन्धन कहते हैं।"

**3. जोन्स के अनुसार -**

"वैज्ञानिक प्रबन्धन प्रशासन सम्बन्धी नियमों का समूह है, ताकि संगठन में नवीन अनुशासन का समन्वय, नियन्त्रण तथा उत्पादन पद्धति से कराया जा सके।"

**4. डीमर के अनुसार -**

"वैज्ञानिक प्रबन्धन से आशय प्रबन्धन के क्षेत्र में दशाओं, पद्धतियों, प्रविधियों से सम्बन्धित ज्ञान प्राप्त करना एवं उनको समायोजित करके उपयोग करने के लिए एक संगठित सिद्धान्तों के रूप में विकसित करना है।"


HMDC-019

उपरोक्त परिभाषा के आधार पर यह कहा जा सकता है कि वैज्ञानिक प्रबन्धन में-अनुशासन, प्रयोग तथा विवेक द्वारा उत्पादन अथवा सेवा के पृथक-पृथक अंगों का समीकरण करके उनका इस प्रकार उपयोग करना है, जिससे उद्योगपति, श्रमिक शक्ति, गतिशीलता इत्यादि का समन्वय हो सके तथा सभी वर्गों का आवश्यक लाभ हो सके।

## 1.8.1 वैज्ञानिक प्रबन्धन के मूल सिद्धान्त -

विज्ञान की अन्य विधाओं की भांति वैज्ञानिक प्रबन्धन में भी समयानुसार परिवर्तन होते रहते हैं। इसमें परम्परागत प्रणाली का कोई स्थान नहीं है। इसका एक मात्र उद्देश्य श्रम, व्यय इत्यादि को घटाना तथा तकनीकियों का अधिकतम उपयोग करते हुए कार्यक्षमता में वृद्धि करना है। वस्तुतः यह प्रबन्धन क्षेत्र की समस्याओं का वैज्ञानिक दृष्टिकोण के आधार पर समाधान प्रस्तुत करता है। वैज्ञानिक प्रबन्धन के कुछ प्रमुख सिद्धान्तों को यहाँ संक्षेप में निम्नानुसार प्रस्तुत किया जा रहा है—

### 1. कार्य सम्बन्धी अनुमान का सिद्धान्त -

इस सिद्धान्त के अनुसार एक संस्था विशेष में कार्यरत किसी कर्मचारी को कितना कार्य करना चाहिए, इसका ठीक-ठीक अनुमान लगाया जाना चाहिए। इस हेतु किए जाने वाले कार्य का उचित वैज्ञानिक रीति द्वारा कार्य-विश्लेषण किया जाना चाहिए तथा यह निर्धारित किया जाय कि एक व्यक्ति विशेष को एक निश्चित समय में कितना कार्य करना चाहिए। कार्य विश्लेषण द्वारा यह देखना चाहिए कि सम्बन्धित कर्मचारी निर्धारित मानक से कम कार्य कर रहा है अथवा अधिक। यह कार्य अत्यन्त सावधानी पूर्वक एवं वैज्ञानिक प्रयोग द्वारा किया जाना चाहिए।

### 2. प्रयोग का सिद्धान्त -

प्रयोग वैज्ञानिक प्रबन्धन का प्रमुख आधार होता है जिसके द्वारा संस्था के कर्मचारियों के विविध क्रिया-कलापों की जाँच एवं विश्लेषण किया जाता है। प्रयोग द्वारा ही किसी कार्य को सम्पन्न करने के विभिन्न विकल्पों पर विचार किया जा सकता है तथा उसमें से श्रेष्ठ विकल्प का चयन संस्था के कार्य सम्पादन हेतु किया जा सकता है। प्रयोग द्वारा ही पहले से किए जा रहे कार्यों में गुणात्मक सुधार करके कार्यक्षमता में वृद्धि किया जा सकता है। इस सिद्धान्त के सन्दर्भ में श्री टेलर ने स्पष्ट किया कि आधारभूत रूप से तीन तरह के वैज्ञानिक प्रयोग किये जाते हैं। जैसे -

1. समय अध्ययन    2. गति अध्ययन    3. थकान अध्ययन

**3. योजना का सिद्धान्त -**

इस सिद्धान्त के अनुसार संस्था में किए जाने वाले प्रत्येक कार्य के लिए एक विशेष योजना पहले से ही बना लेनी चाहिए। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि इस सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक संस्था में कार्यों की योजना तैयार करने हेतु एक अलग योजना विभाग होना चाहिए, जो अगले दिन क्या किया जाना है? उसकी योजना पहले से ही तैयार कर ले। यदि संस्था में कार्य करने वाले प्रत्येक कर्मचारियों के लिए एक आदर्श योजना बना ली जाये कि उसे क्या करना है, कैसे करना है, कब करना है तथा किन व्यक्तियों एवं उपकरणों के सहयोह से करना है, इत्यादि, का पूर्वनिर्धारण कर लें तो कार्य विशेष पर लगने वाले समय, श्रम एवं धन की बचत करके संस्था को सफलता की ओर अग्रसर किया जा सकता है।

**4. कर्मचारी चयन एवं प्रशिक्षण का सिद्धान्त -**

वैज्ञानिक प्रबन्धन के अन्तर्गत कार्यों को वैज्ञानिक एवं तकनीकी ढंग से करने हेतु कर्मचारी चयन एवं प्रशिक्षण पर विशेष बल दिया जाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति प्रत्येक कार्य को नहीं कर सकता है। अतः कर्मचारियों का चयन उचित वैज्ञानिक तर्कों के आधार पर कार्य के अनुरूप योग्यता रखने वाले व्यक्तियों का चयन किया जाना चाहिए तथा उनके ज्ञान एवं अनुभवों को अद्यतन बनाये रखने हेतु समय-समय पर उन्हें प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिए, इससे कर्मचारियों की कार्यक्षमता में वृद्धि होती हैं और संस्था का विकास तीव्रगति से होता है।

**5. कार्य का युक्तिपूर्ण वितरण का सिद्धान्त -**

इस सिद्धान्त के अनुसार कर्मचारियों को कार्यभार सौंपते समय उनकी योग्यता तथा कार्यक्षमता का ध्यान रखा जाना चाहिए। इस सम्बन्ध में "सही व्यक्ति को सही कार्य" के सिद्धान्त का अनुसरण करना चाहिए। टेलर के अनुसार संस्था की कार्यक्षमता बढ़ाने तथा योग्य व्यक्तियों के लिए उन्नति का रास्ता खोलने के लिए इस पद्धति को अपनाया जाना परम आवश्यक है।

**6. प्रेरणात्मक पारिश्रमिक पद्धति का सिद्धान्त -**

प्रेरणात्मक पारिश्रमिक से तात्पर्य पारिश्रमिक (वेतन) देने की एक ऐसी पद्धति से है, जिसके अपनाने से कर्मचारी अधिकाधिक कार्य करने के लिए स्वयमेव प्रेरित हो उठे। टेलर ने कार्यक्षमता में वृद्धि करने हेतु कर्मचारियों को पारितोषिक का प्रलोभन देने के तत्व को वैज्ञानिक प्रबन्धन का एक महत्वपूर्ण घटक बतलाया है। अतः संक्षेप में हम कह सकते



HMDC-019

हैं कि किसी संस्था विशेष में कर्मचारियों के लिए पारिश्रमिक पद्धति इस प्रकार की होनी चाहिए जिसमे कुशल एवं कर्मठ कर्मचारियों के लिए धन अथवा अन्य रूप में प्रोत्साहन की व्यवस्था हो, जिससे वे भविष्य में अपने कार्यों में और सुधार करने हेतु प्रोत्साहित हो सकेंगे।

**7. प्रमाणीकरण का सिद्धान्त -**

इस सिद्धान्त के अनुसार संस्था विशेष में किए जाने वाले प्रत्येक कार्य, उनकी दशाओं, कार्य विधियों तथा लगने वाले समय का पूर्ण रूप से प्रमाणीकरण होना चाहिए अर्थात् प्रत्येक के लिए एक मानक निश्चित किया जाना चाहिए। इस सिद्धान्त के अनुसार कोई भी कार्य कर्मचारियों के भरोसे नहीं छोड़ा जाना चाहिए, बल्कि उस पर पहले से ही एक उचित योजनानुसार मानक निर्धारित कर दिया जाना चाहिए, जिससे कम से कम परिश्रम से अधिक से अधिक कार्य किये जा सकें। वैज्ञानिक प्रबन्धन के इस सिद्धान्त के अन्तर्गत प्रमाणित समय में प्रमाणित विधियों द्वारा प्रमाणित सामग्री से प्रमाणित कार्य या उत्पादन किया जाता है।

**8. अपवाद का सिद्धान्त -**

इस सिद्धान्त के अनुसार सामान्य परिस्थितियों में संस्था के सभी कार्य अधीनस्थों द्वारा ही किए जाने चाहिए तथा केवल अपवाद की परिस्थितियों में ही प्रबन्धन/प्रबन्धक को दैनिक कार्यों में हस्तक्षेप करना चाहिए।

**9. स्वच्छ वातावरण का सिद्धान्त -**

इस सिद्धान्त के अनुसार संस्था के वातावरण का कर्मचारियों के स्वास्थ्य एवं कार्यक्षमता पर प्रभाव पड़ता है। अतः संस्था विशेष का वातावरण स्वच्छ होना चाहिए। तात्पर्य यह है कि संस्था में स्वच्छ वायु, पर्याप्त प्रकाश, पर्याप्त स्थान, उचित तापमान, जलपान गृह, आराम गृह इत्यादि की भी व्यवस्था होनी चाहिए।

**10. समन्वय का सिद्धान्त -**

इस सिद्धान्त के अनुसार संस्था विशेष में प्रबन्धक एवं कर्मचारियों के मध्य प्रत्येक क्रियाकलाप एवं कार्य उद्देश्य के सन्दर्भ में उचित समन्वय एवं सामन्जस्य होना चाहिए अर्थात् किसी पक्ष, कार्य या दशा को लेकर आपसी टकराव की स्थिति नहीं होनी चाहिए। उचित समन्वय स्थापित होने पर ही संस्था एवं संस्था से जुड़े व्यक्तियों का विकास सम्भव है।

**11. प्रभावपूर्ण संगठन का सिद्धान्त -**

इस सिद्धान्त के अनुसार यदि संस्था का कार्य क्षेत्र बृहद स्तर पर फैला हो तो ऐसी परिस्थिति में प्रबन्धक या उच्च अधिकारियों तथा संस्था के कर्मचारियों के मध्य प्रत्यक्ष सम्बन्ध स्थापित नहीं हो पाता है। अतः कर्मचारियों एवं अधिकारियों पर आवश्यक नियन्त्रण बनाये रखने हेतु संस्था में प्रभावशाली संगठन पद्धति लागू की जानी चाहिए। जिससे संस्था का प्रत्येक समूह या संगठन उच्च अधिकारियों के नियन्त्रण में रहे और संस्था के सभी गतिविधियों में आवश्यक सामन्जस्य बना रहे। टेलर के अनुसार सामाजिक क्षेत्र की संस्थाओं द्वारा क्रियात्मक संगठन को अपनाया जाना चाहिए।

**12. मानसिक क्रान्ति का सिद्धान्त -**

इस सिद्धान्त के अनुसार संस्था के प्रबन्धक एवं कर्मचारियों दोनों को ही परम्परागत विधियों के स्थान पर नवीन वैज्ञानिक विधियों की उपयोगिता को समझना चाहिए तथा दोनों को ही यह विश्वास होना चाहिए कि यह नवीन वैज्ञानिक विधियाँ एक दूसरे के हितों के प्रतिकूल नहीं है।

इस सिद्धान्त के अनुसार संस्था के प्रबन्धक एवं कर्मचारी दोनों को ही कार्य के प्रति, अपने स्वयं के प्रति तथा संस्था के प्रति अपने दृष्टिकोण में परिवर्तन लाना चाहिए। तभी वह संस्था एवं संस्था के माध्यम से समाज का विकास कर सकेंगे तथा नवीन तकनीकों का लाभ उठा सकेंगे।

## 1.9 प्रबन्धकीय विचारधारा : उद्गम एवं विकास

विश्वविद्यालय प्रबन्धशास्त्री सी०एन० गेंगर के अनुसार — "प्रबन्धन के विकास की कहानी आवश्यक तौर पर मानव के विकास की कहानी है।" अतः यदि यह कहा जाय कि प्रबन्धन का इतिहास उतना ही प्राचीन है जितना कि मानव सभ्यता का इतिहास तो कोई अतिश्योक्ति न होगी। वस्तुतः प्रबन्धन वह है जो पूर्वनिर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए व्यक्तियों के सामूहिक प्रयत्नों को संचालित करने का कार्य करता है।

प्रारम्भ में प्रबन्धकीय विचारधारा का उद्गम व्यक्तिगत नेतृत्व के रूप में हुआ था। प्राचीन मेसोपोटामियाँ में पादरी खुद को ईश्वर का प्रतिनिधि मानते थे और इस नाते वे राज्यों का संचालन एवं नियन्त्रण का कार्य करते थे। इसके लिए उन्होंने व्यापारियों, श्रमिकों, शिल्पकारों, सिपाहियों इत्यादि को नियोजित एवं संगठित किया था। बाइबिल जैसे अतिप्राचीन ग्रंथ में भी राज्यों को संचालित एवं नियंत्रित करने हेतु कुशल व्यक्तियों

के चयन, सत्ता के भारार्पण, इत्यादि प्रबन्धकीय कार्य किये जाने का वर्णन मिलता है। चीन की प्राचीन सभ्यता, मोहनजोदड़ों एवं हड़प्पा की सभ्यता, मिस्र की सभ्यता, ग्रीस की सभ्यता, बेबीलोन की सभ्यता, भारत की प्राचीन सभ्यताओं के अध्ययन करने पर उसमें भी प्रशासकीय कुशलता के उदाहरण मिलते हैं। इसके अतिरिक्त कौटिल्य द्वारा रचित 'अर्थशास्त्र' नामक ग्रंथ में भी राजनैतिक अर्थव्यवस्था के विभिन्न पक्षों पर प्रकाश डालने के साथ-साथ सार्वजनिक प्रबन्धन की विभिन्न समस्याओं एवं उनके प्रस्तुत समाधानों पर प्रकाश डाला गया है।

अतः प्रस्तुत तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि प्रबन्धन की विचारधारा विश्व के अनेक प्राचीनतम देशों में मानवीय सभ्यता के प्रारम्भिक काल से ही विकसित होती चली आ रही है।

## 1.10 प्रबन्धकीय विचारधारा के विभिन्न स्कूल

मानव सभ्यता के विकास में जैसे-जैसे प्रबन्धन की आवश्यकता एवं महत्ता बढ़ती गयी वैसे-वैसे ही प्रबन्धन की विभिन्न धारणाओं अथवा विचारधाराओं का जन्म एवं विकास होता गया। प्रबन्धकीय विचारधाराओं के विकासक्रम को अध्ययन की दृष्टि से विभिन्न स्कूलों में वर्गीकृत किया गया है, जिनका वर्णन क्रमवार निम्नांकित है-

### 1. शास्त्रीय विचारधारा -

प्रबन्ध की इस विचारधारा का जन्म ''एडम स्मिथ'' के श्रम विभाजन के सिद्धान्त के आधार पर हुआ है। यह एक परम्परावादी विचारधारा मानी जाती है। जिसके अन्तर्गत किसी प्रक्रिया को विश्लेषित कर विचारात्मक संरचना की स्थापना की जाती है तथा प्रक्रिया के अधारभूत सिद्धान्तों का निर्धारण किया जाता है। इस विचारधारा के अनुसार प्रबन्धन एक व्यापक एवं सार्वभौमिक प्रक्रिया है, जिसका प्रयोग व्यापार, उद्योग, सरकारी विभागों इत्यादि सर्वत्र स्थानों पर किया जाता है। वस्तुतः प्रबन्धन का यह दृष्टिकोण प्रबन्धन को किसी समूह विशेष से कोई कार्य करवाने की प्रक्रिया माना जाता है। यह विचारधारा प्रबन्धन के केन्द्रीयकरण एवं कठोर अनुशासन पर विशेष बल देता है।

इस विचारधारा के आधुनिक समर्थक प्रबन्धन के कार्यों का विश्लेषण करके आधारभूत सिद्धान्तों की स्थापना का प्रयास करते हैं, जो कि प्रबन्धन के जटिल व्यवहार क्षेत्र में सही साबित होते हैं।

### 2. प्रबन्धन प्रक्रिया विचारधारा ( Management Process School ) -

प्रबन्धन की इस विचारधारा के जनक हेनरी फेयोल माने जाते हैं। इस विचारधारा के अन्तर्गत प्रबन्धन को एक प्रक्रिया माना जाता है। जिसमें प्रबन्धन का कार्य

प्रथाओं एवं परम्पराओं के अनुसार सम्पन्न किया जाता है। प्रबन्धन के कार्यपथ का निर्धारण तथा निर्देशन उन परम्पराओं एवं प्रयासों के आधार पर होता है, जो अनुभवों पर आधारित होता है। इसमें समस्त प्रबन्धकीय कार्यों जैसे- नियोजन, समन्वय, नियन्त्रण तथा अभिप्रेरणा इत्यादि को सम्मिलित किया जाता हैं। इस विचारधारा के विकास में महत्वपूर्ण योगदान टेलर, न्यूमैन, कूण्टज, ओ डोनेल, टैरी इत्यादि का रहा है। इस विचारधारा का प्रमुख उद्देश्य प्रबन्धन प्रक्रियाओं का विश्लेषण करके प्रबन्धन के सिद्धान्तों का प्रतिपादन करना है, तथा इसे प्रबन्धन की वह प्रक्रिया माना जाता है जो सदैव निरन्तर चलती ही रहती है।

### 3. अनुभवाश्रित विचारधारा ( Empirical School ) -

प्रबन्धन की यह विचारधारा अनुभवों पर आधारित है, जिसके अनुसार अधिकांश प्रबन्धनक या अधिकारी अपना ज्ञान कार्य अनुभवों के अधार पर प्राप्त करते हैं। इसका प्रयोग करते हुए प्रबन्धनक अपनी संस्था विशेष का कुशल संचालन करते हैं। प्रबन्धन की यह विचारधारा भूतकालीन अनुभवों को भविष्य के लिए ज्यों का त्यों स्वीकार नहीं करती, अपितु, परिवर्तित परिस्थितियों मे उनका विश्लेषण एवं मूल्यांकन करती है तथा प्राप्त निष्कर्षों को प्रबन्ध कार्यों में लागू करती है। प्रमुख प्रबन्धशास्त्री कूण्टज तथा ओ 'डोनेल तथा अर्नेस्टवेल को इस विचारधारा का जनक एवं समर्थक माना जाता है। अर्नेस्ट वेल के अनुसार- ''अनुभवाश्रित विचारधारा क्रियात्मक दृष्टिकोण को महत्व प्रदान करती है, जिसमें कि तथ्यों को ज्ञात करने के लिए भूतकाल की क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है एवं तथ्यों के स्पष्टीकरण के लिए सिद्धान्तों का विकास किया जाता है। इसके पश्चात् तथ्यों एवं सिद्धान्तों के आधार पर भावी प्रक्रियाओं का अनुमान लगाया जाता है।''

### 4. मानवीय विचारधारा ( Human Behaviour School ) -

इस विचारधारा के प्रतिपादन का श्रेय आस्ट्रेलिया निवासी एल्टन मेयो तथा अमेरिका निवासी रायथलिस बर्जर को जाता है। इन विद्वानों ने प्रयोगों के आधार पर प्रबन्ध के क्षेत्र में पहली बार मानवीय तत्वों पर सर्वाधिक बल दिया। इन परीक्षणों ने मानव एवं उनके व्यवहार तथा वे क्या करते हैं और क्यों करते हैं, पर अधिक ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता पर बल दिया। इस विचारधारा के आधार पर कहा जाने लगा कि मनुष्य ही समस्त क्रियाओं का अधार होता है। इसके अनुसार यदि एक समूह विशेष में कार्यरत व्यक्ति कार्य करते समय एक दूसरे को समझ ले तो प्रबन्धन की अधिकांश समस्याओं का समाधान अपने आप हो जायेगा। इस हेतु प्रबन्धकों से यह आशा की जाती है कि वे अपनी संस्था में ऐसी विधियों का विकास करें, जिससे अधिक

से अधिक मानवीय आवश्यकताओं की सन्तुष्टि की जा सके। साथ ही अधीनस्थों को संस्था के कार्य में नीति निर्धारण एवं क्रियान्वयन इत्यादि में हिस्सेदारी को बढ़ावा दें।

### 5. सामाजिक प्रणाली विचारधारा ( Social System School ) -

प्रबन्धन की सामाजिक प्रणाली विचारधारा मानवीय व्यवहार विचारधारा से काफी मिलती जुलती ही है। कई बार इसे पृथक् समझने में भ्रम होने लगता है। सामाजिक प्रणाली की विचारधारा का सम्बन्ध 'सांस्कृतिक अन्तर्सम्बन्धों की व्यवस्था' से है। इस विचारधारा के प्रवर्तक चेस्टर आई0 बर्नाड हैं। इन्होंने इस विचारधारा का विस्तार एवं विश्लेषण करने हेतु सहकारिता के सिद्धान्तों का विकास किया, जिससे व्यक्तिगत विकास में बाधक दैविक, भौतिक तथा सामाजिक सीमाओं को तथा उसे प्रभावित करने वाले वातावरण को समाप्त किया जा सके।

वस्तुतः यह विचारधारा किसी उपक्रम विशेष को एक सामाजिक अंग मानती हैं। प्रबन्ध के क्षेत्र में इस विचारधारा का महत्वपूर्ण योगदान रहा है, किन्तु कुछ विद्वानों के मतानुसार इस विचारधारा ने प्रबन्ध के क्षेत्र को अत्यन्त संकुचित बना दिया है तथा प्रबन्ध की सर्वाभौमिकता को तिरस्कृत किया है।

### 6. निर्णय सिद्धान्त विचारधारा ( Decision Theory School ) -

इस विचारधारा के समर्थक विद्वान प्रबन्धन को निर्णय लेने की प्रक्रिया एवं क्रियान्वित करने की शक्ति के रूप स्वीकार करते हैं। अर्थात् यह विचारधारा प्रबन्धन के क्षेत्र में विवेकपूर्ण निर्णय लेने पर बल देती है। इसके अनुसार समस्त मानवीय क्रियाओं तथा उनसे सम्बन्धित समस्याओं का समाधान निर्णयन में निहित है। इस प्रकार निर्णयन से आशय विभिन्न उपलब्ध विकल्पों में से किसी एक सर्वोत्तम विकल्प का चयन करने से लगाया जाता है।

### 7. गणितीय विचारधारा ( Mathematical School ) -

प्रबन्धन की गणितीय विचारधारा से आशय प्रबन्धन के क्षेत्र में गणितीय मॉडल एवं प्रक्रियाएँ प्रयोग में लाये जाने से है। वस्तुतः क्रियात्मक अनुसंधान तथा क्रियात्मक विश्लेषण इत्यादि गणितीय विचारधारा की ही देन है। इस विचारधारा के अनुसार यदि प्रबन्धक नियोजन, संगठन एवं निर्णयन की वास्तव में कोई तार्किक प्रक्रिया है, तो उसे गणितीय सूत्रों में ही प्रस्तुत किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त इस क्षेत्र में क्रियात्मक अनुसन्धान, रेखीय कार्यक्रम, गेम सिद्धान्त, क्यू का सिद्धान्त, मॉडल निर्माण इत्यादि का प्रयोग किया जाना चाहिए। वर्तमान में यह विचारधारा अत्यन्त प्रचलित एवं लोकप्रिय हो चुकी है।

### 8. निर्देशात्मक विचारधारा ( Directive School ) -

इस विचारधारा के अनुसार प्रबन्धकों का प्रमुख कार्य केवल नीति निर्धारण करना एवं लक्ष्य निर्धारित करना ही नहीं है, अपितु इससे भी अधिक महत्वपूर्ण कार्य इन नीतियों एवं लक्ष्यों को कार्यान्वित करना भी है। अतः इसके अन्तर्गत प्रबन्धक संस्था के निर्धारित उद्देश्यों एवं आदर्शों को प्राप्त करने के लिए अपने अधीनस्थों को आदेश-निर्देश देने का कार्य करता है। इसके साथ ही इसमें निर्देशन की सम्पूर्ण क्रियाविधि को अपनाया जान चाहिए जैसे कि अपने अधीनस्थों के कार्य की प्रकृति, कार्य क्या है, कार्य कैसे करना, क्यो करना तथा कितने समय में करना इत्यादि सभी जानकारियों पर दिशा-निर्देश दिया जाना चाहिए।

### 9. भागिता विचारधारा ( Participative School ) -

इस विचारधारा के अनुसार कर्मचारियों को अपनी बात कहने का अवसर दिया जाना चाहिए तथा उनको प्रबन्धकीय कार्यों में हिस्सा लेने के लिए भी प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। उन्हें सभी निर्णयों मे सम्मिलित किया जाना चाहिए। संक्षेप में यह विचारधारा संस्था विशेष में औद्योगिक प्रजातन्त्र का समर्थन करती है तथा एकांकी निर्णयन के स्थान पर सामूहिक निर्णयन को अधिक व्यावहारिक मानती हैं। किसी संस्था में यदि इस विचारधारा का अनुसरण किया जाय तो कर्मचारियों के संस्था के प्रति अपनत्व की भावना जागृत हो जाती है तथा निर्णयों का क्रियान्वयन अत्यन्त सुगम एवं सरल हो जाता है।

### 10. नियमनिष्ठ विचारधारा ( Formative School ) -

यह विचारधारा किसी संस्था विशेष में कार्यरत सदस्यों के अधिकार एवं उत्तरदायित्वों के स्पष्टीकरण पर आधारित है। अर्थात् इस विचारधारा के मतानुसार किसी संस्था विशेष के सदस्यों को संस्था में अपनी स्थिति, पद, कार्य, अधिकार एवं उत्तरदायित्व का स्पष्ट ज्ञान होना चाहिए। ऐसा करने से कर्मचारियों की जवाब देहिता निर्धारित होती हैं। उनकी कार्य कुशलता में वृद्धि होगी तथा संस्था से सदस्यों के मध्य मधुर सम्बन्ध बने रहेंगे।

### 11. तुलनात्मक प्रबन्ध विचारधारा ( Comparative Management School )

इस विचारधारा का प्रतिपादन एवं विकास हरविन्सन, मायर्स, मैकमिलन, ओवर्ग गोन्जालेज जैसे विद्वानों ने किया है। इस विचारधारा के अनुसार प्रबन्धन संस्कृति से प्रभावित होता है। चूँकि प्रबन्धन का व्यवहार समाज में किया जाता है और समाज इससे प्रभावित होता है। अतः यहाँ यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि प्रबन्धन के सिद्धान्तों का

प्रयोग एक विशेष संस्कृति तक ही सीमित रखना चाहिए। इस विचार धारा के अनुसार विभिन्न संस्कृतियों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाना चाहिए तथा प्रबन्धन के सामान्य सिद्धान्तों को विभिन्न संस्कृतियों के सन्दर्भ में संशोधित करके ही लागू किया जाना चाहिए।

## 1.11 पुस्तकालय एवं प्रबन्धन

पुस्तकालय भी अन्य सामाजिक संस्था अथवा संगठनों की भाँति एक सामाजिक संस्था है। अतः पुस्तकालय के विभिन्न क्रियाकलापों में भी नवीनतम प्रौद्योगिकी, तकनीक कम्प्यूटर इत्यादि का प्रयोग कर अधिकतम पाठक संतुष्ठि प्राप्त करने का प्रयास किया जा रहा है। वर्तमान परिवेश में प्रबन्धन के सामान्य सिद्धान्त, वैज्ञानिक प्रबन्धन के सिद्धान्त, प्रबन्धन की क्रियाविधियाँ इत्यादि सभी पुस्तकालयों के विविध क्रिया-कलापों एवं सेवाओं को किसी न किसी रूप में अवश्य ही प्रभावित कर रहे हैं।

पुस्तकालय के परिप्रेक्ष्य में पुस्तकालयाध्यक्ष ही पुस्तकालय का प्रबन्धक होता है। अतः वही पुस्तकालय के विविध क्रियाकलापों, सेवाओं एवं कर्मचारियों में सामन्जस्य स्थापित करके पुस्तकालय के निर्धारित उद्देश्यों एवं आदर्शों की प्राप्ति का प्रयास करता है। चूँकि पुस्तकालय का प्रमुख उद्देश्य लाभ कमाने की अपेक्षा जन साधारण एवं पाठक सेवा है। इस कारण यह अन्य सामाजिक संस्थाओं से भिन्न तथा एक जटिल सामाजिक संस्था मानी जाती है। अतः ऐसी संस्थाओं में प्रबन्धन की भूमिका आवश्यक रूप से महत्वपूर्ण होनी चाहिए। मुख्य रूप से पुस्तकालयों में वैज्ञानिक प्रबन्धन के सिद्धान्त के तथा प्रबन्धन के क्रियाविधि का अनुप्रयोग किया जा सकता है तथा पुस्तकालय के विविध क्रियाकलापों को नियोजित, संगठित, निर्देशित, नियन्त्रित एवं समन्वित करने में प्रबन्धन का व्यावहारिक प्रयोग किया जा सकता है।

संक्षेप में पुस्तकालय के निम्नलिखित दैनिक क्रियाकलापों में प्रबन्ध का अनुप्रयोग किया जा सकता है—

1. पुस्तक क्रयादेश प्रक्रिया में,
2. पुस्तक अधिग्रहण एवं परिग्रहण प्रक्रिया में
3. वर्गीकरण एवं सूचीकरण व्यवस्था में,
4. सूची पत्रक या संचिका तैयार करने में,
5. पुस्तक आदान-प्रदान व्यवस्था में,
6. पुस्तकालय का आय-व्यय निर्धारण में,

7. संदर्भ एवं सूचना सेवा-प्रदान करने में,

8. कार्य लागत, लेखांकन एवं मूल्यांकन में,

9. भण्डार सत्यापन में,

10. वित्तीय प्रबन्धन में, इत्यादि।

## 1.12 सारांश

प्रस्तुत इकाई के माध्यम से विद्यार्थियों को प्रबन्धन की अवधारणा, विशेषता, कार्य, स्तर क्षेत्र तथा प्रबन्ध के सामान्य सिद्धान्त, वैज्ञानिक सिद्धान्त एवं शास्त्रीय पक्षों एवं विचारधाराओं से अवगत करवाने का प्रयास किया गया है।

वस्तुतः प्रबन्धन एक ऐसी सतत् प्रक्रिया है जो सभी प्रकार की संस्थाओं की भांति पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों के विभिन्न कार्यों एवं सेवाओं के सफल सम्पादन में सहायक एवं उपयोगी सिद्ध होते हैं। चूँकि पुस्तकालय को व्यय की संस्था के रूप में जाना जाता है। अतः वहाँ वित्तीय प्रबन्धन में कुशलता प्राप्त करने के लिए प्रबन्धन के सिद्धान्तों को अपनाना ही सर्वोत्तम विकल्प हो सकता है। किसी पुस्तकालय विशेष में अनेक प्रकार के कार्यों एवं सेवाओं का आयोजन किया जाता है, जिस हेतु पुस्तकालय में अलग-अलग योग्यता एवं स्तर के कर्मचारियों/अधिकारियों की नियुक्ति की जाती है। अतः पुस्तकालय के विविध कार्यों, सेवाओं- तथा कर्मचारियों के उचित नियोजन, संगठन, समन्वय, निर्देशन एवं नियन्त्रण हेतु प्रबन्ध के सिद्धान्त एक अनिवार्य आवश्यकता है।

## 1.13 अभ्यास कार्य

1. प्रबन्धन को समझाते हुए प्रबन्धन के लक्षणों पर प्रकाश डालिये।
2. प्रबन्धन के क्या कार्य हैं? पोस्डकार्ब (POSDCORB) को विस्तार से समझायें।
3. प्रबन्धन एवं प्रबंधकीय कौशल के विभिन्न स्तरों की व्याख्या कीजिये।
4. प्रबन्धन के क्षेत्र की विवेचना कीजिए।
5. प्रबन्धन के सामान्य सिंद्धान्त से आप क्या समझते हैं? विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों का उल्लेख कीजिये।
6. हेनरी फेयोल द्वारा प्रतिपादित प्रबन्धन के सिद्धान्त की विस्तारपूर्वक व्याख्या कीजिये।


NMDC-019

7. वैज्ञानिक प्रबन्धन से आप क्या समझते हैं? वैज्ञानिक प्रबन्धन के सिद्धान्तों की विवेचना कीजिये।

8. प्रबन्धकीय विचारधारा क्या है? इसके विभिन्न स्कूलों पर प्रकाश डालिये।

## 1.14 सन्दर्भ ग्रन्थ


1 अग्रवाल, एस0 एस0 (1996), ग्रंथालय प्रबन्धन के मूल तत्व, जयपुर : राज पब्लिशिंग हाऊस।

2. त्रिपाठी, एस0 एम0 (et.al.) (1999). ग्रंथालय प्रबन्ध, आगराः वाई के पब्लिशर्स।

3. Indira Gandhi National Open University, (1999). School of Social Science BLIS-2 : Librery management. New Delhi : IGNOU.

4. Tripathi PC. and Reddy, P.N. (1991) Principles of Management. 2nd ed. New Delhi : Tata Megraw hill.

5. Krishna Kumar (1987). Librery Administration and Management. New Delhi : Vikas Publishing House.

6. सिंह, दिनेश (2000), ग्रंथालय विज्ञान की रूपरेखा, पटनाः नोवेल्टी एण्ड कम्पनी।

7. अग्रवाल, आर0 सी0 और ठाकुर, यू0एम0 (2002)। पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान, आगराः वाई0 के0 पब्लिशर्स।

# इकाई - 2 : भौतिक नियोजन : भवन, उपस्कर और उपकरण

## इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 विषय परिचय

2.2 पुस्तकालय : अर्थ एवं परिभाषा

2.3 पुस्तकालय भवन योजना बनाने के पूर्व विचारणीय तत्व

2.4 पुस्तकालय भवन की संरचना

2.5 पुस्तकालय भवन सम्बन्धी सिद्धान्त एवं मानक

2.6 पुस्तकालय भवन के निर्माण में पुस्तकालयाध्यक्ष एवं वास्तुकार की भूमिका

2.7 पुस्तकालय भवन के निर्माण में पंचम-सूत्र की भूमिका

2.8 पुस्तकालय उपस्कर एवं उपकरण

2.9 पुस्तकालय हेतु विविध उपस्कर एवं उपकरण तथा उनका मानक

2.10 सारांश

2.11 अभ्यास - कार्य

2.12 संदर्भ - ग्रंथ

## 2.0 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय में भौतिक नियोजन के अन्तर्गत पुस्तकालय भवन, उसकी संरचना, सिद्धान्त, मानक तथा उनके प्रमुख स्तरों पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला गया है। साथ ही पुस्तकालय भवन के निर्माण में ग्रन्थालयी, वास्तुकार एवं पंचम सूत्र के योगदानों पर भी संक्षिप्त प्रकाश डाला गया है।

इसी अध्याय में आप पुस्तकालय के लिए उपयोगी, उपस्कर एवं उपकरणों का भी ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे तथा इनके हेतु निर्धारित मानकों से भी परिचित हो सकेंगे। अतः आशा है कि प्रस्तुत अध्याय से विद्यार्थीगण पुस्तकालय के आधार पर स्तम्भ के रूप में पुस्तकालय भवन, उपस्कर एवं उपकरणों की अनिवार्यता एवं आवश्यकता को समझने में सक्षम हो सकेंगे।

## 2.1 विषय - परिचय

वर्तमान समय में सभी क्षेत्रों में कार्य एवं सेवा की प्रकृति के आधार पर भवन संरचना की अलग-अलग अवधारणा एंव मानक तेजी से परिवर्तित हो रहे हैं। इस



HMDC-019

अवधारणा का प्रभाव सभी क्षेत्रों पर पड़ा है, चाहे वह विद्यालय भवन हो, चिकित्सा भवन हो, व्यावसायिक भवन हो या फिर आवासीय भवन हो, सभी भवनों की संरचना उनके कार्य एवं आवश्यकता के अनुरूप भिन्न-भिन्न हैं, अर्थात् अलग-अलग क्षेत्रों की आवश्यकता के अनुरूप अलग-अलग संरचना वाले कार्यशील भवन की आवश्यकता होती है।

कार्यशील भवन की अवधारणा का प्रभाव पुस्तकालय भवन पर भी पड़ा है, पुस्तकालय एक सामाजिक संस्था है, अतः पुस्तकालयों को सामाजिक कल्याण तथा अपने निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु अनेकों कार्य एवं सेवाओं का सम्पादन करने पड़ते हैं। आधुनिक पुस्तकालयों द्वारा अपने विभिन्न कार्यों एवं सेवाओं को दृष्टिगत रखकर मान्य सिद्धान्तों, मानकों एवं वास्तुशास्त्र के आधार पर कार्यशील भवन का निर्माण करने की आवश्यकता होती है।

पुस्तकालय हेतु किसी विशेष प्रकार के भवन का प्रचलन पहले नहीं था। सम्भवतः एक बड़े हाल को ही सर्वाधिक उपयुक्त माना जाता था। उस समय पुस्तक एवं पुस्तकालय उपयोगार्थ न होकर सुरक्षार्थ था, परन्तु आज उपयोग का पक्ष अत्यन्त महत्वपूर्ण हो गया है। डॉ0 एस0 आर0 रंगनाथन ने कहा था कि "एक समय था जब कोई व्यक्ति किसी संस्थापित व्यवसाय के लिए उपयुक्त नहीं समझा जाता था तो उसको ग्रंथालय के कार्य हेतु पर्याप्त रूप से योग्य समझा जाता था। ठीक उसी प्रकार जब कोई भवन एवं उपस्कर किसी अन्य कार्य के लिए अनुपयुक्त हो जाता था तो उसे पुस्तकालय हेतु उपयुक्त समझा जाता था; परन्तु ये दोनों ही विचार आज अप्रचलित हो गये हैं।"

उपयोक्ता, ग्रंथ एवं पुस्तकालयाध्यक्ष में परस्पर सम्बन्ध स्थापित करने का स्थल पुस्तकालय होता है, जिससे ज्ञान की वृद्धि होती है। पुस्तकालय भवन की स्थिति ऐसी होनी चाहिए, जिससे कि सुगमतापूर्वक उपयोक्ता पहुँच सकें। पुस्तकालय भवन, का सेटअप अत्यन्त सुन्दर एवं आकर्षक हो, आवश्यक फर्नीचर जो आरामदायक हो, पर्याप्त रोशनी एवं वातावरण उत्तम हो। वर्तमान पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों द्वारा अनेकों कार्यों एवं सेवाओं का निष्पादन किया जाता है। अतः पुस्तकालय की कार्यशीलता को बनाये रखने के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि पुस्तकालय भवन, उपस्कर एवं उपकरण पुस्तकालय के विभिन्न कार्य एवं सेवाओं को ध्यान में रखकर उचित मानकों एवं सिद्धान्तों के आधार पर निर्मित किये जायें।

प्रस्तुत इकाई में हम उन सभी पूर्व विचारणीय तत्वों, जिनका पुस्तकालय भवन की योजना बनाते समय ध्यान रखना चाहिए, उपस्कर तथा उपकरण जो प्रक्रियाओं को शीघ्रता एवं अत्यन्त कुशलतापूर्वक, सौहार्दपूर्ण वातावरण में सम्पन्न करने में सहायक होते हैं, का विवेचन करेंगे। पुस्तकालय की भौतिक योजना बनाने के लिए आवश्यक मानकों एवं विनिर्देशों से भी अवगत होंगे।

## 2.2 पुस्तकालय भवन : अर्थ एवं परिभाषा

**अर्थ-** पुस्तकालयों द्वारा अपने पाठ्य-सामग्रियों को संग्रहित करने तथा उनके माध्यम से विभिन्न प्रकार, के कार्य एवं सेवायें संचालित करने के लिए जिस भवन का प्रयोग किया जाता है, उसे ही पुस्तकालय भवन कहा जाता है।

पुस्तकालय भवन पुस्तकालय के प्रमुख आधार स्तम्भों (पुस्तक, पाठक, कर्मचारी, भवन इत्यादि) में से एक है, अतः इसके निर्माण की योजना बनाते समय से ही पुस्तकालय के प्रकार, स्तर, स्थान, कार्य, सेवा, भविष्य की सम्भावनायें इत्यादि, सभी बिन्दुओं पर विस्तृत विचार करके ही किसी योजना विशेष का निर्धारण करना चाहिए। यहाँ यह ध्यान में रखना चाहिए कि पुस्तकालय के लिए ऐसे कार्यशील भवन का निर्माण किया जाये, जो उसके विभिन्न कार्यों एवं सेवाओं को सुगम तो बनाते ही हों,साथ ही वह वैज्ञानिक एवं वास्तुशास्त्र की दृष्टि से भी तर्कसंगत हो, जिससे कोई भी नवागन्तुक शीघ्र ही उसके विभिन्न विभागों की स्थिति एवं क्रियाविधि को समझ सकें।

पुस्तकालय भवन के निर्माण की योजना बनाने हेतु डॉ0 रंगनाथन द्वारा रचित पंचम सूत्र "पुस्तकालय एक बर्द्धनशील संस्था है" को एक मूलमंत्र के रूप में सदैव ध्यान में रखना चाहिए तथा राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की मानक संस्थाओं द्वारा भी पुस्तकालय भवन हेतु उचित प्रारूप सुझाये गये हैं, उन्हें भी ध्यान में रखा जाना चाहिए।

**परिभाषा :-**

### 1. मेटकॉफ के अनुसार -

"पुस्तकालय भवन शैक्षणिक जीवन का एक प्राकृतिक केन्द्र है, जिसे समुदाय के अध्ययन सम्बन्धी कार्यों को अग्रसर करने में सहायता करनी चाहिए एवं निजी अध्ययन एवं शोध सुविधा में आवश्यक साधन एवं सुविधायें प्रदान करनी चाहिए।"

### 2. पी0 एन0 कौला -

"पुस्तकालय भवन पुस्तकालय के कार्यों की विशिष्ट, स्पष्ट तथा प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति है।"



HMDC-019

## 2.3 पुस्तकालय भवन की योजना बनाने के पूर्व विचारणीय तत्वः

पुस्तकालय भवन के निर्माण की योजना बनाना एक जटिल कार्य माना जाता है। अतः विद्वानों का मत है कि पुस्तकालय भवन की योजना तैयार करने हेतु एक समिति गठित की जानी चाहिए, जिसमें पुस्तकालय भवन के विशेषज्ञ, इंजीनियर, साज-सज्जा हेतु शिल्पकार, पुस्तकालयाध्यक्ष, पुस्तकालय अधिकारी इत्यादि को सम्मिलित किया जाना चाहिए। इस समिति के माध्यम से वर्तमान एवं भविष्य की सभी सम्भावनाओं पर विस्तृत विचार-विमर्श करके ही किसी कार्य-योजना का निर्धारण किया जाना चाहिए। पुस्तकालय भवन की योजना बनाने से पूर्व निम्न महत्वपूर्ण बिन्दुओं को अवश्य ही ध्यान में रखा जाना चाहिए—

### 2.3.1 पुस्तकालय का उद्देश्य एवं क्षेत्र -

पुस्तकालय भवन के निर्माण की योजना बनाने के पूर्व यह अत्यन्त आवश्यक है कि पुस्तकालय के उद्देश्यों एवं सेवा का अनिवार्य रूप से निर्धारण कर लेना चाहिए, जिससे पुस्तकालय के उद्देश्यों एवं क्षेत्र के आधार पर भविष्य की सम्भावनाओं का आँकलन कर भवन निर्माण की योजना बनायी जा सकें।

### 2.3.2 पुस्तकालय के प्रकार -

वर्तमान समय में पुस्तकालय अपने विशिष्ट संग्रह तथा विशिष्ट कार्य एवं सेवा के कारण कई श्रेणियों एवं स्वरूपों में प्रचलित हो गये हैं, जैसे-सार्वजनिक पुस्तकालय, शैक्षणिक पुस्तकालय, विशिष्ट पुस्तकालय इत्यादि। पुस्तकालयों के क्रियाकलाप भी एक-दूसरे से भिन्न हैं। इस सभी बातों का प्रभाव इनके भवन पर पड़ना स्वाभाविक है। कहने का तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार पुस्तकालयों के प्रकार, कार्य एवं सेवायें भिन्न-भिन्न हैं, उसी प्रकार उनके भवन भी भिन्न-भिन्न होते हैं। अतः योजना बनाने से पूर्व इस पर विचार अवश्य करना चाहिए।

### 2.3.3 पुस्तकालय कार्य एवं सेवा -

यह अत्यन्त आवश्यक है कि पुस्तकालय भवन के निर्माण की योजना बनाने से पूर्व पुस्तकालय द्वारा वर्तमान में दी जाने वाली सेवाओं तथा भविष्य में कार्य एवं सेवाओं के विस्तार की विभिन्न सम्भावनाओं पर पूर्णतया विचार-विमर्श कर लेना चाहिए, ताकि भविष्य में भवन में स्थान की समस्या से किसी कार्य विशेष के आयोजन में बाधा उत्पन्न न हो।


HMDC-019

### 2.3.4 पाठकों के प्रकार, संख्या एवं स्तर -

पुस्तकालय भवन की योजना बनाते समय पाठकों की संख्या, प्रकार एवं स्तर पर भी विचार करना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि पाठकों की संख्या के आधार पर पुस्तकालय के विभिन्न विभागों के लिए उचित स्थान प्रदान किया जा सकता है, जैसे- अध्ययन कक्ष, आदान-प्रदान पटल इत्यादि। इसी प्रकार पाठकों के स्तर एवं प्रकार के आधार पर संग्रह-कक्ष, पत्र-पत्रिका विभाग तथा विभिन्न सूचना सेवाओं हेतु भवन में स्थान निर्धारित किया जा सकेगा।

### 2.3.5 पुस्तकालय का बजट -

पुस्तकालय को ''व्यय की संस्था'' कहा जाता है। अतः पुस्तकालय की वर्तमान एवं भविष्य की आर्थिक स्थिति का पूर्ण मूल्यांकन अवश्य ही किया जाना चाहिए, क्योंकि पर्याप्त धन के अभाव में पुस्तकालय भवन के निर्माण से लेकर पुस्तकालय के विभिन्न कार्यों एवं सेवाओं के संचालन तक कुछ भी सफल नहीं हो सकेगा। पुस्तकालय में अनेक मदों जैसे-पुस्तकों का क्रय एवं रख रखाव, कर्मचारियों का वेतन, फर्नीचर इत्यादि हेतु भी पर्याप्त धन की आवश्यकता पड़ती रहती है। अतः पुस्तकालय आय के विभिन्न स्रोतों पर पहले से ही विचार कर लेना उचित ही होगा।

### 2.3.6 पुस्तकालय के लिए स्थान एवं आस-पास का वातावरण -

पुस्तकालय के लिए स्थान का चुनाव एवं आस-पास के वातावरण पर भी विचार किया जाना चाहिए। विद्वानों के मतानुसार पुस्तकालय भवन ऐसे स्थान पर निर्मित करना चाहिए, जो यातायात, संचार एवं सुरक्षा की दृष्टि से सुविधाजनक हो, आस-पास का वातावरण शान्त हो, पुस्तकालय भवन की भूमि पर कभी दलदल न रहा हो, भूमि पर पानी न जमा हो, पुस्तकालय में वायु एवं प्रकाश की उचित व्यवस्था हो, तथा भविष्य में पुस्तकालय विस्तार हेतु खुली भूमि भी उपलब्ध हो।

### 2.3.7 पुस्तकालय की रूपरेखा -

भवन योजना का निर्माण करते समय पुस्तकालय की रूपरेखा को भी तय कर लेना चाहिए। पुस्तकालय की रूपरेखा तैयार करते समय विद्वानों को पुस्तकालय की सादगी पर ध्यान देना चाहिए, साथ ही भवन ऐसा हो जो पाठकों को आकर्षित करने की क्षमता रखता हो तथा भवन पाठकों तथा कर्मचारियों दोनों के ही दृष्टिकोण से उपयुक्त एवं सुविधाजनक भी होना चाहिए।



NMDC-019

### 2.3.8 मानक -

वर्तमान समय में कई राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की मानक संस्थाओं द्वारा पुस्तकालय भवन हेतु उचित प्रारूप (मानक) निर्धारित किये गये हैं। अतः पुस्तकालय भवन निर्माण की योजना बनाते समय इन मानकों पर भी ध्यान देना चाहिए।

### 2.3.9 योजना पर पुनर्विचार -

सभी महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर विचार कर योजना बना ली जाती है। यहाँ यह अवश्य ध्यान में रखा जाना चाहिए कि योजना को अन्तिम रूप देने के पूर्व उस पर पुनर्विचार कर लेना चाहिए, ताकि योजना की लाभ-हानि पर विचार कर छूटी हुई त्रुटियों को सुधारा जा सके। पुस्तकालय भवन की योजना को लचीला बनाना चाहिए, जिससे आवश्यकता पड़ने पर उसमें सुधार किया जा सके।

### 2.3.10 अन्तिम निर्णय -

भवन निर्माण की योजना पर पुनर्विचार करके अन्त में योजना को अन्तिम रूप दे दिया जाता है तथा योजना के सभी बिन्दुओं पर पूर्णतया संतुष्ट हो जाने पर योजना के प्रारूप को सक्षम अधिकारी या समिति के सम्मुख प्रस्तुत कर स्वीकृति प्राप्त कर ली जाती है।

## 2.4 पुस्तकालय भवन की संरचना :-

पुस्तकालय भवन की संरचना तैयार करते समय निम्न बिन्दुओं को अवश्य ध्यान में रखा जाना चाहिए।

### 2.4.1 कार्यशील भवन -

पुस्तकालय भवन की रूपरेखा तैयार करते समय यह अवश्य ध्यान में रखा जाना चाहिए कि भवन पुस्तकालय के विभिन्न कार्यों एवं सेवाओं की दृष्टि से कार्यशील होना चाहिए, अर्थात् पुस्तकालय के विभिन्न विभागों एवं अनुभागों में कार्य एवं सेवा बिन्दुओं पर सामंजस्य बना रहे तथा उपलब्ध स्थान का भी पूर्ण उपयोग हो सके। भवन की कार्यशीलता पाठक एवं कर्मचारी दोनों के लिए सुविधाजनक होगा।

### 2.4.2 आकर्षण भवन -

पुस्तकालय भवन की कार्यशीलता के साथ-साथ उसकी स्वच्छता एवं सुन्दरता पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए, जिससे पाठकों को वहाँ आने, बैठने एवं पढ़ने में

प्रसन्नता प्राप्त हो। यहाँ पर भवन की सुन्दरता से यह तात्पर्य नहीं होना चाहिए कि पुस्तकालय को आकर्षक बनाने हेतु अत्यधिक धन खर्च कर दिया जाये। पुस्तकालय को सादगीपूर्ण स्वच्छ, सुन्दर एवं साज-सज्जा से परिपूर्ण करना चाहिए, जहाँ का वातावरण मनमोहक एवं शांतिपूर्ण हो।

### 2.4.3 लचीला भवन -

विशेषज्ञों की राय है कि पुस्तकालय भवन में परिवर्तनशीलता का गुण होना चाहिए अर्थात् भवन को भविष्य की आवश्यकतानुसार बढ़ाया जा सकने योग्य होना चाहिए क्योंकि पुस्तकालय विज्ञान के पंचमसूत्र के अनुसार "पुस्तकालय एक वर्द्धनशील संस्था है।" इसका आशय है कि समय आवश्यकता एवं माँग के कारण भविष्य में पुस्तक, पाठक एवं कर्मचारियों की संख्या में वृद्धि होना स्वाभाविक है। अतः इन तीनों में वृद्धि का प्रभाव भवन पर भी पड़ेगा, इसलिए पुस्तकालय भवन की संरचना लचीली प्रकृति की होनी चाहिए।

### 2.4.4 भवन का आन्तरिक भाग -

पुस्तकालय भवन की आन्तरिक भाग की रूपरेखा के निर्धारण हेतु राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की मानक संस्थाओं द्वारा कई विकल्प सुझाये गये हैं, जिनका प्रयोग पुस्तकालय की आवश्यकता एवं परिस्थिति के अनुसार किया जा सकता है। यहाँ यह अवश्य ध्यान देना चाहिए कि सर्वप्रथम पुस्तकालय के विभिन्न विभाग तथा उनके कार्य एवं सेवा पर विचार कर उनका उचित निर्धारण कर लेना चाहिए तत्पश्चात् भवन में विभिन्न कार्यों एवं सेवाओं की स्थिति एवं निर्माण का निर्धारण कार्यशीलता को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए।

### 2.4.5 उचित एवं पर्याप्त स्थल -

पुस्तकालय के विभिन्न विभागों एवं सेवाओं के लिए उचित एवं पर्याप्त स्थान होना अत्यन्त आवश्यक माना जाता है। यथा - आदान-प्रदान विभाग में अन्दर और बाहर दोनों तरफ पर्याप्त जगह होनी चाहिए, जिससे अन्दर कर्मचारियों को बैठने, पुस्तकों को रखने, चार्जिंग ट्रे को रखने, पुस्तक ट्राली को ले जाने एवं ले आने हेतु पर्याप्त स्थान होना चाहिए तथा विभाग के बाहर पाठकों को खड़े होने के लिए पर्याप्त जगह होनी चाहिए। अध्ययन कक्ष में पंजीकृत सदस्य पाठकों में से कम से कम 20% पाठकों के बैठने की व्यवस्था होनी चाहिए। इसी प्रकार संग्रह-कक्ष में सेल्फ को रखने तथा भविष्य

में संख्या बढ़ाने, पाठकों एवं कर्मचारियों के आने-जाने तथा पुस्तकों के लिए पर्याप्त जगह होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त पत्रिका विभाग, संदर्भ विभाग, तकनीकी विभाग, कार्यालय, अधिकारियों के कमरें, सूची कैबिनेट, इत्यादि के लिए भी पर्याप्त स्थान होना आवश्यक है।

## 2.4.6 वायु तथा प्रकाश -

पुस्तकालय भवन में प्राकृतिक रूप से शुद्ध वायु एवं प्रकाश आने की व्यवस्था होनी चाहिए। इस हेतु भवन में आवश्यकतानुसार खिड़की, रोशनदान तथा दरवाजे होने चाहिए, क्योंकि प्रकाश की उचित व्यवस्था होने से पुस्तकालय भवन में नमी, कीड़े-मकोड़ों को पनपने का अवसर नहीं मिलता तथा शुद्ध वायु के प्रवेश से भवन का वातानुकूलन बना रहता है।

भवन में वायु एवं प्रकाश की कृत्रिम व्यवस्था होनी चाहिए, जिसके लिए विद्युत एवं उनसे सम्बन्धित उपकरणों का प्रयोग किया जाता है, परन्तु ध्यान रहे विद्युतीय व्यवस्था अत्यन्त सुरक्षित होनी चाहिए, अन्यथा आकस्मिक हानि की सम्भावना बनी रहती है।

पुस्तकालय भवन में प्रकाश की व्यवस्था की योजना बनाते समय निम्न बिन्दुओं पर विचार अत्यन्त आवश्यक है-

1. प्रकाश की मात्रा एवं तीव्रता
2. प्रकाश का प्रकार
3. सम्पूर्ण पुस्तकालय भवन में प्रकाश की समुचित व्यवस्था
4. प्रकाश व्यवस्था की लागत

पुस्तकालय में उपयोक्ता पढ़ने आते हैं। इसके लिए पर्याप्त प्रकाश की आवश्यकता होती है। इस सम्बन्ध में यह विचारणीय तथ्य है कि कम रोशनी एवं तेज प्रकाश आँखों के लिए हानिकारक होता है। अतः प्रकाश की उचित मात्रा पर अवश्य ध्यान दिया जाना चाहिए। प्रकाश के प्रकार को सामान्य रूप से दो श्रेणियों में बाँटा जा सकता है- 1. प्राकृतिक - जो कि हमें सूर्य से प्राप्त होते हैं। इस प्रकार के प्रकाश की समुचित व्यवस्था हेतु पुस्तकालय भवन के निर्माण काल में उचित व्यवस्था की जानी चाहिए जैसे - रोशन दान एवं खिड़कियों की व्यवस्था इत्यादि। 2. अप्राकृतिक - इस प्रकार के प्रकाश की व्यवस्था हेतु विद्युतीय तकनीक का प्रयोग किया जाता है। इसके

अन्तर्गत आधुनिक प्रकाशीय उपकरणों यथा - ट्यूबलाईट, सी0एफ0एल0 इत्यादि का प्रयोग श्रेस्यकर होगा, जो बिजली की बचत के साथ ही आँखों पर जोर एवं थकान उत्पन्न नहीं होने देता है। पुस्तकालय में प्रकाश की व्यवस्था करते समय विशेषज्ञों को प्राकृतिक एवं अप्राकृतिक प्रकाश में उचित सामन्जस्य बनाये रखना चाहिए साथ ही उसके गुणवत्ता पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। प्रकाश की उचित व्यवस्था द्वारा बिजली की लागत में कमी की जा सकती है तथा प्राकृतिक प्रकाश का भी उचित दोहन किया जा सकता है। पुस्तकालय भवन में प्रकाश व्यवस्था को निरन्तर बनाये रखने हेतु भी उचित प्रबन्ध किया जाना चाहिए। आपातकालीन प्रकाशीय व्यवस्था हेतु आधुनिक विद्युतीय उपकरणों जैसे जनरेटर, इन्वर्टर, सौर ऊर्जा इत्यादि का उपयोग किया जाना चाहिए।

## 2.4.7 पुस्तकालय भवन में कोलाहल नियन्त्रण -

पुस्तकालय ज्ञान के प्रचार-प्रसार एवं संग्रहण का एक प्रमुख केन्द्र माना जाता है। जहाँ अनेक छात्र, शोधकर्ता, विषय-विशेषज्ञ, वैज्ञानिक, व्यवसायी, इत्यादि अपनी जिज्ञासाओं का उचित समाधान खोजने के लिए आते हैं। अतः इन विभिन्न स्तर, क्षेत्र एवं योग्यता वाले पाठकों के लिए पुस्तकालय द्वारा अनेक प्रकार की पाठ्य-सामग्रियाँ संग्रहीत एवं वितरित की जाती है। पुस्तकालय इन आगन्तुक पाठकों को अध्ययन हेतु अनेक प्रकार की सुविधाओं की व्यवस्था करता है। यथा - भवन, फर्नीचर, उपकरण, पाठ्यसामग्री, उचित प्रकाश, इत्यादि परन्तु यदि उपरोक्त सभी व्यवस्थाओं के साथ पुस्तकालय में उचित एवं शान्त वातावरण पर ध्यान न दिया जाये तो दी गयी सारी सुविधायें व्यर्थ हो जाती हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि पुस्तकालय में अध्ययन हेतु उचित एवं शान्त वातावरण की व्यवस्था करना पुस्तकालय प्राधिकरण का प्रधान कर्त्तव्य है।

पुस्तकालय के शान्त वातावरण के सन्दर्भ में विशेषज्ञों को पुस्तकालय भवन के निर्माण के समय ही ध्यान दिया जाना चाहिए। वस्तुतः पुस्तकालय भवन के कोलाहल को प्रमुख रूप से दो श्रेणियों में बाँटा जा सकता है—

(क) बाह्य कोलाहल (ख) आन्तरिक कोलाहल

**(क) बाह्य कोलाहल -**

बाह्य कोलाहल पुस्तकालय के बाहरी परिवेश, वातावरण एवं क्षेत्र पर निर्भर करता है यदि पुस्तकालय घनी आबादी या किसी शहर/नगर के मध्य में अवस्थित है तो आस-पास की सड़कों पर चलने वाले वाहनों का शोरगुल, बाजारों का शोरगुल, आबादी

का शोरगुल इत्यादि बाहरी कोलाहल के प्रमुख कारण हैं। अतः पुस्तकालय विशेषज्ञों को पुस्तकालय स्थान की खोज करते समय इस तथ्य को अवश्य ध्यान में रखा जाना चाहिए। परन्तु यदि पुस्तकालय ऐसे स्थान पर पहले से ही स्थापित हों और स्थानान्तरण की सम्भावना न हो तो पुस्तकालय के बाहरी दीवारों को ध्वनि संशोधक बनवाया जाना चाहिए। इस प्रकार की दीवार के निर्माण से आद्रता एवं ताप नियंत्रण में भी लाभ प्राप्त होते हैं।

**( ख ) अन्तरिक कोलाहल -**

आन्तरिक कोलाहल के अनेक कारण होते हैं, यथा - पाठकों का आपसी संवाद, फर्नीचर को इधर-उधर करने में उत्पन्न शोर, कर्मचारिओं के आपसी संवाद, टाईप मशीन की आवाज़ अन्य उपकरणों के शोर इत्यादि। इस प्रकार के कोलाहल को नियन्त्रित करने हेतु पुस्तकालयों द्वारा अनेक प्रकार के उपाय किए जाते हैं जैसे- पाठकों एवं कर्मचारियों को कोलाहल न करने हेतु जगह-जगह पर निर्देश पट्टिका लगा दिया जाता है। फर्नीचर इत्यादि के नीचे रबर, फाइबर इत्यादि लगा दिया जाता है। फर्श पर रबर की चटाई, कारपेट, रैकसिन की चटाई इत्यादि बिछा दिया जाता है।

## 2.4.8 पुस्तकालय भवन का निर्माण -

वर्तमान समय में अधिकांश पुस्तकालय भवनों के निर्माण में मॉड्यूलर तकनीक का उपयोग किया जा रहा है। इस तकनीक के प्रयोग से बिना विशेष तोड़-फोड़ के पुस्तकालय का विस्तार किया जा सकता है, यह काम खर्चीला होने के कारण बहुप्रचलित हो रहा है। इस तकनीक के अन्तर्गत भवन के आन्तरिक भाग में आयताकार मॉड्यूल बना लिया जाता है, तथा चार खम्भों की सहायता से छत बना ली जाती है। इसकी विशेषता यह है कि इसके आन्तरिक भाग में आवश्यकतानुसार फर्नीचर या सीमेन्ट की दीवार बना ली जाती है। जिससे बाद में, आवश्यकतानुसार घटाया-बढ़ाया जा सकता है। परन्तु इसका प्रभाव बाह्य रूप पर बिल्कुल नहीं पड़ता है।

## 2.4.9 पुस्तकालय के प्रमुख विभाग एवं उपविभाग -

पुस्तकालय भवन के निर्माण की योजना बनाते समय ही उसके विभिन्न विभागों एवं उपविभागों तथा उनकी स्थिति का पूर्ण निर्धारण कर लिया जाना चाहिए। ऐसी योजना बनाते समय विभिन्न विभागों के आपसी सम्बन्ध एवं कार्यशीलता को ध्यान में रखा जाना चाहिए। सामान्यतः पुस्तकालय के प्रमुख विभागों एवं उपविभागों को इस

प्रकार दर्शाया जा सकता है—

1. आदान - प्रदान विभाग
2. आदान - प्रदान पटल
3. संग्रह कक्ष
4. अध्ययन कक्ष
5. सूची कक्ष
6. सन्दर्भ विभाग
7. शोध कक्ष
8. दुर्लभ पाठ्य-सामग्री कक्ष
9. अन्य

   — ग्रंथालयी कक्ष

   — उपग्रंथालयी कक्ष

   — सहायक ग्रंथालयी कक्ष

   — समिति कक्ष

   — प्रशासकीय कक्ष

   — कर्मचारी कक्ष

   — प्रतिलिपिकरण कक्ष

   — शौचालय इत्यादि

## 2.5 पुस्तकालय भवन सम्बन्धी सिद्धान्त एवं मानक :

पुस्तकालय भवन के निर्माण के सन्दर्भ में विद्वानों द्वारा कुछ सिद्धान्त प्रतिपादित किये गये हैं। यदि इन सिद्धान्तों का अनुकरण किया जाये तो पुस्तकालय भवन पुस्तकालय के कार्यों एवं सेवा तथा अन्य सभी दृष्टिकोणों एवं मानकों पर खरा पाया जायेगा। ये सिद्धान्त निम्नलिखित है-

### 2.5.1 परिवर्तनशीलता का सिद्धान्त -

इस सिद्धान्त के अनुसार पुस्तकालय भवन में आवश्यक रूप से लचीलापन (परिवर्तनशीलता) का गुण होना चाहिए, जिससे भविष्य में आवश्यकता पड़ने पर, भवन में विशेष तोड़-फोड़ के बगैर, परिवर्तन एवं विस्तार किया जा सके।



HMDC-019

### 2.5.2 मानकीकरण का सिद्धान्त -

इस सिद्धान्त के अनुसार पुस्तकालय के विभिन्न कार्यों, सेवाओं एवं प्रक्रियाओं में एकरूपता, कुशलता एवं मितव्ययिता लाने हेतु निर्धारित मानको का प्रयोग करना चाहिए तथा पुस्तकालय के विभिन्न तरह के संसाधनों, उपकरणों एवं उपस्करों को भी उचित एवं निर्धारित मानक के अनुसार ही होना चाहिए।

### 2.5.3 व्यापकता एवं विस्तारशीलता का सिद्धान्त -

इस सिद्धान्त के अनुसार पुस्तकालय भवन का निर्माण, इस ढंग से किया जाना चाहिए कि आवश्यकतानुसार पुस्तकालय के कार्यों एवं सेवाओं का विस्तार किया जा सके। इसके अतिरिक्त पुस्तकालय भवन में पुस्तकालय के क्षेत्र को व्यापक बनाने का भी सामर्थ्य होना चाहिए।

### 2.5.4 सामंजस्य का सिद्धान्त -

इस सिद्धान्त के अनुसार समय एवं परिस्थितियों में परिवर्तन के कारण लोगों की मांग, आवश्यकता एवं विचारों में परिवर्तन होना स्वाभाविक है। अतः यह सिद्धान्त इस बात की अपेक्षा करता है कि इन परिवर्तनों को ध्याम में रखकर पुस्तकालयों को भी अपने कार्यों, सेवाओं एवं साधनों में परिवर्तन कर समय एवं आवश्यकता के अनुरूप सामंजस्य स्थापित करना चाहिए।

### 2.5.5 कार्यशीलता का सिद्धान्त -

इस सिद्धान्त के अनुसार पुस्तकालय भवन का निर्माण पुस्तकालय में सम्पन्न किये जाने वाले विभिन्न कार्यों एवं सेवाओं को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। इस सिद्धान्त के अनुसार पुस्तकालय के विभिन्न विभागों एवं उसके उपविभागों को भवन में इस प्रकार व्यवस्थित होना चाहिए, जिससे पाठक एवं कर्मचारी दोनों ही के लिए सुविधाजनक हो। इससे पुस्तकालय भवन की कार्यशीलता बनी रहेगी।

### 2.5.6 परिवर्तनशीलता का सिद्धान्त -

इस सिद्धान्त के अनुसार पुस्तकालय भवन निर्माण की योजना ऐसी बनाई जाय, जो कि कम खर्चीली हो तथा अधिक गुणों/विशेषताओं से युक्त हो। इस संदर्भ में वर्तमान में पुस्तकालय भवन के निर्माण हेतु 'मॉड्यूलर पद्धति' अत्यधिक प्रचलित है, जो कई विशेषताओं से युक्त है और कम खर्चीली भी है।

## 2.5.7 आधारभूत आवश्यकता का सिद्धान्त -

उपरोक्त सिद्धान्तों के अतिरिक्त पुस्तकालय की कुछ आधारभूत आवश्यकतायें भी होती हैं। अतः यह सिद्धान्त इन्हीं आवश्यकताओं का समर्थन करता है। इन आधारभूत आवश्यकताओं के अन्तर्गत पर्याप्त स्थान, शान्तिपूर्ण वातावरण, शुद्ध, वायु, प्रकाश व्यवस्था इत्यादि आते हैं। स्पष्ट है कि पुस्तकालय भवन के निर्माण के समय इन पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

उपरोक्त सामान्य सिद्धान्तों के अतिरिक्त कुछ प्रमुख विशेषज्ञों ने भी इस सन्दर्भ में अपने सुझाव प्रस्तुत किए हैं। अतः इनके विचारों का अनुसरण करना भी अनुकरणीय होगा। कुछ प्रमुख विद्वानों के विचार नीचे प्रस्तुत किए जा रहे हैं—

**(क) हेनरी फाकनर के अनुसार–**

हेनरी फाकनर ने पुस्तकालय भवन के निर्माण हेतु निम्न सिद्धान्त प्रस्तुत किए हैं—

1. भवन को पुस्तकालय के क्रिया-कलापों की दृष्टि से आवश्यकरूप से लचीला होना चाहिए।
2. कार्यशील भवन का निर्माण किया जाना चाहिए, जो पाठकों एवं कर्मचारियों के लिए सुविधाजनक हो।
3. पुस्तकालय के विभिन्न विभाग एवं उपविभागों की स्थापना भवन में तर्कसंगत हो, जिससे पाठकों को वहाँ पहुँचने में सुगमता हो।
4. पुस्तकालय भवन का निर्माण इस ढंग से किया जाये, कि उसे भविष्य में आवश्यकता पड़ने पर परिवर्तित एवं विकसित किया जा सके।
5. पुस्तकालय के विविध विभागों जैसे - अध्ययन कक्ष, संग्रह कक्ष, आदान-प्रदान विभाग इत्यादि हेतु पर्याप्त स्थान होना चाहिए।
6. अध्ययन-अध्यापन हेतु पुस्तकालय का वातावरण शान्त, पर्याप्त प्रकाश एवं शुद्ध वातायन की व्यवस्था युक्त हो।
7. पुस्तकालय भवन में पर्याप्त मात्रा में दिशा-निर्देश विधियों का प्रयोग होना चाहिए, जिससे विभिन्न विभागों एवं सेवा स्थलों पर पाठक आसानी से पहुँच सकें।



HMDC-019

**( ख ) पी॰ एन॰ कौला के अनुसार–**

पी॰ एन॰ कौला ने पुस्तकालय भवन के निर्माण हेतु निम्न सिद्धान्त/विचार प्रस्तुत किये हैं-

1. उपयोगिता, सुविधा, सुगमता, क्षमता तथा सुरक्षा को ध्यान में रखकर पुस्तकालय भवन के लिए स्थान का निर्धारण करें।
2. पुस्तकालय भवन की संरचना कार्यशील प्रकृति की होनी चाहिए।
3. पुस्तकालय भवन में परिवर्तशीलता का गुण होना चाहिए।
4. संग्रहगार, अध्ययन कक्ष, आदान-प्रदान पटल इत्यादि सम्बद्ध विभागों को आस-पास ही होना चाहिए, जिससे कर्मचारी एवं पाठक दोनों को ही सुविधा रहे।
5. भवन निर्माण मान्य मानकों, वास्तुविद, पुस्तकालयाध्यक्ष, भवन निर्माण विशेषज्ञ इत्यादि के सम्मिलित सहयोग से किया जाना चाहिए।
6. पुस्तकों को सुरक्षित रखने, पाठकों को अच्छी तरह अध्ययन करने तथा कर्मचारियों को प्रभावशाली ढंग से अपना कार्य करने के लिए भवन में सभी आवश्यक सुविधाएँ उपलब्ध होनी चाहिए।

भारत में भारतीय मानक संस्थान (अब भारतीय मानकों का ब्यूरो) ने जो मानक प्रकाशित किए हैं, ये मानक पुस्तकालयाध्यक्ष को, कार्यकुशलतापूर्ण तथा सही संरचना का चयन करने के लिए आवश्यक मार्ग-दर्शन प्रदान करते हैं। भारतीय मानक संस्थान द्वारा प्रकाशित पुस्तकालय भवन, फर्नीचर तथा उपकरणों पर भारतीय मानकों एवं विनिर्देशों की सूची निम्नांकित है–

1. पुस्तकालय भवन की संरचना के प्राथमिक तत्वों के प्रयोग का कोड - भारतीय मानक 1553, 1989—IS—1553. 1989
2. पुस्तकालय उपस्कर तथा आवश्यक यंत्र भाग-1—1829 (भाग-1), 1976—IS—1829 भाग-1-1976.
3. पुस्तकालय प्रकाशीकरण के लिए प्रयोगों का कोड- भारतीय मानक, 2671—1966—IS—2672. 1966
4. लकड़ी की शेल्विंग कैबिनेट (समायोज्य प्रकार) - भारतीय मानक, 4116-1988 —IS—4116. 1988.


HMDC-019

5. पारदर्शियों के भडारण तथा उनकी व्यवस्था के लिए प्रयोगों का कोड (माइक्रोफिल्म तथा माइक्रोफिस) - भारतीय मानक 31—30—1985—IS—31-30-1985.

6. रेखाचित्र फाइल करने के उपकरण के प्रयोग का कोड - भारतीय मानक, 2695, 1993, 2695, 1993.

7. धातु के शेल्विंग कैबिनेट (समायोज्य प्रकार) (METAL)- भारतीय मानक, 1883 - 1983 - IS - 1883 - 1983.

8. धातु के शेल्विग कैबिनेट (समायोज्य प्रकार) (STEEL) - भारतीय मानक, 3312, 1984, 3312, 1984.

9. धातु के शेल्विंग कैबिनेट साधारण कार्यालय के उपयोग हेतु - भारतीय मानक, 3312 - 1994 - IS - 3312 - 1984.

10. पुस्तकालय उपस्कर तथा यंत्र भाग-2 (STEEL) भारतीय मानक 1829 (भागं-2), 1993 - IS - 1829 (भ्राग-2) 1993.

11. प्रदर्शन कैबिनेट (संशोधन-1) - भारतीय मानक - 9219 1979 IS - 9210 - 1979.

## 2.6 पुस्तकालय भवन के निर्माण में पुस्तकालयाध्यक्ष एवं वास्तुकार की भूमिका :-

पुस्तकालय भवन के निर्माण में ग्रन्थालयी एवं वस्तुविद दोनों की ही भूमिका महत्वपूर्ण मानी जाती है। ग्रन्थालयी को पुस्तकालय के कार्यों एवं सेवाओं का वास्तविक एवं व्यवहारिक ज्ञान होता हैं। अतः वह पुस्तकालय के विभिन्न विभागों एवं उपविभागों के लिए उचित स्थान का निर्धारण प्रमाणिक ढंग से कर सकता है। वास्तुकार को वास्तुशास्त्र, सत्यापत कला एवं साज-सज्जा का विस्तृत ज्ञान होता है। अतः यदि इन दोनों के सहयोग से पुस्तकालय भवन का निर्माण किया जाये तो पुस्तकालय अपने मूल उद्देश्यों के साथ-साथ कलात्मक स्वरूप को भी प्राप्त कर सकता है। पुस्तकालय को वाह्यरूप से अत्यन्त आकर्षक एवं सुन्दर बनाना वास्तुकार का प्रमुख कर्त्तव्य है तथा पुस्तकालय के आन्तरिक स्वरूप को स्वच्छ, सुन्दर एवं कार्यशील बनाना ग्रन्थालयी का प्रमुख कर्त्तव्य है।

पुस्तकालय भवन की योजना बनाना एक सामूहिक कार्य है, जिसमें पुस्तकालयाध्यक्ष, वरिष्ठ कर्मचारी तथा अन्य सुयोग्य व्यक्ति सम्मिलित रूप से कार्य करते हैं।

HMDC-019

वस्तुतः पुस्तकालयाध्यक्ष का दायित्व आन्तरिक व्यवस्था की योजना को संग्रह के प्रकार एवं इनके लिए स्थान, अध्ययन कक्ष, विविध प्रकार के उपकरणों की आवश्यकता, वर्तमान एवं भविष्य की समस्त आवश्यकताओं, सभी कर्मचारियों एवं विविध प्रकार की सेवाओं की आवश्यकताओं को निर्धारित करना होता है। जबकि वास्तुशास्त्री की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं निर्णायक होती है क्योंकि वह उपलब्ध संसाधनों को ध्यान में रखकर पुस्तकालय भवन के आन्तरिक एवं बाह्य दोनों रूपों को सुन्दर एवं आकर्षित बनाने के साथ-साथ पुस्तकालयाध्यक्ष द्वारा बताई गयी आवश्यकता के अनुसार अपनी योजना को मूर्त रूप प्रदान करता है। पुस्तकालय भवन सुन्दर तभी होगा, जब वास्तुशास्त्री एवं पुस्तकालयाध्यक्ष के बीच गहन मंत्रणा हो, एवं वे एक-दूसरे को अच्छी तरह समझें। इसके इतर अन्तिम योजना बनाने से पूर्व अन्य विशेषज्ञों यथा- आन्तरिक सजावट, उपस्कर निर्माण, प्रकाश इत्यादि से भली-भाँति परामर्श कर लेना आवश्यक है। अतः एक आदर्श पुस्तकालय भवन पुस्तकालयाध्यक्ष तथा वस्तुशास्त्री की सम्मिलित प्रयास से ही सम्भव है।

## 2.7 पुस्तकालय भवन निर्माण में पंचम सूत्र भूमिका :-

पुस्तकालय भवन के निर्माण की रूपरेखा तैयार करते समय डॉ॰ एस॰ आर॰ रंगनाथन द्वारा बताये गये पुस्तकालय विज्ञान के पंचम सूत्र "पुस्तकालय एक वर्द्धनशील संस्था है।" को सदैव ध्यान में रखना चाहिए। इस सूत्र के अनुसार समय, परिस्थिति एवं आवश्यकता में परिवर्तन के फलस्वरूप पुस्तकालय के प्रमुख आधार स्तम्भों (पुस्तक, पाठक, कर्मचारी, भवन इत्यादि) में वृद्धि होना स्वाभाविक है। अतः योजना के प्रारम्भ से ही यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि भविष्य में आवश्यकता पड़ने पर पुस्तकालय के आन्तरिक एवं बाह्य क्षेत्र में विस्तार किया जा सकें।

## 2.8 पुस्तकालय उपस्कर एवं उपकरण :-

जिस प्रकार किसी पुस्तकालय के अस्तित्व के लिए पुस्तक, पाठक, कर्मचारी एवं भवन अत्यन्त आवश्यक माने जाते हैं। ठीक उसी प्रकार वर्तमान समय में पुस्तकालयों के लिए उपस्कर एवं उपकरण भी महत्वपूर्ण माने जाते हैं। पुस्तकालय के विभिन्न कार्यों एवं सेवाओं में उपस्कर एवं उपकरणों का प्रयोग किया जाता है, जैसे -

— पाठकों को बैठने एवं अध्ययन करने के लिए उपस्कर

— कर्मचारियों के बैठने एवं काम करने के लिए उपस्कर

— पाठ्य-सामग्रियों को रखने के लिए उपस्कर

— उपकरणों इत्यादि को रखने के लिए उपस्कर

— अन्य विविध कार्यों के लिए आवश्यक उपस्कर

अतः स्पष्ट है कि वर्तमान में पुस्तकालय के लगभग समस्त क्रिया कलापों में फर्नीचर एवं उपकरणों का उपयोग प्रमुखता के साथ किया जा रहा है। इनकी सहायता से जहाँ एक ओर पाठ्य-सामग्रियों की उपयोगिता में वृद्धि हो रही है, वहीं दूसरी ओर इसकी सहायता से पाठक एवं कर्मचारी दोनों ही अपने क्रियाकलापों में सुविधा महसूस करते हैं। डॉ0 रंगनाथन ने इसकी महत्ता को ध्यान में रखकर कहा है कि "पुस्तकालय के उपस्कर एवं उपकरण पुस्तकालय अधिकारियों एवं प्राधिकरण की पुस्तकालय उन्नति में अभिरूचि को प्रदर्शित करते हैं।"

## 2.9 पुस्तकालय हेतु विविध उपस्कर एवं उपकरण तथा मानकः-

पुस्तकालय के विभिन्न प्रकार के क्रिया कलापों के लिए विभिन्न प्रकार के उपस्कर एवं उपकरण प्रयोग में लाये जाते हैं। पुस्तकालय उपस्कर एवं उपकरणों के लिए कुछ मानक भी निर्धारित किये गये हैं। अगर इन मानकों का प्रयोग सही ढंग से किया जाय तो पुस्तकालय क्रियाविधियों को अत्यन्त सरल एवं सुगम बनाया जा सकता है। पुस्तकालय हेतु विविध उषस्कर एवं उपकरण तथा उनके मानक पर विस्तृत विवरण नीचे दिया जा रहा है -

### 2.9.1 निधानी -

पुस्तकालय में पुस्तकों को रखने के लिए निधानियों का प्रयोग किया जाता है, वर्तमान में स्टील की निधानियों का सर्वाधिक प्रयोग किया जाता है। यह मजबूत एवं टिकाऊ तथा दो तरफा (दोनों तरफ से पुस्तक रखने की व्यवस्था) भी होती है। इन निधानियों की ऊँचाई 7 फीट, चौड़ाई 3 से 4 फीट तथा गहराई 8 इंच होती है। दो तरफा निधानियों की गहराई 1 फीट 6 इंच होती है।

सभी प्रकार के पाठ्य सामग्रियों का भंडारण के स्थान को स्टैक कहते हैं। वर्तमान एवं भविष्य में होने वाले वृद्धि को ध्यान में रखते हुए स्टैक का क्षेत्रफल निर्धारित करना आवश्यक है। सामान्यतः 85 सेमी॰ लम्बाई वाली मानक पुस्तक निधानी में लगभग 25 पुस्तकें तथा पत्रिकाओं में 15 सजिल्द सम्पुट आ सकते हैं। लगभग 195 सेमी॰ ऊंचाई वाले किसी मानक पुस्तक निधानी में 6 फलक पुस्तक तथा पत्रिकाओं के लिए निर्धारित

है। प्रत्येक फलक की मानक गहराई 25 सेमी॰ होती है। दो अलग-अलग निधानियों के मध्य में 1.30 मीटर की दूरी निर्धारित की गयी है। जिससे दोनों निधानियों के लिए 80 सेमी॰ का रास्ता उपलब्ध होगा, जो कि दोनों पंक्तियों के उपयोक्ता के लिए पर्याप्त है।

### 2.9.2 आलमारी -

पुस्तकालय के अभिलेखों तथा स्टेशनरी के सामानों के रखने हेतु आलमारियाँ प्रयोग की जाती हैं। यह लकड़ी एवं स्टील दोनों रूपों में प्रचलित हैं। यह बने - बनाये बाजार में उपलब्ध हो जाते हैं।

### 2.9.3 मेज एवं कुर्सी -

पुस्तकालय में पाठकों तथा कर्मचारियों की सुविधा हेतु मेज एवं कुर्सियों की व्यवस्था की जाती है। इनका प्रयोग अत्यधिक एवं लगातार होता है। अतः इसे मजबूत, टिकाऊ, सुन्दर एवं आरामदायक होना चाहिए। इनके लिए निम्न मानक निर्धारित किये गये हैं - अध्ययन कक्ष हेतु मेज की लम्बाई - 6 फीट 6 इंच, चौड़ाई - 3 फीट, मोटाई - 2 इंच, ऊँचाई - 75 सेंटीमीटर, कुर्सी की ऊँचाई (बैठने के स्थान तक) 45 सेमी॰ चौड़ाई - 43 से॰मी॰ कुर्सी के आमने-सामने की चौड़ाई - 48 सेमी॰ होना चाहिए।

आदान-प्रदान का पटल अंग्रेजी के एल॰ (L) अक्षरनुमा या सीधा होना चाहिए जिसकी लम्बाई, चौड़ाई एवं ऊँचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए।

### 2.9.4 सूची पत्रक मंजूषा -

सूची पत्रकों को रखने के लिए सूची पत्रक मंजूषा (कैबिनेट) का प्रयोग किया जाता है। यह वर्तमान में 24 खाने वाली कैबिनेट के रूप में अत्यधिक प्रचलित हैं। यह कैबिनेट जमीन से 2 फीट ऊँचा होता है। इस कैबिनेट के प्रत्येक खाने की गहराई - 0.35 मीटर, चौड़ाई - 0.13 मीटर तथा ऊँचाई 0.095 मीटर होती है।

### 2.9.5 पत्र-पत्रिका, पुस्तक एवं पैम्फलेट प्रदर्शन रैक -

पुस्तकालय में क्रय की गई नवीन पत्र-पत्रिका एवं पुस्तकों से पाठकों को परिचित कराने तथा इनका प्रचार-प्रसार करने हेतु प्रदर्शनी रैक का प्रयोग किया जाता है। पैम्फलेट के प्रदर्शन हेतु विशेष प्रकार के रैक प्रयोग में लाये जाते हैं।

पत्रिका प्रदर्शन रैक प्रमुख रूप से तीन प्रकार के होते हैं—

1. पिज़न होल

2. सीढ़ी अथवा छज्जानुमा

3. संदूकनुमा

पिज़न क्षेत्र में दो भाग होते हैं, जिनकी ऊँचाई एवं चौड़ाई क्रमशः 225 सेमी॰ एवं 180 सेमी॰ होती है। इसके ऊपर के खानों में गहराई 30 सेमी॰ तथा नीचे के खानों की गहराई 45 सेमी॰ तक होती है। वस्तुतः यह एक तरफा छोटी अलमारी की भाँति होती है। प्रदर्शन रैक के रूप में प्रयोग की जाने वाली दूसरा प्रमुख स्वरूप सीढ़ी नुमा रैक है। यह घरेलू सीढ़ी की भाँति होती है। जो 90 सेमी॰ तक लम्बी हो सकती है। इसकी प्रत्येक सीढ़ी लगभग 5 सेमी॰ गहरी एवं 15 सेमी॰ तक ऊँची होती है। यह सामान्यतः एक तरफा प्रचलित होती है। यदि ऐसे दो को पीछे से मिला दिया जाए तो यह दो तरफा रैक की भाँति कार्य करता है इस प्रकार के प्रदर्शन रैक लगभग 5 सीढ़ियों का होता है। जिस पर लगभग 25 पत्रिकाओं का प्रदर्शन किया जा सकता है। प्रदर्शन रैक के रूप में संदूकनुमा रैक सर्वाधिक प्रचलित एवं लोकप्रिय है। इस रैक में लगभग 5 ऊर्ध्वाधर फलक होते हैं। जिसे ऊपर से लकड़ी के ढलाननुमा तख्त से ढंक दिया जाता है। इसका ढलान 30°डिग्री तक होती है। यह तख्त नीचे से थोड़ा ऊँचा कर दिया जाता है ताकि प्रदर्शित की गयी पत्रिका उस पर टिकी रहे। यह रैक 195 से 225 सेमी॰ तक ऊंचा, 90 से 120 सेमी॰ तक चौड़ा तथा 45 सेमी॰ तक गहरा होता है जिस पर एक बार में 25 पत्रिकाओं का प्रदर्शन किया जा सकता है।

### 2.9.7 अन्य उपस्कर एवं उपकरण -

उपरोक्त उपस्कर एवं उपकरणों के अतिरिक्त अन्य कई प्रकार के उपस्कर एवं उपकरण प्रयोग में लाये जाते हैं। जिनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है -

1. पुस्तकालय नियम पट्टिका
2. पुस्तकालय नोटिस बोर्ड
3. परिचालन पटल
4. एटलस सहायक
6. पुस्तक वाहन
7. फलक प्रदर्शक
8. समाचार - पत्र स्टैण्ड इत्यादि

HMDC-019

## 2.9.8 प्रमुख उपकरण -

आधुनिक पुस्तकालयों में कार्यों एवं सेवाओं में और अधिक कुशलता, मितव्ययिता एवं गतिशीलता लाने हेतु अनेक प्रकार के यांत्रिक एवं विद्युत उपकरणों का उपयोग किया जाता है, जिनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है -

(क) फाइलिंग उपकरण —

पुस्तकालय में बहुत से कागजात, पत्र अभिलेख, कार्य इत्यादि अनेक महत्वपूर्ण सामग्रियाँ होती हैं, जिन्हें सुव्यवस्थित ढंग से फाइलिंग करना अत्यन्त आवश्यक है। फाइलिंग हेतु वैज्ञानिक एवं तर्कसंगत उपकरणों का प्रयोग किया जाना चाहिए, ताकि प्रपत्रों को भविष्य के लिए सुरक्षित रखा जा सके तथा सुविधाजनक पुनर्प्राप्ति भी सम्भव हो सकें। वर्तमान में पुस्तकालयों के इन महत्वपूर्ण प्रलेखों को फाइलिंग करने हेतु अनेक आकार-प्रकार एवं स्वरूपों में उपकरण उपलब्ध एवं प्रचलित हैं; यथा -

1. पत्र व्यवहार से सम्बन्धित प्रपत्रों की फाइलिंग हेतु स्टील या लकड़ी के फाइलिंग कैनिबनेट, प्रचलित हैं। कैबिनेट खिंचने वाले दराजों से युक्त होते हैं। इस फाइलिंग सिस्टम में अनेक कैबिनेट, जो ऊर्ध्वाधर व्यवस्थित होते हैं, में प्रपत्रों की फाइलिंग की जाती हैं। यह एक तरफ से ही खुलता है। अतः प्रपत्र सुरक्षित रहते हैं।

2. पुस्तकालय में बहुत से पैम्फलेट एवं खुले हुए कागजात भी प्रयोग किए जाते हैं। इनकी फाइलिंग हेतु अनेक प्रकार के पैम्फलेट पेटिकाएँ प्रचलित हैं, यथा - संदूकनुमा पेटिका, निधानीनुमा पेटिका, अलमारीनुमा पेटिका इत्यादि।

3. सूची-पत्रकों को व्यवस्थित करने हेतु सूची-पत्रक मंजूषा का प्रयोग किया जाता है। यह लकड़ी या स्टील की होती है। इस सूची-पत्रक मंजूषा में 4 से लेकर 60 दराज तक होते हैं। इस मंजूषा को फर्श से लगभग 60 सेमी ऊँचाई वाले स्टैण्ड पर रखना चाहिए जिससे पाठक सुविधानुसार सूची पत्रकों का अवलोकन कर सकें। इस मंजूषा के प्रत्येक दराज में एक स्टील की छड़ लगी होती है जिसमें सूची पत्रक को फंसा कर, इस छड़ को दराज में विधिपूर्वक लॉक कर दिया जाता है, जिससे पत्रक सुरक्षित भी रहते हैं, साथ ही उनका अवलोकन करना भी सरल हो जाता है। इस सूची पत्रक मंजूषा के प्रत्येक दराज के अन्दर की चौड़ाई-12.8 सेमी॰ ऊँचाई - 7.8 सेमी॰ तथा लम्बाई - 40 सेमी॰ होती है। जिसमें 12.5 सेमी॰ x7.5 सेमी के सूची पत्रक आसानी से व्यवस्थित हो जाते हैं।

4. आधुनिक पुस्तकालयों में सूक्ष्म स्वरूप वाले प्रलेख भी प्रचलित हैं। ऐसे प्रलेखों अथवा प्रपत्रों का भंडारण ऐसे स्थान पर किया जाना चाहिए जहाँ न अधिक तापमान हो और न अधिक नमी हो। धूप-मिट्टी का भी प्रभाव इन सूक्ष्म प्रलेखों पर पड़ता है। अतः भंडारण स्थान का वातावरण धूल-मिट्टी रहित होना चाहिए। इनकी फाइलिंग करने हेतु इनके आकार - प्रकार के आधार पर अनेक स्वरूपों में दराज (कैबिनेट), रोलडैक्स एवं फाइलिंग डिब्बे प्रचलित हैं। इन सूक्ष्म प्रलेखों की प्रकृति एवं सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए इन्हें लिफाफों, व्यक्तिगत कार्टन, स्पूल या कागज में लपेट कर दराजों या डिब्बों मे भंडारित किया जाता है।

**( ख ) सूक्ष्म प्रलेख पठन उपकरण -**

आधुनिक पुस्तकालयों में सूक्ष्म स्वरूप वाले प्रलेख जैसे- स्लाइडें, माइक्रोफिल्म, माइक्रोफिश, माइक्रोकार्ड, ऐपर्चर कार्ड इत्यादि भी अत्यन्त प्रचलित एवं लोकप्रिय हो गये हैं। इन सूक्ष्म स्वरूप वालें प्रलेखों में अन्तर्निहित विषय सामग्री को पढ़ने के लिए विशिष्ट प्रकार के उपकरण प्रयोग में लाये जाते हैं जैसे - माइक्रोफार्म रीडर, रीडर प्रिंटर, प्रोजेक्टर इत्यादि। इस प्रकार के उपकरण आजकल अनेक कम्पनियों द्वारा निर्मित किये जा रहे हैं। पुस्तकालय अपनी क्षमता एवं आवश्यकता के अनुसार उनका चयन कर, क्रय कर सकते हैं।

**( ग ) प्रतिलिपिकरण उपकरण -**

पुस्तकालय के कार्यालयीन क्रियाकलापों, पाठकों के सुविधार्थ एवं प्रलेख संग्रहणार्थ अनेक प्रपत्रों अथवा प्रलेखों की प्रतिलिपि की आवश्यकता होती है। यथा-

1. पुस्तकालय हेतु पुस्तकों का चयन, क्रय आदेशन, पत्र व्यवहार के लिए अनेक प्रतियाँ आवश्यक होती हैं।
2. दुर्लभ एवं ऑउट ऑफ प्रिंटेड ग्रन्थों की कई प्रतियाँ बनाने की आवश्यकता पड़ती है।
3. पाठको एवं शोधकर्ताओं द्वारा किसी प्रलेख की प्रतियों की मांग किए जाने पर प्रतियाँ तैयार करानी पड़ती हैं।

अतः किसी भी उद्देश्य के लिए आवश्यक प्रतियाँ तैयार करने हेतु वर्तमान मे अनेक उपकरण प्रचलित हैं जिनकी सहायता से किसी भी प्रलेख की अनेक प्रतियाँ सुविधाजनक ढंग से सरलतापूर्वक तैयार की जा सकती हैं। पुस्तकालय अपनी सुविधा एवं आवश्यकतानुसार इन उपकरणों को क्रय कर सकता है।

HMDC-019

**( घ ) सूक्ष्म प्रलेख पठन उपकरण -**

उपरोक्त उपकरणों के अतिरिक्त पुस्तकालय द्वारा संचालित कार्यों एवं सेवाओं के लिए अन्य बहुत से लाभदायक उपकरण भी प्रयोग किए जाते हैं इनमें से कुछ प्रमुख उपकरण निम्नलिखित हैं-

1. टंकण मशीन
2. कम्प्यूटर
3. जिल्द-साजी उपकरण
4. धूल-मिट्टी हटाने वाले उपकरण
5. दूरभाष-यंत्र
6. फोटो स्टेट मशीन
7. प्रिंटर, स्कैनर,
8. कूलर, एयर कण्डिशनर इत्यादि

## 2.10 सारांश :

प्रस्तुत अध्याय से यह स्पष्ट होता है कि किसी पुस्तकालय विशेष के लिए पुस्तक, पाठक एवं कर्मचारी ही महत्वपूर्ण नहीं होते हैं, बल्कि पुस्तकालय के अस्तित्व हेतु कार्यशील भवन भी उतना ही महत्वपूर्ण होता है, जितना कि पुस्तक, पाठक एवं कर्मचारी।

जिस प्रकार अस्पताल के लिए विशिष्ट भवन; स्कूल, कालेज के लिए विशिष्ट भवन तथा किसी बैंकिग संस्था के लिए विशिष्ट भवन की आवश्यकता पड़ती है, ठीक उसी प्रकार पुस्तकालय के समस्त क्रिया-कलापों के सुचारू संचालन हेतु भी एक विशिष्ट प्रकार के कार्यशील भवन की आवश्यकता पड़ती है।

इस अध्याय में यह भी स्पष्ट किया गया है कि पुस्तकालयों के लिए उपस्कर एवं उपकरणों का प्रयोग भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। वर्तमान समय में उपस्कर एवं उपकरणों के बिना किसी भी तरह के पुस्तकालय की कल्पना ही नहीं की जा सकती है, अतः यह कहा जा सकता है कि पुस्तकालय की बाह्य सुन्दरता को निखारने में जिस प्रकार का योगदान वास्तुकार एवं अभियंता का होता है, ठीक उसी प्रकार का योगदान पुस्तकालय के आन्तरिक सुन्दरता को बढ़ाने में उपस्कर एवं उपकरणों का होता है। जिस

प्रकार एक पुस्तकालय कार्यशील भवन के अभाव में अपने निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त नहीं कर सकता है, ठीक उसी प्रकार उपस्कर एवं उपकरणों के बिना एक पुस्तकालय अपने कार्यों एवं सेवाओं का सफल संचालन नहीं कर सकता है।

## 2.11 अभ्यास कार्य :-

1. पुस्तकालय भवन से आप क्या समझते हैं ? पुस्तकालय भवन के निर्माण के ग्रन्थावली एवं वास्तुकार की भूमिका को स्पष्ट करें।
2. पुस्तकालय भवन की संरचना को विस्तार पूर्वक समझायें।
3. पुस्तकालय के भौतिक नियोजन को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिए।
4. पुस्तकालय भवन सम्बन्धी सिद्धान्तों एवं मानकों को स्पष्ट करें।
5. पुस्तकालय उपस्कर एवं उपकरण पर एक निबन्ध लिखिए।

## 2.12 सन्दर्भ ग्रन्थ :-

1. त्रिपाठी, एस॰ एम॰ (et. al.) (1999), ग्रंथालय प्रबन्ध, आगराः वाई॰ के॰ पब्लिशर्स।
2. सिंह, दिनेश (2000), ग्रंथालय विज्ञान की रूपरेखा, पटना : नोवेल्टी एण्ड कम्पनी।
3. माथुर, एल॰ आर॰ (et. al.) (2003), लाइब्रेरियन परीक्षा मैनुअल, नई दिल्ली : एच॰ जी॰ पब्लिकेशन।
4. Indira Gandhi National Open University (2003). School of Social Sciences. BLIS-02 : Physical Planning of Library. New Delhi : IGNOU.

# इकाई - 3 : मानव संसाधन विकास एवं कार्मिक नियोजन

## इकाई की रूपरेखा


3.0 उद्देश्य

3.1 विषय परिचय

3.2 मानव संसाधन विकास

 3.2.1 मानव संसाधन विकास क्या है?

 3.2.2 मानव संसाधन विकास : विशेषतायें

 3.2.3 मानव संसाधन विकास : आवश्यकता तथा उद्देश्य

3.3 मानव संसाधन प्रबन्धन

3.4 मानव संसाधन विकास प्रणाली

3.5 मानव संसाधन विकास तथा भारतीय पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्र

3.6 कार्मिक नियोजन

 3.6.1 कार्मिक नियोजन : अर्थ एवं परिभाषा

 3.6.2 कार्मिक नियोजन : आवश्यकता एवं उद्देश्य

3.7 कार्मिक नियोजन प्रक्रिया

3.8 पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों मे कार्मिक नियोजन

3.9 सारांश

3.10 अभ्यास - कार्य

3.11 सन्दर्भ ग्रन्थ


## 3.0 उद्देश्य

मानव संसाधन वह शक्ति है, जो अन्य सभी संसाधनों को सक्रिय कर संस्था से संसाधनों को उपयोक्ताओं के लिए उपयोगी और सर्वोत्तम सेवाओं के संचालन में सहायक सिद्ध होती है। प्रस्तुत इकाई में मानव संसाधन विकास की अवधारणा, प्रासंगिकता, मूल्य सीमाओं, पुस्तकालय तथा सूचना केन्द्रों में इसके सिद्धान्तों के प्रयोग से प्राप्त लाभों पर प्रकाश डाला गया है। इसी इकाई में आप मानव शक्ति नियोजन की अवश्यकता, उद्देश्य, महत्त्व तथा पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों के लिए कार्मिक नियोजन से अवगत होंगे।

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप मानव संसाधन विकास, कार्मिक नियोजन, जो मानव संसाधन विकास का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अंग है, के विभिन्न पहलुओं की जानकारी में दक्षता प्राप्त कर सकेंगे। पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों के लिए मानव संसाधन विकास के सिद्धान्त तथा कार्मिक नियोजन के महत्व से भी अवगत हो सकेंगे।

## 3.1 विषय - परिचय

मानव संसाधनों के बिना किसी संगठन या संस्था का कोई अस्तित्व नहीं होता है। मानव ही संगठन में मूल्यों व संस्कृति का निर्माण करते हैं, संगठन को ऊँचाईयाँ प्रदान करते हैं तथा जीवन्तता का अहसास भी कराते हैं। मानव संसाधन प्रबंधन, प्रबंधन के इसी मानव आयाम से सम्बन्धित है। चूंकि प्रत्येक संगठन व्यक्तियों से निर्मित होता है। अतः व्यक्तियों की सेवायें प्राप्त करना, उनके कौशल एवं क्षमताओं को विकसित करना, उन्हें उच्च स्तरीय कार्य करने के लिए प्रेरित करना तथा संगठन के प्रति उनकी निष्ठा बनाये रखना संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए आवश्यक होता है। मानव संसाधन विकास दर्शन, अधिक उत्पादकता तथा उत्पादों एवं सेवाओं की गुणवत्ता में प्रमुख तथा बहुमूल्य योगदानकर्ता के रूप में मानवमात्र को सम्मान तथा मूल्य प्रदान करता है।

मानव संसाधन से आशय पुस्तकालय में विभिन्न कार्यों को करने हेतु कार्मिक गुण है। पुस्तकालय के लिए कोई कर्मचारी उसका आवश्यक अंग होता है। कर्मचारियों का पुस्तकालय के कार्यों में सहयोग प्राप्त करने तथा कर्मचारियों के हितों की रक्षा करने के लिए उनका प्रबन्ध किया जाना आवश्यक है, जिसे मानव संसाधन प्रबन्धन कहते हैं। मानव संसाधन प्रबन्धन, प्रबन्धन की एक ऐसी कला है, जो कर्मचारियों की रूचि, मानसिक मनोवृत्ति, कार्य की क्षमता आदि के आधार पर निर्धारित होती है। वर्तमान में पुस्तकालयों में मानव संसाधन प्रबन्धन का अत्यधिक महत्त्व है। मानव संसाधन विकास एक ऐसी प्रक्रिया है, जो किसी संगठन में निरंतरता के आधार पर नवीन कौशल और क्षमताओं को प्राप्त करने में कर्मचारियों की सहायता करती है।

प्रत्येक संगठन का प्रबंधन एवं संचालन व्यक्तियों के द्वारा ही किया जाता है। कोई भी संगठन व्यक्तियों के बिना जीवित नहीं रह सकता तथा संगठन की गुणवत्ता व प्रभावशीलता इसमें कार्यरत् व्यक्तियों पर निर्भर करती है। चूंकि संगठन के सभी संसाधनों में मानव संसाधन सबसे महत्वपूर्ण है, इसलिये संख्या और गुणवत्ता को दृष्टिगत रखते हुए उपयुक्त व्यक्ति को पाने की योजना बनाना एक आवश्यक प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया के अन्तर्गत सुयोग्य तथा सामर्थ्यवान कर्मचारियों को इकट्ठा करने में क्रियाकलापों का

HMDC-019

सम्पूर्ण क्रम सम्मिलित है। विभिन्न क्रियाकलापों के सम्पूर्ण क्रम को ही कार्मिक नियोजन कहते हैं। कार्मिक नियोजन प्रक्रिया में जनशक्ति की आवश्यकताओं, भर्ती तथा चयन, नई भर्ती हुए व्यक्तियों का पदारोपण तथा तैनाती, ज्ञान तथा कौशल का विकास, निष्पादित कार्य का मूल्यांकन किया जाता है और इस बात पर विशेष बल दिया जाता है कि संगठनात्मक विकास की भावी आवश्यकताओं को प्राप्त करने के हेतु पर्याप्त संख्या में तथा गुणवत्ता वाले कर्मचारियों को इकट्ठा किया जाना चाहिए।

वर्तमान समय में पुस्तकालय तथा सूचना केन्द्रों में अत्यधिक सूचना प्रौद्योगिकी का अनुप्रयोग हो रहा है, जिसके लिए व्यावसायिक शिक्षण एवं प्रशिक्षण के साथ-साथ सूचना प्रौद्योगिकी एवं प्रबन्धन तकनीकों में दक्ष व्यक्तियों का समूह ही इसके लिए उपयुक्त हो सकता है। अतः पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों में कार्मिक नियोजन पर गम्भीरतापूर्वक विचार तथा विशेष सावधानी एवं समुचित ध्यान देने की जरूरत है।

## 3.2 मानव संसाधन विकास -

मानव संसाधन से आशय है कि किसी भी संगठन में विभिन्न कार्यों को करने हेतु कार्मिकों से होता है। संगठन के लिए कोई भी कर्मचारी उसका एक आवश्यक अंग होता है। कर्मचारियों का संगठन के कार्यों में सहयोग प्राप्त करने तथा कर्मचारियों के हितों की रक्षा करने के लिए उनका प्रबन्ध किया जाना आवश्यक है, जिसे मानव संसाधन प्रबन्धन कहते हैं। मानव संसाधन प्रबन्धन, प्रबन्धन की एक ऐसी विद्या है,जो कर्मचारियों की रूचि, मानसिक मनोवृत्ति, कार्य की क्षमता आदि के आधार पर निर्धारित होती है।

मानव संसाधन से तात्पर्य किसी संस्था या उपक्रम में नियुक्त एवं कार्यशील समस्त कर्मचारियों से है जो संस्था का उपक्रम के संचालन एवं वस्तुओं के उत्पादन में अपनी सेवायें प्रदान करते हैं, जबकि विकास का आशय सामान्यतः कर्मचारियों में विभिन्न प्रकार की क्षमताओं एवं योग्यताओं के विकास से है, जो अपने वर्तमान अथवा किसी भावी कार्य को करने के लिए आवश्यक होती है। अतः मानव संसाधन विकास, विकास की एक ऐसी नियोजित प्रक्रिया है, जिसके द्वारा व्यक्ति अपनी भूमिकाओं तथा उत्तरदायित्वों का श्रेष्ठ निष्पादन करने के लिए अपने कार्य, गुणों, कौशल, योग्यताओं व क्षमताओं का विकास करता है तथा आन्तरिक संभावनाओं में अभिवृद्धि करता है। यह कर्मचारियों के ज्ञान, कौशल, प्रवृत्तियों, प्रतिभाओं, कार्य-रूचियों आदि मे वृद्धि करने तथा उन्हें अपनी भूमिकाओं को कुशलतापूर्वक निभाने की योग्यता विकसित करने की


HMDC-019

प्रणाली है। यह कर्मचारी विकास की एक व्यापक एवं सार्वभौमिक प्रक्रिया है। एक संगठन के सभी स्तरों पर मानव संसाधन विकास प्रत्येक समूह तथा व्यक्ति के लिए आवश्यक है।

## 3.2.1 मानव संसाधन विकास क्या है ?

ज्ञान, कौशल, मानसिकता, समर्पण, मूल्य और संगठन के लोगों की पसन्द का सम्मिलित रूप ही मानव संसाधन है। विकास का तात्पर्य वर्तमान एवं भविष्य के कार्यों को निभाने में समर्थ होने से है। मानव संसाधन विकास का लक्ष्य, औपचारिक एवं अनौपचारिक माध्यमों द्वारा कर्मचारियों के क्षमता एवं उत्तरदायित्वबोध की वृद्धि करना है। कोई भी प्रभावशाली मानव संसाधन विकास प्रोग्राम संगठन की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। किसी भी संगठन के लिए वास्तविक संसाधन मानव ही होता है। 'यदि उन्हें भलीभाँति उपयोग किया जाये तो संगठन सफलता के शिखर तक पहुँच सकता है। संगठन के क्रियाकलाप उसके पूर्व निर्धारित उद्देश्य के अनुरूप होता है, निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु संगठन द्वारा भौतिक, वित्तीय और मानव संसाधन का अनुप्रयोग किया जाता है। संगठन का उद्देश्य व्यर्थ होगा, अगर लोग (कर्मचारी) उसके दर्शन को न समझे और अपने हृदय से प्राप्त करने का प्रयास न करे। अतः संगठन जीवित एवं विकासशील रहने के लिए लोगों पर आश्रित रहते हैं, ठीक उसी प्रकार लोग भी संगठन पर निर्भर रहते हैं।

मानव संसाधन प्रबन्धन का आशय लोगों का सही ढंग से उपयोग, संगठन एवं व्यक्तिगत उद्देश्यों की पूर्ति से है। यह कार्यस्थल पर लोगों के प्रबन्धन से सम्बन्धित है, जिससे वे संगठन हेतु सर्वोत्तम प्रदान कर सके। अतः मानव संसाधन विकास एक धारणा या विचार है, जो कि मानव संसाधन प्रबन्धन हेतु उपयोग में लाया जाता है। इसका उद्देश्य मानव संसाधन का सम्पूर्ण विकास होता है और जिसके परिणाम स्वरूप कर्मचारियों के हितों, संगठन एवं समाज को लाभ होता है। यह विश्वास किया जाता है कि मानव हमेशा उत्तम कार्य के लिए सामर्थय रखता है। संगठन के उद्देश्य के प्रति कर्मचारी का समर्पण प्राप्त करना ही सफलता का द्योतक है। प्रबन्धन की ओर से विशेष एवं सार्थक प्रयास कर्मचारियों का विश्वास प्राप्त करने के लिये किये जाने चाहिए। प्रबन्धन एवं कर्मचारी दोनों के बीच मधुर सम्बन्ध ही विकास का मार्ग प्रशस्त कर सकता है।

मानव संसाधन विकास के मानवीय धारणा / विचार निम्न हैं —



HMDC-019

1. लोग अच्छे एवं आश्चर्यजनक कार्य कर सकते हैं।
2. उन्हें सक्रिय करना, उन पर विश्वास करना एवं उन्हें सामर्थ्य युक्त बनानाः उन्हें संसाधन, सम्पत्ति के रूप में मानना।
3. सामर्थ्य को केन्द्रित करते हुए उनकी कमियो को दूर करना।
4. उनकी आवश्कताओं एवं अभिलाषा को संगठन के उद्देश्य के परिप्रेक्ष्य में एकीकृत किया जाना, जिससे अच्छे परिणाम प्राप्त हो सके।
5. संगठनात्मक संस्कृति यथा - खुलापन, विश्वसनीयता, आत्मगौरव, सहभागिता, सहयोग आदि का प्रोत्साहन करना।

प्रो॰ टी॰ वी॰ राव के अनुसार - मानव संसाधन विकास एक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा संगठन के कर्मचारियों को निरन्तर एवं योजनाबद्ध सहायता एवं सुविधा प्रदान की जाती है, जिससे :-

1. उनके वर्तमान एवं आगामी भूमिका से सम्बन्धित कार्यों के निष्पादन हेतु उनकी क्षमताओं तथा कौशल में प्रभावशाली बढ़ावा मिलता है,
2. सामान्य क्षमताओं के विकास के लिए उनके स्वयं के लिए अथवा / तथा संगठनात्मक विकास के पूर्ति हेतु उनकी अंतर्निहित शक्तियों को खोजने तथा उनके दोहन के लिए सहायता मिलती है,
3. संगठनात्मक संस्कृति का विकास, जिसमें अधिकारी एवं अधीनस्थ, सम्बन्ध, सामूहिक कार्य, उप इकाईयों में दृढ़ सहयोग होता है, तथा व्यावसायिक कल्याण और कर्मचारियों में प्रेरणा, आत्मगौरव का योगदान भी सम्मिलित होता है।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि मानव संसाधन का उद्देश्य लोगों का सामर्थ्य का विकास करना है, जिससे वे संगठन के कार्यों को भली-भाँति कर सकें।

### 3.2.2 मानव संसाधन विकास : विशेषतायें

मानव संसाधन विकास एक प्रक्रिया है, जो संगठन के कर्मचारियों में उनके कौशल तथा उनमें प्रतिस्पर्धा की भावना की निरन्तर वृद्धि में सहायता करता है, जिससे संगठन का विकास होता है। इसकी प्रमुख विशेषताएें निम्न हैं -

1. मानव संसाधन विकास एक प्रणाली है, जिसमें विभिन्न सहअस्तित्व भाग या उपप्रणाली होते हैं। किसी भी उपप्रणाली में परिवर्तन होने से अन्य उपप्रणालियों में भी परिवर्तन होता है।

2. मानव संसाधन विकास एक नियोजित प्रक्रिया है, जिसके द्वारा लोगों का विकास नियोजित एवं क्रमबद्ध तरीके से होता है। यह अनवरत प्रक्रिया है।

3. मानव संसाधन विकास सामर्थ्य वृद्धि में सहायता करता है। यह मुख्य रूप से चार स्तरों में सामर्थ्य वृद्धि में सहायता करता है। ये चारों प्रमुख स्तर - व्यक्तिगत / स्वय स्तर, पारस्परिक स्तर, सामूहिक स्तर, संगठनात्मक स्तर है।

4. मानव संसाधन विकास एक अन्तर्विषयी विचार/धारणा है। इसमें विभिन्न विषयों तथा मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, मानवविज्ञान, अर्थशास्त्र आदि के विचार,अवधारणा, सिद्धान्त, व्यवहार सम्मिलित हैं।

5. मानव संसाधन विकास जीवन के स्तर को ऊँचा करता है।

## 3.2.3 मानव संसाधन विकास : आवश्यकता तथा उद्देश्य -

संगठन में कार्यरत् प्रत्येक कर्मचारी को उसकी योग्यतानुसार विकास के अवसर मिलना चाहिए, जिससे कर्मचारियों में संतुष्टि की भावना उत्पन्न हो सके और यही कर्मचारी प्रबन्धन की सफलता का आधार है। कर्मचारियों की इच्छाओं के पूर्ण होने पर संतुष्ट होंगे वे और लगन के साथ अपना सर्वोत्कृष्ट देने का प्रयत्न करेंगे जो कि मानव संसाधन विकास कार्यक्रमों से ही सम्भव है।

अतः संगठन के विकास के प्रत्येक क्रम में सफलता प्राप्त करने के लिये मानव संसाधन विकास योजना और नीति पर विशेष महत्त्व देना आवश्यक है। कर्मचारियों के कौशल, सामर्थ्य, ज्ञान और क्षमताओं में वृद्धि तथा उनमें प्रेरणा, सहयोग एवं सहभागिता, समर्पण की भावना, संगठन के निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु सार्थक प्रयास ही निर्दिष्ट परिणाम सुनिश्चित कर सकता है।

संगठन को निर्दिष्ट परिणाम की प्राप्ति हेतु कर्मचारियों की भूमिका उपयोगी एवं महत्वपूर्ण होती है। किसी संगठन की प्रसिद्धि उनके उपयोक्ता की संतुष्टि, उच्च गुणवत्तायुक्त उत्पाद एवं प्रदत्त सेवाओं पर निर्भर करता है। यह सम्पूर्ण रूप से संगठन के कर्मचारियों का ज्ञान, कौशल, योग्यता पर आधारित होता है। इन्हीं उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु प्रबन्ध द्वारा  मानव संसाधन विकास अपनाये जाते हैं।

किसी भी प्रकार के संगठन के लिये मानव संसाधन विकास की आवश्यकता निम्न कारणों से है-

1. उच्च गुणवत्ता युक्त प्रदत्त सेवाओं और उत्पादों के लिए।
2. समृद्धि एवं विकास के लिए।
3. परिवर्तनों के लिए।
4. अस्तित्व एवं स्थिरता के लिए।
5. सम्बन्धित क्षेत्र में अपनी भूमिका को अत्यन्त महत्वपूर्ण बनाने के लिए।
6. उपयोक्ता संतुष्टि द्वारा प्रसिद्धि पाने के लिए।

प्रबन्धन द्वारा संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु मानव संसाधन के विकास पर अत्यधिक बल दिया जाता है, जिससे कर्मचारियों की कार्य कुशलता एवं योग्यता में वृद्धि होती है। किसी भी प्रकार के संगठन के लिए मानव संसाधन विकास के निम्नलिखित उद्देश्य होते हैं -

1. विशिष्ट रूप में प्रत्येक कर्मचारी के सामर्थ्य का विकास करना।
2. प्रत्येक कर्मचारी के वर्तमान कार्य के परिपेक्ष्य में उनकी योग्यता एवं क्षमता विकसित करना।
3. प्रत्येक कर्मचारी के आगामी कार्य भूमिका के परिप्रेक्ष्य में उनकी योग्यता एवं क्षमता विकसित करना।
4. प्रबन्धन और कर्मचारियों के बीच अत्यन्त मधुर सम्बन्ध विकसित करना।
5. समूह की भावना विकसित करना।
6. व्यक्तिगत एवं संगठन की विभिन्न इकाईयों में सहयोग एवं समन्वय स्थापित करना।
7. कार्य संस्कृति का विकास करना।
8. प्रोत्साहन, आत्मगौरव, प्रशंसा, पुरस्कार, प्रशिक्षण आदि सुविधा प्रदान करना।

## 3.3 मानव संसाधन प्रबन्धन -

मानव संसाधन प्रबन्धन द्वारा किसी भी संगठन में सफल संचालन के लिये निश्चित मापदण्डों की पहचान की जाती है, जिसके लिये सर्वसम्मत उपाय एवं सुझाव की आवश्यकता पड़ती है। वे उपाय ऐसे होने चाहिए, जिसके द्वारा अधिकाधिक लाभ हो, न्यूनतम खर्च हो, न्यूनतम प्रयास की जरूरत हो, न्यूनतम प्रशिक्षण से समय की भी बचत हो सके।

आधुनिक युग में मानव संसाधन में प्रबन्धन व्यवस्था को अधिक कारगर बनाते हुये संगठन में लाभदायी सेवा प्रदान करने की चेष्टा की जा रही है। इसके अन्तर्गत कर्मियों के चयन से प्रारम्भ कर उनके प्रशिक्षण एवं विकास, कार्य निपुणता, चातुर्य कार्य विश्लेषण, कार्य मूल्यांकन आदि शामिल हैं।

मानव संसाधन प्रबन्धन में दूसरा उपयोगी तत्त्व कर्मियों की व्यक्तिगत उन्नति, उनके अनुशासन, उनके साथ कम्यूनिकेशन से सम्बन्धित है। कर्मियों के चयन एवं उनको कार्य प्रणाली से अवगत कराने के बाद उनके द्वारा किये जा रहे कार्यों के मूल्यांकन की आवश्यकता होती है। मूल्यांकन के आलोक में उनके कार्य तत्परता पर ध्यान देते हुए उनकी कमियों को दूर करने के लिये तथा उन्हें अधिक निपुण बनाने के लिए सतत् शिक्षा एवं प्रशिक्षण की व्यवस्था करना मानव संसाधन विकास का अन्यतम प्रधान कार्य है। कर्मियों की पदोन्नति आदि इस प्रकार की निरन्तर शिक्षा से सम्बन्धित होती है, जिससे कर्मचारी आधुनिक तकनीक से अवगत होते हैं, उनकी कार्य तत्परता में वृद्धि होती है एवं वे प्रोत्साहित होते हैं। कर्मचारियों को अनुशासित रखने के उद्देश्य से उन पर समयानुसार अंकुश की व्यवस्था भी मानव संसाधन विकास का एक आवश्यक अंग माना गया है। कर्मचारियों के अनुशासन के द्वारा संस्थान का सही संचालन सम्भव होता है परन्तु इसके द्वारा संगठन के मौलिक उद्देश्य की प्राप्ति एवं कर्मचारी विशेष के व्यक्तिगत न्यायपूर्ण अधिकार को भी संरक्षित रखने पर ध्यान दिया जाना चाहिए।

प्रबन्धक द्वारा अपने संस्थान के परिचालन कार्य में अनुशासन लाने के लिए, अभीष्ट कार्य सम्पन्न कराने में अत्यल्प समय लगाने के उद्देश्य से, कार्य तत्परता के साथ-साथ समय की बचत एवं कम से कम खर्च में बेहतर परिचालन के उद्देश्य से अधिक से अधिक मौखिक अथवा लिखित संसूचना (Communication) का प्रयोग करना पड़ता है। इस प्रकार संसूचना कार्यकर, स्पष्ट, समयानुसार होनी जरूरी है।

संसाधन के रूप में कार्मिकों का प्रबन्धन करने के सिद्धान्तों या विचारों का विवरण निम्न हैं-

1. मानव संसाधन प्रबन्धन की सफलता का आधार कार्मिकों की संतुष्टि है। इसके लिये उनकी इच्छाओं का पूर्ण होना नितान्त आवश्यक है एवं उन्हें योग्यतानुसार विकास के अवसर प्राप्त होने चाहिए।
2. कार्मिकों के चयन का आधार वैज्ञानिक होना चाहिए, जिससे योग्य व्यक्ति का ही चयन किया जा सके। वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग उनकी रूचि परीक्षण में भी करना चाहिए।
3. कार्मिकों को अपने कुशल कार्य प्रदर्शन पर पुरस्कार मिलना चाहिये। उचित पुरस्कार के बिना कार्मिकों से श्रेष्ठ एवं सही कार्य सम्पादन


HMDC-019

करवाना सम्भव नहीं है। यदि कार्मिकों को उनके कार्य का उचित पुरस्कार मिलता रहता है तो वे अपने कार्य के प्रति सर्वदा सतर्क रहेंगे एवं लगन से भी कार्य करते रहेंगे।

4. कार्मिकों में कार्य के प्रति रूचि उत्पन्न करने में प्रेरणा का विशेष महत्व होता है। विभिन्न प्रकार के प्रलोभन द्वारा उनमें प्रेरणा उत्पन्न की जा सकती है।

5. कार्मिकों से सम्बन्धित निर्णय लेते समय उन्हें सम्मिलित किया जाना तथा उनके सुझाव को महत्व देना चाहिए।

6. संगठन के कार्मिकों में सहयोग की भावना का अभाव होने पर संगठन के उद्देश्य की प्राप्ति नहीं होगी। इसलिये कार्मिकों में टीम भावना का होना आवश्यक है।

7. आदेशों प्रार्थनाओं को सही रूप में सही स्थान पर पहुँचाना पर्याप्त संचार माध्यम पर ही निर्भर करता है। अतः पारदर्शी एवं त्वरित संचार होना चाहिये।

8. शिक्षा एंव प्रशिक्षण के माध्यम से कार्मिकों को इस बात का ज्ञान अवश्य कराना चाहिए कि राष्ट्रीय समृद्धि ही सर्वोपरि होती है। इसी में सभी का हित है।

## 3.4 मानव संसाधन विकास प्रणाली -

मानव संसाधन विकास एक सतत् प्रक्रिया है। अतः मानव संसाधन विकास प्रणाली को अच्छी तरह विकसित किया जाना चाहिये। प्रो॰ टी॰ वी॰ राव ने मानव संसाधन विकास की प्रणालियों/उपकरणों का सम्बन्धित विभिन्न प्रक्रियाओं, परिणामों का अन्तर्सम्बन्ध अपनी पुस्तक "दी एच॰ आर॰ डी॰ मीशनरी" में चार्ट रूप में प्रस्तुत किया हैं, जो निम्नवत् है-

| तकनीक/उपकरण | प्रक्रिया | परिणाम | संगठनात्मक प्रभावशीलता |
|---|---|---|---|
| मानव संसाधन विकास विभाग | कर्मचारियों की स्पष्ट भूमिका | कर्मचारी अधिक सक्षम | उच्च उत्पादकता |
| कार्य निष्पादन मूल्यांकन | सभी कर्मचारियो के विकास की योजना | अधिक विकसित भूमिका | विकास एवं फैलाव |
| समीक्षा, वार्तालाप, प्रतिसूचना, काउन्सिलिंग | कार्य सम्पादन के लिये योग्यता सम्बन्धित जागरूकता | उच्च क्षमता वाले कार्यों का सम्पादन एंव समर्पण भाव | लागत में कमी |
| भूमिका विश्लेषण अभ्यास | अनुकूलन | समस्याओं का अधिक समाधान | लाभ अधिक |

| क्षमता विकास अभ्यास | विश्वास में वृद्धि | मानव संसाधन का बेहतर उपयोग | उद्देश्य प्राप्ति मार्ग प्रशस्त |
|---|---|---|---|
| प्रशिक्षण | सहयोगिता एवं समूह कार्य | कार्य संतुष्टि एवं प्रेरणा | अच्छी छवि |
| संचार नीति | प्राधिकारिक | आन्तरिक संसाधनों का अच्छा उत्पादन | अनुकूलन वातावरण |
| चक्राकार कार्य विवरण | खुलापन | बेहतर संगठनात्मक परम्परा | |
| ओ० डी० अभ्यास | जोखिम उठाना | समूह कार्य अधिक और एक दूसरे के प्रति सम्मान | |
| पुरस्कार | महत्व की पुष्टि | | |

किसी भी संगठन की सफलता अन्य कारकों पर भी निर्भर करती हैं। ये कारक हैं : वातावरण, प्रौद्योगिकी, कार्मिक योजना, उच्चाधिकारियों की कार्य प्रणाली, उच्चाधिकारियों का समर्पण भाव आदि। मानव संसाधन विकास किसी भी संगठन के लिए एक महत्वपूर्ण एवं उपयोगी प्रक्रिया है, जिसे संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु निरंतर संचालित रखना चाहिये। मानव संसाधन प्रक्रिया के द्वारा कार्मिकों के सामर्थ्य में वृद्धि और संगठन के वातावरण में सुधार होता है। मानव संसाधन विकास प्रक्रिया हेतु निम्न विचार/तथ्य उल्लेखनीय है -

1. कर्मियों के व्यक्तिगत विकास।
2. कर्मियों के पदानुसार भूमिका।
3. उच्चाधिकारी एवं कर्मियों में परस्पर मधुर एवं विश्वास का सम्बन्ध।
4. समूह कार्य की भावना।
5. दलों, विभागों, समूहों में सामंजस्य।
6. नवीनता एवं आधुनिकता का समुचित एवं विशेष ध्यान।
7. समय - समय पर मूल्यांकन।
8. व्यावसायिक योजना, नियोजन एवं परिवीक्षण।
9. कार्य दक्षता एवं सामर्थ्य वृद्धि, कर्मियों को प्रशिक्षण।
10. कार्य विश्लेषण, कार्य, उत्पाद एवं सेवाओं की गुणवत्ता।
11. कार्य संस्कृति का वातावरण।

मानव संसाधन विकास की प्रक्रिया, योजनाओं एवं कार्यक्रमों को कार्यरूप में परिणत करती है तथा यह विभिन्न प्रकार की तकनीकों एवं उपकरणों के कार्यान्वयन का साधन है। अतः इससे सम्बन्धित प्रणालियों, उपकरणों एवं तकनीकों का समय-समय पर



NMDC-019

पुनरावलोकन करना चाहिए, जिससे उनमें वातावरण के अनुसार न्यायसंगत परिवर्तन हो सके। परिणामतः कर्मियों एवं संगठन दोनों के उन्नयन एवं विकास का मार्ग प्रशस्त होगा।

## 3.5 मानव संसाधन विकास तथा भारतीय पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्र :-

सूचना क्रान्ति के वर्तमान दौर में पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों से सम्बद्ध मध्यम और निचले स्तर के कार्मिकों की अपेक्षायें समयानुरूप बढ़ चुकी है। किन्तु मानव संसाधन विकास सम्बन्धी जो भी योजनायें प्रत्यक्ष रूप से दिखाई दे रही हैं, उनका कोई भी लाभ पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों को प्राप्त नहीं हो पा रहा है। वास्तविकता यह है कि हमारे देश के बहुसंख्यक पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्र किसी न किसी संस्था के अंग के रूप में ही कार्य करते हैं। जिस संगठन से ये पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्र जुड़े होते हैं, वही संगठन/संस्था नियोजक के रूप में अपने सीमित संसाधनों के अधीन कर्मचारियों के सम्बन्धित कार्यों को नियंत्रित करती है। ऐसे सूचना केन्द्र / पुस्तकालय मानव संसाधन विकास की अवधारणा के लाभ से वंचित है। मानव संसाधन विकास का उद्देश्य केवल उच्च वर्ग के अधिकारियों के संरक्षण देना, उनकी आकांक्षाओं का पोषण करना मात्र न होकर समग्र संवर्गों की अपेक्षाओं के प्रति उत्तरदायी होना चाहिये।

सूचना प्रौद्योगिकी का क्षेत्र उत्तरोत्तर बहुआयामी स्वरूप ले रहा है। पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्र के कार्य एवं सेवा में वर्तमान में कम्प्यूटर के अनुप्रयोग द्वारा क्रान्तिकारी परिवर्तन सर्वत्र देखा जा रहा है। पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्र के क्षेत्र में कम्प्यूटरीकरण के प्रभाव से समस्त क्रियाकलाप और प्रदत्त सेवाओं के स्वरूप में न केवल आमूल परिवर्तन आया है अपितु उपयोक्ताओं की मनोवृत्ति और अपेक्षायें बढ़ गयी हैं। सूचना सम्प्रेषण के साधन व्यापक हो गये हैं। इसलिये युगानुरूप पुस्तकालयों की भूमिका भी परिवर्तित हो चुकी है। कम्प्यूटर के अनुप्रयोग ने ज्ञानार्जन और सूचना प्राप्ति के समस्त प्रणालियों को आधुनिकतम् बना दिया है। ऐसे में पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों से जुड़े कर्मियों के लिए कम्प्यूटर के प्रयोग का ज्ञान, इलेक्ट्रानिक स्रोतों का ज्ञान, सूचना संजाल पर खोज प्रक्रिया का ज्ञान अब अपरिहार्य हो चुका है। इस परिवर्तित परिस्थिति में और आधुनिकतम् प्रयोगों में कर्मियों की नवीन भूमिका को देखते हुए उनके विश्वास पर नये सिरे से ध्यान देने की आवश्यकता है। जब तक पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों के कर्मचारियों का वैयक्तिक विकास एवं उत्थान नहीं होगा तब तक मानव संसाधन विकास के लक्ष्यों को प्राप्त नहीं किया जा सकता है। परिवर्तन के इस दौर में कर्मचारियों के वेतन, भत्ते, पदोन्नति के अवसर, प्रशिक्षण कार्य और अनुशासित नियंत्रण एवं सेवा शर्तें आदि संगठन के अन्तर्गत न होकर मानव संसाधन विकास की परिधि में होना चाहिये। अन्यथा सूचना प्रौद्योगिकी के क्रान्तिकारी परिवर्तन का बहुमुखी लाभ न कर्मचारियों को


HMDC-019

मिल सकेगा और न ही उपयोक्ताओं को। इसे संगतपूर्ण बनाने के लिये कर्मचारियों को प्रति सकारात्मक सोच की आवश्यकता है और ऐसा करने पर ही अभीष्ट उद्देश्य की प्राप्ति भी संभव होगी।

पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों को समसामयिक एवं प्रभावशाली बनाने के लिए मानव संसाधन विकास कार्यक्रम के विविध पक्षों पर चिन्तन की आवश्यकता है। यदि पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों को लक्ष्य प्राप्त करने के योग्य बनाना है तो निम्नलिखित पक्षों को अंगीकार करना होगा-

1. कार्मिक नियोजन।
2. उपयोक्ताओं की संतुष्टि।
3. नवीनतम् सूचना उत्पादों एवं सेवाओं से सुपरिचितकरण।
4. पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों के उद्देश्यों से यथार्थ रूप में परिचय।
5. अभिप्रेरणा।
6. उच्च गुणवत्तायुक्त सेवा एवं उत्पाद।
7. विकास का निरीक्षण।
8. कर्मियों के समुचित नियोजन हेतु कार्य विश्लेषण ।
9. नवीन ज्ञान एवं कौशलों की प्राप्ति।
10. निष्पादन का मूल्यांकन।

मानव संसाधन विकास एक ऐसी महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है, जो कर्मचारी वर्ग में उन्नत क्षमता का सृजन करती है और उत्तरोत्तर सुधार तथा गुणवत्तायुक्त सेवाओं के लिये अवसर प्रदान करती है। अतः समय की माँग के अनुरूप पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों में बहुआयामी क्षमता से युक्त कर्मचारियों की आवश्यकता पूर्ति के लिए समसायिक युक्तिसंगत योजनायें बनाई जानी चाहिए।

## 3.6 कार्मिक नियोजन -

किसी भी सगठन का प्रबन्धन एवं संचालन व्यक्तियों के द्वारा ही किया जाता है और इसकी गुणवत्ता व प्रभावशीलता इसमें कार्यरत् व्यक्तियों पर निर्भर है। प्रबन्धक को कर्मियों की संख्या योग्यताएँ, पूर्ति एवं विकास आदि के सम्बन्ध में एक उचित योजना बनानी होती है। कर्मचारियों की आवश्यकता का पूर्वानुमान करना, उन्हें खोजना, उनका चयन करना तथा उन्हें प्रशिक्षित एवं विकसित करना प्रबन्धक का एक महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्व होता है। मानव शक्ति का नियोजन ही संगठन की सफलता को प्रभावित

NMDC-019

करती है। उचित नियोजन के द्वारा ही कार्मियों को पर्याप्त मात्रा में तथा विभिन्न पदों हेतु नियुक्त किया जा सकता है। संगठन के सफलता के लिए कार्मिकों का सही समायोजन एवं नियोजन ही कार्मिक नियोजन है। इसका क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है तथा इसके बिना अभीष्ट सफलता प्राप्त नहीं हो सकती है। संगठन के सफल संचालन के लिये प्रबन्धक को कार्मिक नियोजन की प्रक्रिया के कार्यान्वयन हेतु इसके विभिन्न अवयवों, उपकरणों, एवं तकनीकों का ज्ञान नितान्त आवश्यक है।

### 3.6.1 कार्मिक नियोजन : अर्थ एवं परिभाषा -

कार्मिक नियोजन का अर्थ मानव संसाधनों का सही मात्रा में सही स्थानों पर उपयोग, उनका उचित अधिग्रहण, अनुप्रयोग, विकास एवं उनके उचित संरक्षण की व्यूह रचना है। वस्तुतः यह विभिन्न प्रकार के कार्मिकों की आवश्यकता के उचित पूर्वानुमान, उनकी उपलब्धि के मध्य उचित समन्वय एवं समायोजन बनाये रखने की योजना है। कार्मिक नियोजन की अवधारणा में दो शब्दों का प्रयोग हुआ है - एक कार्मिक जिसका अर्थ कार्य करने वाले व्यक्तियों से होता है और दूसरा नियोजन जिसका आशय किसी भी संगठन में विविध कार्यों हेतु योग्य कर्मचारियों की पूर्ति करना।

किसी भी संगठन में कार्मिक नियोजन से आशय प्रबन्ध विज्ञान की उस शाखा से है, जिसमें व्यक्तियों के अनुप्रयोग का समुचित अध्ययन किया जाता है। कार्मिक नियोजन विस्तृत अर्थ में कर्मियों या मानव शक्ति के संगठन विशेष के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु व्यवस्थापन है।

अतः कार्मिक नियोजन का अर्थ किसी संगठन में विभिन्न कार्यों के निष्पादन हेतु योग्य मानव संसाधनों को उपलब्ध कराने से है, जिससे संगठन अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सके। इस प्रक्रिया में भविष्य में कार्मियों की आवश्यकता को भी सम्मिलित किया जाता है। कार्मिक नियोजन, कार्मिक प्रबन्धन का एक महत्वपूर्ण घटक है, जिससे कम से कम प्रयासों से अधिक उत्पादन एवं उत्तम सेवा कार्य लिया जा सके। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए एक कर्मचारी के स्थान पर दूसरे को स्थानापन्न किया जा सकता है। इसलिये प्रारम्भ में ही कर्मचारियों का चयन सोच-समझकर अच्छी तरह किया जाना चाहिए। निष्कर्ष रूप में हम कर सकते हैं कि कार्मिक नियोजन एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें कर्मचारियों का न्यायपूर्ण चयन उनकी योग्यता, दक्षता, निपुणता को आधार मान करके, उनसे सम्बन्ध बनाकर युक्तिपूर्ण तरीके से काम लेने या आवश्यकता पड़ने पर उनके कार्यों में परिवर्तन करके, कार्मिकों को नवीन शिक्षण या प्रशिक्षण देकर अच्छी सेवा एवं संगठनात्मक लक्ष्य प्राप्त की जा सकती है।

**परिभाषा :-**

कार्मिक नियोजन मानव संसाधनों का पूर्वानुमान करने, विकसित करने, उपयोग करने तथा नियन्त्रित करने की एक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा एक संस्था यह सुनिश्चित करती है कि वह सही स्थान पर, सही संख्या में, सही प्रकार के कर्मचारियों को सही कार्यों के लिये रखती है, जिसके लिये आर्थिक दृष्टि से वे अधिक उपयोगी हैं।''

— एडविन गिसलर

''कार्मिक नियोजन एक उपक्रम के मानव संसाधनों की अधिग्रहण, उपयोग, विकास तथा उनके अनुरक्षण की व्यूह रचना है।''

— स्टेनर

''यह मानव शक्ति की भावी आवश्यकताओं को निर्धारित करने तथा उनकी पूर्ति के लिये कार्य-योजनाओं को विकसित करने की विधि है।''

— एन॰ सी॰ पिल्लई

''कार्मिक नियोजन प्रभावी कर्मचारी कार्यक्रम का प्रथम कदम है। यह बदलती हुई दशाओं में एक संगठन की मानव संसाधन आवश्यकताओं का विश्लेषण करने तथा इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये आवश्यक क्रियाओं को विकसित करने की प्रक्रिया है।''

— के॰ सी॰ शकरनारायण

''कार्मिक नियोजन एक ऐसा क्रिया-कलाप है, जो किसी संस्था द्वारा अपने लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु मानव संसाधनों का चयन, कार्य विभाजन, उपयोग एवं विकास करके गतिशील बनाने के लिये निर्देशित करता है।''

— प्रबन्धन शब्दकोश

उपरोक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट है कि कार्मिक नियोजन किसी संगठन/संस्था में कार्मिकों की व्याख्या एवं भविष्य में होने वाली आवश्यकताओं का निर्धारण करने तथा उसकी पूर्ति हेतु सामंजस्य स्थापित करने की एक प्रक्रिया है, जिससे संगठन / संस्था के लिए उपयुक्त पदों एवं समय पर योग्य कर्मियों का उचित उपयोग किया जा सके। यह वस्तुतः कर्मियों की प्राप्ति, उपयोग, विकास एवं अनुरक्षण की योजनाओं को विकसित एवं कार्यान्वयन हेतु एक प्रक्रिया है।

## 3.6.2 कार्मिक नियोजन : आवश्यकता एवं उद्देश्य -

कार्मिक नियोजन एक ऐसी विश्लेषणात्मक क्रियाकलाप है, जिसके द्वारा मानव शक्ति की माँग, चयन एवं पूर्ति में सामंजस्य स्थापित करने तथा कार्य विभाजन, सही



HMDC-019

उपयोग एवं विकास करके संगठन के लक्ष्य प्राप्त करने के लिए निर्देशित करता है। यह संगठन के लक्ष्यों की पूर्ति के साथ-साथ कर्मचारियों के विकास एवं कार्य संतुष्टि पर भी बल देता है। यह संगठन में निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। मानव शक्ति की निरन्तर पूर्ति द्वारा किसी संगठन के स्थायित्व एवं प्रगति हेतु उचित ज्ञान के लिए कार्मिक नियोजन आवश्यक है। मानव शक्ति नियोजन निम्न कारणों से आवश्यक है-

1. मानव शक्ति सम्बन्धी उपयोगी योजनाओं के लिए।
2. मानव शक्ति से सही एवं प्रभावशाली उपयोग के लिए।
3. कर्मियों के विकास एवं कार्य संतुष्टि के लिए।
4. वर्तमान एवं भविष्य के परिप्रेक्ष्य में मानव शक्ति सम्बन्धी आवश्यकता के ज्ञान के लिए।
5. संगठन के लिए अत्यन्त उपयोगी, योग्य, प्रशिक्षित एवं अनुभवी व्यक्तियों के चयन एवं नियुक्ति के लिए।

किसी भी उपक्रम में कार्मिक नियोजन की आवश्यकता अन्य कारणों से भी होती है यथा -विविध कौशलयुक्त व्यक्तियों की कमी, तकनीकी परिवर्तन, संगठनात्मक परिवर्तन, श्रम शक्ति परिवर्तन, विशेषज्ञ कौशल, प्रणाली विचारधारा आदि।

कार्मिक नियोजन का मुख्य उद्देश्य संघटन विशेष के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए सर्वाधिक उपयोगी मानव संसाधन की उपलब्धता एवं विकास सुनिश्चित करना है। मानव संसाधन नियोजन हेतु विभिन्न गतिविधियों यथा-भर्ती योजना, चयन, सही उपयोग, प्रशिक्षण एवं विकास आदि का संचालन किया जाता है। संगठन के उद्देश्य की प्राप्ति हेतु कार्यरत् कार्मिकों की संतुष्टि भी महत्वपूर्ण होती है। कार्मिकों को यह आभास होना चाहिए कि उनके सामर्थ्य एवं कार्यकुशलता से संगठन अवगत है और भविष्य में आवश्यतकतानुसार उन्हें महत्वपूर्ण दायित्व दिया जा सकता है। इस प्रकार कार्मिक नियोजन द्वारा उत्तम कार्य संस्तुति एवं सर्वोत्तम कर्मचारी योगदान सुनिश्चित किया जा सकता है। किसी संगठन में कार्मिक नियोजन के निम्नलिखित महत्त्वपूर्ण उद्देश्य होते हैं-

1. कार्मिकों की भर्ती, चयन, प्रशिक्षण एवं विकास की आवश्यकताओं का निर्धारण करना।
2. कार्मिकों का सही उपयोग करना।
3. कार्मिकों की संख्या एवं दक्षता पर नियंत्रण रखना तथा आवश्यक होने पर उनकी पूर्ति को सुनिश्चित करना।

4. कार्मिकों में आगामी कुशलता, दक्षता आदि से सम्बन्धित आवश्यकताओं का पूर्वानुमान करना।
5. विभिन्न प्रबन्धकीय विकास कार्यक्रमों हेतु नींव स्थापित करना।
6. मानव संसाधन नियोजन के संगठनात्मक नियोजन से सम्बद्ध करना।
7. आन्तरिक मानव संसाधन का अधिकतम उपयोग करना।
8. नवीन परियोजनाओं हेतु मानव संसाधन नियोजन की लागत का मूल्यांकन करना।
9. क्रियाकलापों तथा उप-अनुबन्धों का निर्धारण करना।

## 3.7 कार्मिक नियोजन प्रक्रिया :-

कार्मिक नियोजन प्रक्रिया में सम्मिलित की जाने वाली प्रमुख तत्व निम्नलिखित है -

1. कार्मिकों की आवश्यकता का पूर्वानुमान।
2. कार्मिकों की भर्ती एवं चयन।
3. पदारोहण एवं तैनाती।
4. कार्मिक विकास।
    (क) योग्यता अंकन / कार्य निष्पादन मूल्यांकन।
    (ख) प्रशिक्षण एवं विकास ।
    (ग) परिवर्तनशील दृश्य एवं मानसिकता।
    (घ) संप्रेषण।

**कार्मिकों की आवश्यकता का पूर्वानुमान -**

कार्मिक नियोजन प्रक्रिया का प्रथम चरण कार्मिक आवश्यकताओं का पूर्वानुमान होता है। भावी योजनाओं को ध्यान में रखकर यह वर्तमान एवं भविष्य में हो वाली कार्मिक आवश्यकताओं का आकलन होता है। इस आकलन के समय संगठन में प्रचलित प्रवृत्तियों और परिवर्तनों, कार्मिकों को वास्तविक स्थिति (गणना, विश्लेषण एवं मूल्यांकन द्वारा), कार्मिकों का संख्यात्मक एवं गुणात्मक पर्याप्तता, मानव शक्ति से सम्बन्धित समस्याओं का ज्ञान आदि घटकों को ध्यान में रखा जाता है।

आधुनिक समाज में औद्योगिक एवं प्रौद्योगिकी विकास के फलस्वरूप विविध क्षेत्रों में सूचना की माँग तीव्रता से बढ़ी है और इसकी पूर्ति हेतु संस्थागत तंत्र में तेजी से


HMDC-019

परिवर्तन की आवश्यकता अनुभव की जा रही है। पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्र ऐसी सामाजिक संस्थाएँ हैं, जो सूचना सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकते हैं। ये समाज की शैक्षणिक, शोध विकास और समस्त प्रकार की बौद्धिक आवश्यकताओं की पूर्ति में तत्पर हैं। आधुनिक पुस्तकालय / सूचना केन्द्र की भूमिका केवल व्यक्तिगत प्रयोक्ताओं की सूचना सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति तक ही सीमित नहीं है, बल्कि सूचना केन्द्रों,संसाधन केन्द्रों और मल्टीमीडिया केन्द्रों के रूप में विभिन्न स्तर के संगठनों और संस्थाओं की सूचना आवश्यकता की पूर्ति करने में निहित है। अतः पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों के स्वरूप में परिवर्तन एवं जटिलताओं के कारण उनके सफल संचालन एवं उद्देश्यों के पूर्ति के लिए कार्मिक आवश्यकताओं का आकलन करना महत्वपूर्ण बन गया है। वर्तमान समय में पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों को ऐसे कार्मिकों की आवश्यकता है जो उपयोक्ता को नवीन से नवीन सूचना शीघ्र ऑनलाईन, सूचना संचार आदि द्वारा उपलब्ध करा सके। अतः पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों के कार्मिकों को पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान की योग्यता के अलावा कम्प्यूटर, सूचना प्रौद्योगिकी सूचना संप्रेषण तकनीक में अपेक्षित ज्ञान, कौशल एवं दक्षता की आवश्यकता है, जिससे वे अपने कर्त्तव्यों का निष्ठापूर्वक एवं समर्पित भाव निर्वाह कर सके।

पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों के क्रियाकलाप, योजनायें एवं उद्देश्यों, जिसे एक निश्चित समय में प्राप्त किया जाना है, को विशेष महत्व एवं विचार करते हुये मानव शक्ति का आकलन करना चाहिये। पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्र के क्षेत्र में सूचना प्रौद्योगिकी के प्रभाव से क्रियाकलाप एवं प्रदत्त सेवाओं के स्वरूप में आमूल परिवर्तन आया है। यथा - सूचना संजाल पर खोज, इलेक्ट्रानिक स्रोतों, सूचना उत्पादों और सेवाओं का उपभोक्ताकरण आदि। इन कार्यों को सुचारू रूप से संचालन हेतु विभिन्न प्रकार के मानव शक्ति का पूर्वानुमान आवश्यक है। इस पूर्वानुमान हेतु कार्य विश्लेषण, कार्य विवरण एवं कार्य मूल्यांकन जैसी तकनीकों की सहायता ली जा सकती है। मानक तकनीकों जैसे-विशेषक आकलन तकनीक एवं इकाई माँग आकलन तकनीक का प्रयोग वृहत् संस्थानों में मानव शक्ति का पूर्वानुमान हेतु किया जाता है। विशेषक आकलन तकनीक से आशय है कि संस्था के प्रधान अपने विवेक, अनुभव दक्षता एवं डेल्फी तकनीक का सहायता लेकर मानव शक्ति का पूर्वानुमान अत्यधिक प्रभावशाली बना सकता है। जबकि इकाई माँग, किसी इकाई के प्रधान द्वारा अपने इकाई में मानव शक्ति का पूर्वानुमान करता है, एवं उच्च प्रबन्धन द्वारा समस्त इकाईयों की मानव शक्ति माँग को जोड़ते हुए समग्र मानव शक्ति का पूर्वानुमान करते हैं।

## कार्मिकों की भर्ती एवं चयन -

भर्ती एक क्रिया है, जिसके माध्यम से कोई भी संगठन सुयोग्य, कर्मठ एवं आवश्यकतानुसार मानव शक्ति की बड़ी संख्या को आकर्षित करके अभीष्ट मानव संसाधनों की उपलब्धता सुनिश्चित करता है। जबकि चयन का तात्पर्य किसी कार्य विशेष के लिए उपयुक्त मानव शक्ति के चयन की प्रक्रिया से होता है। विज्ञापन के माध्यम से प्राप्त आवेदनों की निर्धारित एवं वांछित योग्यता पर आधारित पद विशेष के लिए उपयुक्त आवेदकों का चयन करना ही चयन प्रक्रिया है।

वर्तमान समय में कार्मिकों के चयन हेतु भिन्न-भिन्न प्रक्रियाएं अपनाई जाती हैं। चयन प्रक्रिया के निम्न चरण प्रचलित एवं सर्वमान्य हैं जिनका इनके प्रयोग आवश्यकतानुसार विभिन्न दशाओं में किया जाता है-

1. प्राथमिक साक्षात्कार।
2. प्राथमिक साक्षात्कार में सफल व्यक्तियों के आवेदन पत्रों की जाँच एवं विश्लेषण।
3. परीक्षण।
4. साक्षात्कार।
5. शारीरिक जाँच।

कभी-कभी आवोदकों की वृहत् संख्या को देखते हुए प्राथमिक साक्षात्कार लिया जा सकता है। प्राथमिक साक्षात्कार में सफल व्यक्तियों को भरने के लिये आवेदन पत्र दे दिया जाता है। आवेदन पत्रों की प्राप्ति के उपरान्त सभी आवेदन पत्रों की जाँच एवं विश्लेषण किया जाता है। चयनित आवेदन पत्रों के व्यक्तियों को परीक्षण के लिए बुलाया जाता है।

परीक्षण एक महत्वपूर्ण विधि है, जिसके द्वारा अभ्यर्थी में कार्य विशेष को कुशलता के साथ करने की योग्यता आदि ज्ञात की जा सकती है। योग्यता, परीक्षण, वेशिष्ट योग्यता परीक्षण, बुद्धि परीक्षण, अभिरूचि परीक्षण और व्यक्तित्व परीक्षण प्रमुख प्रचलित परीक्षण विधि है।

कर्मिकों के चयन के लिये साक्षात्कार एक लोकप्रिय एवं प्रचलित पद्धति है। विभिन्न परीक्षणों के उपरान्त अभ्यर्थियों का साक्षात्कार लिया जाता है। वर्तमान समय में हमारे देश में अधिकांश संगठनों द्वारा मानव शक्ति चयन हेतु लिखित परीक्षा एवं



HMDC-019

साक्षात्कार विधि का सहयोग लिया जाता है। लेकिन सिर्फ व्यक्तिगत साक्षात्कार भी चयन हेतु उपयोग किया जाता है। अभ्यर्थी की योग्यता परखने के लिए समुचित वार्तालाप और इसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व की जाँच पड़ताल साक्षात्कार के माध्यम से की जाती है।

शारीरिक जाँच से यह ज्ञात होता है कि चयनित अभ्यर्थी में कार्य करने की शारीरिक क्षमता है या नहीं। अतः कर्मियों के चयन करते समय यह देखना भी आवश्यक है कि वह शारीरिक एवं मानसिक रूप से पूर्ण स्वस्थ रहें।

**पदारोहन एवं तैनाती -**

कोई व्यक्ति जब चयन की सभी प्रक्रियाओं से गुजरकर सभी परीक्षणों में उत्तीर्ण होता है तो उसे कार्य का उत्तरदायित्व सौपना होता है, जिसके लिए वह चयनित किया गया है। नवनियुक्त व्यक्ति का संगठन के लक्ष्य एवं विभिन्न स्तरों पर कार्यरत् व्यक्तियों से परिचय कराया जाता है। जिस इकाई में नवनियुक्त व्यक्ति को कार्य करना है,उसके प्रधान द्वारा नवनियुक्त व्यक्ति को आवंटित कार्य एवं दायित्वों से अवगत कराया जाता है।

**कार्मिक विकास -**

कार्मिक विकास एक उपयोगी एवं महत्त्वपूर्ण पक्ष है। कार्मिक विकास के माध्यम से संगठन के उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सकता है। कार्मिक विकास के लिए निष्पादन मूल्यांकन, प्रशिक्षण एवं विकास, परिवर्तन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण का विकास, सम्प्रेषण आदि कार्यक्रमों की रूपरेखा बनायी जाती है।

संगठन में कार्यरत कर्मचारियों द्वारा किये गये कार्यों का मूल्यांकन करना सगंठन व्यवस्था का महत्त्वपूर्ण अंग माना जाता है तथा संगठन के हितों की दृष्टि से कर्मचारियों द्वारा किये गये कार्यों का मूल्यांकन करना अतिआवश्यक होता है, जिसे योग्यता अंकन/ निष्पादन मूल्यांकन कहते हैं। कर्मचारियों की योग्यता का अंकन कर्मचारी एवं संगठन दोनों ही दृष्टियों से किया जाना आवश्यक होता है। समय-समय पर कार्यरत् कर्मचारियों की योग्यता का सापेक्ष मूल्यांकन किया जाना चाहिए। जिसके द्वारा अधिकारियों को कर्मचारियों की कौशल एवं योग्यता के बारे में जानकारी मिलती है। निष्पादन मूल्यांकन के आधार पर कर्मचारियों को पदोन्नति, उन्नत वेतनमान, प्रोत्साहन, पुरस्कार आदि सुविधा प्रदान की जाती है। निष्पादन मूल्यांकन द्वारा प्राप्त जानकारी के आधार पर कर्मचारियों के लिए सुनियोजित विकास एवं प्रशिक्षण नीति तैयार किये जा सकते हैं। निष्पादन मूल्यांकन से कर्मचारी को यह ज्ञात हो जाता है। कि उनमें क्या दक्षता है और

क्या कमियाँ हैं और इसके आधार पर वह अपनी भूमिका को उन्नत बना सकता है। निष्पादन मूल्यांकन व्यक्ति के विकास पर अधिक ध्यान देता है। अतः कार्मिक नियोजन के लिये यह महत्त्वपूर्ण सूचनायें उपलब्ध कराता है।

किसी भी संगठन में कार्मिकों की दक्षता एवं सामर्थ्य में वृद्धि के लिए उपयुक्त शिक्षा एवं प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। जिसके द्वारा उच्च गुणवत्ता युक्त उत्पादन एवं सेवाओं को प्राप्त किया जाता है। अतः मानव शक्ति का सही शिक्षण एवं प्रशिक्षण कार्मिक विकास का एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम है। कार्मिकों की दक्षता बढ़ाने हेतु आन्तरिक, वाह्य और दोनों के मिश्रित रूप से प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाती है, जिसके द्वारा कर्मचारियों का विकास, मनोबल, उत्पाद एवं सेवा की गुणवत्ता एवं संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति होती है।

सूचना क्रांति के इस युग में समस्त संगठनों के क्रियाकलापों में परिवर्तन तीव्र गति से हो रहा है। सूचना प्रौद्योगिकी, सूचना संजाल, सूचना सम्प्रेषण तकनीकी इत्यादि द्वारा किसी भी संगठन के विकास एवं गुणवत्ता युक्त उत्पाद एवं सेवाओं को प्रभावित किया गया है। अतः संगठन के कार्मिकों से यह अपेक्षा की जाती है कि इन परिवर्तनों के प्रति उनका रूख सकारात्मक हो एवं अंगीकार करने में तत्पर हों। इस हेतु कार्मिक नियोजन में आवश्यक कार्यक्रमों का निर्माण करना चाहिए, जिससे परिवर्तनों को स्वीकार करने के प्रति अभिप्रेरित हो एवं संगठन में परिवर्तन हेतु अपेक्षित वातावरण का निर्माण, परिवर्तन हेतु दिशा-निर्देश, परिवर्तनों पर गहन विचार-विमर्श, उचित समन्वय एवं सम्प्रेषण, प्रभावशाली क्रियानन्वयन इत्यादि पर उपयुक्त विचार एवं नियोजन होना चाहिए।

यह सर्वविदित तथ्य है कि मानव सभ्यता के लिए विविध क्रियाकलापों एवं गतिविधियों का आधार सूचनाओं का प्रभावी सम्प्रेषण ही होता है, जिसके अभाव में किसी क्रियाकलाप को उद्देश्यपूर्ण बनाना एक परिकल्पना मात्र ही है। एक विद्वान के कथनानुसार जिस प्रकार मानव शरीर में धमनियों के अभाव में रक्त संचार सम्भव नहीं है, ठीक उसी प्रकार किसी संगठन अथवा संस्था में सम्प्रेषण के अभाव में किसी भी प्रकार का क्रियाकलाप सम्भव नहीं है। वस्तुतः सम्प्रेषण एक मानसिक प्रक्रिया है,जो पूरे संगठन तथा उसके प्रत्येक विभाग को एक धागे के रूप में संगठित करती है तथा सूचनाओं के सम्प्रेषण हेतु सदैव किसी मानक श्रृंखला पद्धति अर्थात् पदानुक्रम का प्रयोग करती है। अपने इन मानकों एंव सम्प्रेषण की प्रकृति के आधार पर यह पूरे संगठन में समन्वय भी स्थापित करती है। किसी संगठन विशेष में सूचनाओं के सम्प्रेषण हेतु मुख्यतः दो माध्यमों



HMDC-019

का प्रयोग किया जाता है। प्रथम - लिखित सम्प्रेषण तथा द्वितीय मौखिक सम्प्रेषण। किसी संगठन विशेष में सम्प्रेषण के माध्यमों अथवा विधियों को लागू करने हेतु कुछ पूर्व अपेक्षायें होती हैं। जैसे-संस्था में संगठनात्मक संस्कृति का विकास, अधिकारियों एवं अधीनस्थों के मध्य औपचारिक एवं अनौपचारिक सम्प्रेषण, गुणवत्ता सुधार एवं मूल्यांकन हेतु समय - समय पर सभाओं/बैठकों का आयोजन, संगठन में प्रत्येक स्तर पर अर्न्तसंगठन में प्रत्येक स्तर पर अर्न्तसंगठनात्मक समप्रेषण पद्धति की व्यवस्था इत्यादि। उपरोक्त विवरणों से यह स्पष्ट होता है कि यदि किसी संगठन विशेष में इन विधियों एवं प्रक्रियाओं को व्यवस्थित ढंग से लागू किया जाय तो कार्मिक विकास के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सकता है।

## 3.8 पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों में कार्मिक नियोजन :-

आधुनिक समाज में पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों को एक ऐसे सामाजिक संस्था के रूप में जाना जाता है, जिसका प्रमुख उद्देश्य सेवा प्रदान करना है न कि लाभ कमाना, सामान्यतः ये संस्थायें किसी न किसी पैतृक संस्था के अधीन अपनी गतिविधियाँ संचालित करती हैं। अतः इनकी सभी योजनायें चाहे सेवा से सम्बन्धित हो, या कार्य से सम्बन्धित हो या फिर कार्मिक नियोजन से सम्बन्धित हो, सभी पैतृक संस्था की नीतियों एवं योजनाओं के अधीन संचालित एवं नियन्त्रित होती हैं। परन्तु वर्तमान में पुस्तकालय एंव सूचना केन्द्रों की सेवाओं की बढ़ती माँग, गुणवत्ता पर बल, सेवा एवं कार्य परिस्थितियों में जटिलताओं के कारण इन संस्था के लिए एक पृथक् योजना की आव्रश्यकता को सभी के द्वारा स्वीकार किया गया है। चूंकि पुस्तकालयों के परम्परागत उद्देश्यों को वर्तमान परिवेश में न तो पूर्णतः नकारा जा सकता है और न ही पूर्णतः अपनाया जा सकता है। अतः समय एवं आवश्यकता की माँग के आधार पर आवश्यक परिवर्तनों को सकारात्मक दृष्टिकोण एवं बदलाव के आधार पर देखा जाना चाहिए। अतः संक्षेप में भारतीय परिस्थितियों के अनुकूल पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों में कार्मिक नियोजन हेतु निम्न बिन्दुओं को ध्यान में रखा जाना चाहिए –

1. संस्था की भावी आवश्यकतानुसार कार्मिक संसाधनों का सटीक आकलन।
2. संस्था में नये कर्मचारियों के चयन एवं भर्ती हेतु पारदर्शी एवं गुणवत्तापूर्ण प्रक्रिया का विकास।
3. संस्था में समय-समय पर गुणवत्ता एवं कौशल सुधार हेतु प्रशिक्षण एवं अभिप्रेरणात्मक कार्यक्रमों का आयोजन।

4. संस्था के नियन्त्रण हेतु निश्चित समयान्तर पर निष्पक्ष मूल्यांकन विधि का प्रयोग।
5. संस्था एंव कर्मचारियों की भावी आवश्यकताओं का आंकलन।
6. संस्था के कार्यों एवं सेवाओं के गुणात्मक विकास को सुनिश्चित करना।
7. संस्था एवं कर्मचारी हितों को ध्यान में रखते हुए सकारात्मक नीतियों का निर्माण एवं विकास।
8. पुस्तकालय के पंचसूत्रों की संस्तुति को ध्यान में रखते हुए नीतियों एवं योजनाओं का निर्माण एवं विकास।

## 3.9 सारांश

मानव संसाधन से आशय किसी भी संगठन में विभिन्न कार्यों को करने हेतु कार्मिकों से होता है, जबकि विकास का आशय सामान्य तौर पर कार्मिकों में विभिन्न प्रकार की क्षमताओं तथा योग्यताओं के विकास से है जो अपने वर्तमान या भावी कार्य को करने के लिए आवश्यक होती है। यह कार्मिक विकास की एक सार्वभौमिक प्रक्रिया है, जिसके अन्तर्गत संगठन के सभी स्तरों पर मानव शक्ति विकास आवश्यक है। प्रबन्धक द्वारा संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु मानव संसाधन के विकास पर अत्यधिक बल दिया जाता है, जिससे कार्मिकों के सामर्थ्य एवं कुशलता में वृद्धि होती है। मानव संसाधन विकास की प्रक्रिया, योजनाओं एवं कार्यक्रमों को कार्य रूप में परिणीत करती है तथा यह विभिन्न प्रकार की तकनीकों एवं उपकरणों के कार्यान्वयन का साधन है। समय के माँग के अनुरूप पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्र के प्रभावशाली एवं उच्च गुणवत्ता युक्त सेवा एवं उत्पाद, उपयोक्ताओं की संतुष्टि इत्यादि की प्राप्ति हेतु मानव संसाधन विकास कार्यक्रम को अपनाना चाहिए। इस हेतु पुस्तकालय में कार्मिक नियोजन, उपयोक्ताओं की संतुष्टि, अभिप्रेरणा, निष्पादन का मूल्यांकन इत्यादि महत्वपूर्ण युक्तियों का प्रयोग किया जाता है।

कार्मिक नियोजन सेविवर्गीय कार्यक्रमों का एक महत्वपूर्ण अंग है। यह मानव शक्ति की माँग एवं पूर्ति में सामन्जस्य स्थापित करने तथा उसके सही उपयोग, विकास एवं प्रतिरक्षण की व्यूह रचना है। इसका उद्देश्य, योग्य, कुशल, दक्ष, निपुण कर्त्तव्य परायण, समर्पित कर्मचारियों की निरन्तर पूर्ति द्वारा किसी संगठन के स्थायित्व एवं प्रगति में योगदान करना है। यह संगठन में निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है तथा संगठन के



HMDC-019

लक्ष्यों की पूर्ति के साथ-साथ कर्मचारियों के विकास एवं कार्य सन्तुष्टि पर भी बल देता है। पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों में भी कार्मिक नियोजन का अपना एक पृथक् महत्व है। क्योंकि वर्तमान पुस्तकालयों का सेवा एवं कार्य क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत हो गया है। आज पुस्तकालयों द्वारा अनेक प्रकार के कार्य एवं सेवायें जैसे-ऑन लाईन सूचना सेवा, चयनात्मक सूचना सेवा, ऑनलाईन प्रसूचीकरण, कम्प्यूटरीकृत सन्दर्भ एवं सूचना सेवा, सूचना संग्रहण एवं पुर्नप्राप्ति प्रक्रिया मे कम्प्यूटर का उपयोग करना, कम्प्यूटर नेटवर्किग, पुस्तकालय नेटवर्किंग, संसाधन सहभागिता तकनीकी, इत्यादि सेवाओं एवं कार्यों से सम्बन्धित तकनीकियों का ज्ञान पुस्तकालय कर्मचारियों को होना अत्यन्त आवश्यक है। अतः पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों में परिवर्तित परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए एक वृहद कार्मिक नियोजन प्रणाली अत्यन्त आवश्यक है।

## 3.10 अभ्यास कार्य :-

1. मानव संसाधन विकास को परिभाषित करते हुए इसकी आवश्यकता एवं उद्देश्य पर प्रकाश डालिए।
2. मानव संसाधन प्रबन्धन एवं प्रणाली पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिए।
3. पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों के बदलते परिवेश में मानव संसाधन विकास की आवश्यकता पर प्रकाश डालिए।
4. कार्मिक नियोजन की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए इसकी आवश्यकता एवं उद्देश्य पर प्रकाश डालिए।
5. कार्मिक नियोजन प्रक्रिया में सम्मिलित किये जाने वाले प्रमुख तत्वों की व्याख्या कीजिए।
6. कार्मिक नियोजन को परिभाषित करते हुए पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों में इसके महत्व को समझाइये।

## 3.11 सन्दर्भ ग्रन्थ


1. शर्मा, वी॰ के॰ और ठाकुर यू॰ एम॰ (2006), पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान दर्शिका, आगरा : वाई॰ के॰ पब्लिशर्स।
2. Bryon, J (1990), Effective Library and Information centre Management. Aldershot: Gower Publishing.

3. Rao, V.S.P. (2005), Human Resource Management, Text and Cases, New Delhi : Excel Books.

4. Rao, T.V. (1991), The HRD Missionary. New Delhi : Oxford IBH.

5. Mejia, G. et. al. (2003). Management Human Resources. New Jersey : Prentice Hall.

6. Indira Gandhi National Open University (2003) : School of Social Sciences. BLIS - 02, Part IV, Unit 13,14 New Delhi : IGNOU.

7. Cascio, WF (2004). Managing Human Resourses. New Delhi : Tata MeGraw Hill.

8. Walker, J (1980). Human Resource Planning. New York : MeGraw Hill.

9. Indira Gandhi National Open Univeristy (1994) Management of Library and Information Centres. MLIS-05, New Delhi: IGNOU.

10. MP Bhoj Open University (2009). BLIS-2, Block-4 Bhopal : MPBOU.

# इकाई -4 : सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन एवं सहभागी प्रबन्धन

## इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 विषय परिचय

4.2 सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन

- 4.2.1 सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन : अर्थ एवं परिभाषा
- 4.2.2 स्तम्भ एवं आवश्यकता
- 4.2.3 आवश्यक प्रवृत्तियाँ

4.3 सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन :तत्त्व

4.4 पुस्तकालय तथा सूचना केन्द्र प्रबन्धन में सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन की तकनीकों का कार्यान्वयन

4.5 सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन के कार्यान्वयन में बाधक तत्त्व

4.6 सहभागी प्रबन्धन

- 4.6.1 परिभाषा
- 4.6.2 प्रबन्धन में सहभागिता के उद्देश्य

4.7 सहभागिता के स्वरूप

4.8 पुस्तकालयों तथा सूचना केन्द्रों में सहभागी प्रबन्धन

4.9 सहभागी प्रबन्धन : लाभ तथा हानि

4.10 सारांश

4.11 अभ्यास कार्य

4.12 सन्दर्भ ग्रंथ

## 4.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन का अर्थ, आवश्यकता, तत्व, पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्र द्वारा प्रदत्त सेवाओं में इसके द्वारा बर्द्धन, इसकी तकनीकों का कार्यान्वयन इत्यादि पर प्रकाश डाला गया है। तत्पश्चात् सहभागी प्रबन्धन के अर्थ, घटकों, उपयोगिता, अनुप्रयोग को भी प्रस्तुत किया गया है।

इस इकाई में सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन एवं सहकारी प्रबन्धन की धारणा, विशेषताओं, अनुप्रयोग इत्यादि को स्पष्ट किया गया है। आशा है कि विद्यार्थी प्रस्तुत

इकाई के माध्यम से सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन एवं सहभागी प्रबन्धन से पुस्तकालयों तथा सूचना केन्द्रों को होने वाले लाभों को समझने में सक्षम हो सकेंगे।

## 4.1 विषय - परिचय

प्राचीन समय में पुस्तकालयों को केवल पुस्तकों के भण्डार गृह के रूप में देखा जाता था। लेकिन वर्तमान में आधुनिक तकनीक के विकास और इस्तेमाल से पूरा दृश्य ही बदल चुका है। अब इन्हें पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों के नाम से जाना जाता है। क्योंकि वर्तमान में ये केन्द्र न सिर्फ सूचना का संचय एवं सुरक्षा करते हैं, बल्कि पाठकों के सर्वोत्तम उपयोग एवं लाभ के लिए सूचना के उत्पादन एवं प्रसार की बढ़ती दर, पाठकों की सूचना की बढ़ती एवं जटिल जरूरतों, अलग-अलग सूचना का परस्पर अनुशासन सम्बन्धी रूप साधनों की लगातार रुकावट तथा सूचना के गुण एवं विश्वसनीयता के बहुत ज्यादा बदलाव ने पुस्तकालयाध्यक्षों अथवा सूचना अधिकारियों के सामने एक बहुत बड़ी चुनौती पैदा कर दी है, कि सूचना का किस तरह से प्रबन्ध हो ताकि पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्र सही पाठक को सही समय पर सही सूचना प्रदान कर सकें।

सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों में उपयोगकर्ताओं की आवश्यकता पर केन्द्रित होता है। किसी पुस्तकालय का संरक्षक अथवा उपयोक्ता एक ग्राहक की तरह होता है। सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन संगठन की प्रक्रियाओं, नीतियों तथा कार्यों की रूपरेखा तैयार करने के प्रति एक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। ताकि गुणवत्ता युक्त सेवायें प्रदान करने के लिए प्रभावशाली तथा सर्वश्रेष्ठ विधि अपनाई जा सके। उपयोक्ताओं की सेवा करने के लिए पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्र द्वारा दी जाने वाली सेवाओं की गुणवत्ता पर निगरानी रखने मात्र से गुणवत्ता में सुधार नहीं होता, बल्कि इससे केवल उपयोक्ता को गलत सेवायें न दिये जाने को ही ध्यान में रखा जाता है। सेवा में सुधार का मतलब है कि केवल दोष शून्य (जीरो डिफेक्ट) सेवायें प्रदान की जायें। इसके लिए संगठन के सम्पूर्ण विचार प्रणाली, कार्य प्रणाली और सेवा प्रणाली में गुणवत्ता के प्रति सजगता और चेतनता होती है। संगठन के उद्देश्य की प्राप्ति हेतु एकरूपता स्थापित करनी पड़ती है। ऐसी एकरूपता संगठन के सभी क्षेत्रों में स्थापित करने हेतु सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन की धारणा को अपनाया जाता है।

प्रबन्धकीय विचारधारा में परिवर्तन होने के फलस्वरूप प्रबन्धकों का दृष्टिकोण बदला एवं उद्योगपतियों के सोच में सुधार दृष्टिगत हुआ है। वर्तमान में कर्मचारियों को

प्रबन्धन का एक महत्वपूर्ण स्तम्भ समझा जाता है और उनके सुझावों, तर्कों, विचारों को प्रधानता के साथ प्रबन्धकीय निर्णयों में सम्मिलित किया जाता है। कर्मचारियों के साथ विचार-विमर्श करके तथा निर्णय प्रक्रिया में शामिल करके, किसी संगठन की नीतियों व योजनाओं का निर्माण किया जाने लगा है। वर्तमान में कर्मचारियों के दृष्टिकोणों, अभिमतों, विचारों, तर्कों, सुझावों, प्रस्तावों, कठिनाइयों सृजनात्मक परामर्श, सूचनाओं, इत्यादि को प्रबन्धकीय निर्णयों का आधार बनाया जाता है तथा कर्मचारियों को एक सहयोगी, सहकर्मी एवं साझेदार के रूप में स्वीकार किया जाता है। इसी को सहभागी प्रबन्धन के रूप में जाना जाता है यह एक ऐसी प्रबन्धकीय तकनीकि है, जो कर्मचारियों, व्यक्तियों अथवा समूह के निर्णय लेने को प्रक्रिया में शामिल करती है। पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों के उद्देश्य की पूर्ति हेतु सहभागी प्रबन्धन कर्मचारियों की प्रभावशीलता तथा कार्यकुशलता को सुधारती है।

पुस्तकालयों तथा सूचना केन्द्रों में सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन और सहभागी प्रबन्धन एक दूसरे से भली-भाँति अनुकूल दिखाई देते हैं। सहभागी प्रबन्धन में व्यक्ति अथवा कर्मचारी निर्णय लेने की प्रक्रिया में शामिल होते हैं तथा निर्णयों पर पहुँचते हैं, जबकि ग्राहकों की आवश्यकताओं को समझने तथा उनकी सेवा एवं संतुष्टि में अनवरत सुधार हेतु सम्पूर्ण गुणवत्ता एक उपयोगी व युक्तिपूर्ण प्रबन्धन उपकरण है।

## 4.2 सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन :

सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन में पाठकों की संतुष्टि के साथ प्रदान की जाने वाली सेवाओं, सामानों तथा अन्य उत्पादों में विशेषकर विज्ञान और तकनीकी क्षेत्र में पूरे संसार में लाभ कमाने के साथ-साथ गुणवत्ता सबसे प्राथमिक कदम होता है। आज के इस प्रतियोगी युग में संस्थानों अथवा व्यक्तियों को अपने पाठकों की अधिकतम संतुष्टि के लिए गुणवत्ता पर वचनबद्धता होती है। इस प्रकार की अवधारणा सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन को जन्म देती है। यह भारत तथा संसार के अन्य देशों द्वारा भी सर्वसम्मति से स्वीकार की गई है।

सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन से अभिप्राय किसी संगठन के सभी कर्मचारियों के कार्यों तथा सेवाओं की गुणवत्ता में लगातार सुधार करना है। सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन को अच्छी तरह से समझ सकते हैं यदि हम इसके प्रत्येक शब्द को अलग-अलग देखें।

सम्पूर्ण- प्रत्येक व्यक्ति, प्रत्येक स्तर, प्रत्येक कार्य, प्रत्येक प्रक्रिया तथा प्रतिदिन।

गुणवत्ता- प्रत्येक वस्तु में लगातार सुधार, जो हम करते हैं।

प्रबन्धन-प्रबन्ध के कार्यों, संगठन, व्यवस्थापन, नियंत्रण और पी.डी.सी.ए. चक्र (Plan, Do, Check, Act) के द्वारा लगातार सुधार करना।

अतः संक्षेप में हम कह सकते हैं कि सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन लगातार गुणवत्ता पर नियन्त्रण करता है। इसमें सभी की सहभागिता है, इसलिए यह आन्तरिक तथा बाह्य पाठकों की आवश्यकताओं की संतुष्टि करता है।

## 4.2.1 सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन : अर्थ एवं परिभाषा -

सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन के द्वारा किसी भी संगठन का कर्तव्य होता है कि वह सभी व्यक्तियों की गुणवत्ता कायम रखे। सभी सम्बन्धित व्यक्तियों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे गुणवत्ता सुधार में योगदान करें। सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन, ग्राहक संतुष्टि हेतु एक उपयुक्त विधि हैं। सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन की अवधारणा उद्योगों, कारखानों, कम्पनियों, व्यापार एवं संगठनों में अनुप्रयुक्त की जाती रही है। परन्तु वर्तमान में यह संस्थानों एवं सेवा प्रतिष्ठानों में भी प्रयोग में लायी जा रही है। ग्राहक/उपयोक्ता सामान्य रूप से दो प्रकार के होते हैं। - आन्तरिक एवं बाह्य। किसी भी शैक्षणिक पुस्तकालय में अध्यापक, छात्र और बाहरी उपयोक्ता जो पुस्तकालय से सूचना प्राप्त करने आते हैं, वे बाह्य उपयोक्ता कहलाते हैं। जबकि पुस्तकालय में कार्यरत व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह को आन्तरिक उपयोक्ता कहते हैं। सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन एक दर्शन एवं प्रक्रिया है। जिसका परिणाम ग्राहक संतुष्टि एवं अनवरत सुधार है। प्रबन्धन की यह एक ऐसी शैली है, जिसमें वैज्ञानिक प्रबन्धन एवं प्रतिभागी प्रबन्धन के उपयुक्त सिद्धान्त एंव अभ्यास सम्मिलित किये जाते हैं। जिससे संगठन को सफलता मिल सकें।

किसी भी संगठन में प्रभावीकरण, उत्कृष्टता, लचीलापन, प्रतियोगितात्मक भावना में सुधार, तथा सम्पूर्ण संस्था को संगठित एवं सभी विभागों, व्यक्तियों में प्रत्येक स्तर पर गुणवत्ता कायम रखने का प्रयास सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन के द्वारा ही किया जाता है। इसके सफलता हेतु प्रभावी प्रशिक्षण, क्रियान्वयन और कार्यकारी भूमिका अत्यावश्यक है। सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन सभी क्रियाकलापों की नींव है, जिसके अन्तर्गत निम्न सम्मिलित हैं -

1. उच्च स्तरीय प्रबन्धक एवं सभी कर्मचारियों का संकल्पित होना।
2. उपयोक्ताओं की आवश्यकताओं का समुचित समाधान।



HMDC-019

3. विकासीय चक्र का समय कम करना।

4. उच्च सुधार युक्त समूह।

5. स्वयं केन्द्रित के अपेक्षा उपयोक्ता केन्द्रित।

6. बाह्य एवं आन्तरिक पंक्ति।

7. पद्धतियाँ जो सुधार को प्रोत्साहित करें।

8. पूर्ण सहभागिता, अनवरत सुधार एवं नेतृत्व भावना / संकल्प।

9. मान्यता एवं प्रशंसा।

10. उद्देश्यों हेतु चुनौतियों एवं दृष्टान्त।

11. प्रक्रिया केन्द्रित।

12. स्ट्रेटेजिक योजना में विशिष्ट समावेश।

उपरोक्त कथन से स्पष्ट है कि सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन का अनुप्रयोग सभी क्रियाकलापों हेतु सभी व्यक्तियों द्वारा, चाहे उत्पादकता, विपणन, इन्जीनियरिंग, शोध एवं विकास, विक्रय, क्रय, मानव संसाधन आदि से सम्बन्धित हो, किया जा सकता है।

**परिभाषा : -**

सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन, "सहभागी प्रबन्ध को कार्यरूप देकर तथा पाठकों की आवश्यकताओं पर ध्यान केन्द्रित कर निरंतर सुधार की पद्धति है।"

सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन की परिभाषा का व्याख्यान विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न तरीके से किया है। इसलिये सर्वसम्मति से कोई एक विस्तृत परिभाषा देना बहुत ही कठिन कार्य है।

जेसफ एवं वर्क के अनुसार - "सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन एक निरन्तर सुधार, गलतियों का पता लगाकर उनको रोकना, उपयोक्ता केन्द्रित और सार्वभौमिक उत्तरदायित्व वाली प्रक्रिया है, जो उपरोक्त चारों तत्वों पर आधारित होती है।"

टर्नर एवं डीटोरो के अनुसार - "सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन आधारित है: एक लक्ष्य निरन्तर सुधार, तीन सिद्धान्त - उपयोक्ता केन्द्रित, बढ़ाने की प्रक्रिया तथा सभी की भागीदारी, छः सहायक तत्व-नेतृत्व, शिक्षा और प्रशिक्षण, सहायक संरचना, संचार,

इनाम पहचान और मापक उपयोक्ता केन्द्रित।''

ISO 8402 के अनुसार - ''सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन किसी भी संगठन में गुणवत्ता केन्द्रित प्रबन्धकीय अभिगम है, जो संगठन के सभी व्यक्तियों की प्रतिभागिता पर आधारित हो और जिसका उद्देश्य दीर्घकालिक सफलता प्राप्त करना है। जो उपयोक्ताओं संतुष्टि एवं संगठन के सभी व्यक्तियों तथा समाज के लिए लाभप्रद हो।''

जायरा एवं जूरो के अनुसार - ''यह सम्मिलित रूप से सामाजिक, आर्थिक और तकनीकी प्रक्रिया है, जो बाह्य रूप से सही कार्य को करें एवं आन्तरिक रूप से सब कुछ सही हो। सर्वप्रथम एवं सदैव प्रक्रिया के सभी स्तरों में आर्थिक दृष्टिकोण विचारणीय है।''

अतः सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन का आशय सर्वोत्तम उपलब्धि प्राप्ति हेतु सही दिशा में गलतियों पर नियंत्रण स्थापित करना तथा उपयोक्ता की अधिकतम सन्तुष्टि, दक्षता एवं प्रभावीकरण में वृद्धि के द्वारा सम्भव है। वस्तुतः यह एक विचार है, जो गुणवत्ता को कायम करने हेतु संस्था के प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य एवं दायित्व होता है। सभी व्यक्तियों से यह अपेक्षा की जाती है कि गुणवत्ता में सुधार हेतु योगदान करें। सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन उपयोक्ता सन्तुष्टि में वृद्धि हेतु एक उपयुक्त पद्धति है, जिसके द्वारा संगठन की त्रुटि को दूर एवं उत्पादकता में वृद्धि किया जा सकता है।

### 4.2.2 स्तम्भ एवं आवश्यकता -

किसी भी संगठन मे सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन के निम्न स्तम्भ होते हैं -

1. संगठनात्मक दृष्टि
2. उपयोक्ता केन्द्रित
3. तथ्यपरक प्रबन्धन
4. सभी की भागीदारी
5. निरन्तर सुधार
6. प्रणात्मक सहायता

हम कह सकते हैं कि सम्पूर्ण गुणवत्ता एक यात्रा है ना कि कार्यक्रम, जो कार्य समाप्ति के साथ ही समाप्त हो जाय। यह तो सामूहिक क्रिया है और मानवता के लिए उदारपूर्ण प्रबंध करने के लिए यह तत्त्व एवं आँकड़ों का प्रबन्धन है। सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन की सारी संरचना निम्न चार स्तम्भों पर आधारित है-


HMDC-019

1. पाठकों को संतुष्ट करना,
2. उच्च प्रबन्ध नेतृत्व एवं भागीदारी,
3. सभी की भागीदारी, तथा
4. लगातार सुधार।

सम्पूर्ण संगठन के प्रबन्ध द्वारा उत्पादों एवं सेवाओं के सभी आयामों में गुणवत्ता वृद्धि हो जो उपयोक्ताओं के लिए महत्वपूर्ण हैं। सम्पूर्ण गुणवत्ता के उपकरण एवं विधि द्वारा संगठन के सभी भागों/ इकाईयों में विकास होता है। सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन, क्रियाकलापों के समस्त क्षेत्रों में आवश्यक होता है यह पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के शिक्षा के क्षेत्र में भी आवश्यक है, जिसके द्वारा विद्यार्थियों, कर्मचारियों, शोधार्थियों आदि से उत्कृष्ट परिणाम की आशा की जा सकती है।

नारायण ने सम्पूर्ण गुणवत्ता अभिगम हेतु निम्न छः आवश्यकताओं को सुझाया है -

1. उच्च प्रबन्ध समर्पण,
2. स्थिति परिवर्तन,
3. निरंतर सुधार,
4. निरीक्षण दृढ़ता,
5. सम्पूर्ण प्रशिक्षण, तथा
6. कार्य निष्पादन की मान्यता।

## 4.2.3 आवश्यक प्रवृत्तियाँ -

सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन व्यवस्था लागू करने में प्रबन्धन को निम्न आवश्यक प्रवृत्तियाँ विकसित करनी पड़ती हैं-

1. पुस्तकालय के प्रत्येक स्तर पर यह संकल्प हो कि हमारे उपयोक्ताओं को प्रतिस्पर्धियों से अधिक संतोष प्राप्त हो।
2. पुस्तकालय के कर्मचारियों में ऐसा परिवर्तन लाया जाय कि वे खुलकर अपनी प्रतिभा का लाभ पुस्तकालय को पहुँचा सकें।
3. कर्मचारियों को चाहिए कि रूचिहीन कार्यों में भी गुणवत्ता पर समुचित ध्यान दें।


HMDC-019

4. समस्त क्रियाकलापों के मुख्य परिणामों का मूल्यांकन करें।
5. प्रौद्योगिकी का उचित एवं सक्षम उपयोग करें।
6. निरंतर सीखने और कार्य में सुधार लाने की प्रवृत्ति विकसित करें।
7. कर्मचारी स्वयं को नियमित करें।
8. हमेशा विविध व्यक्तियों एवं विभागों से विचारों का आदान-प्रदान करें।
9. सच्चाई एवं विकास से कार्य करें।
10. सभी कर्मचारियों को विश्वास में लेकर गुणवत्ता के कार्यक्रम चलाएँ।
11. सर्वोत्तम पुस्तकालय के क्रियाकलापों से प्रेरणा लें।
12. संगठन की संस्कृति के दोषों को पहचानकर उन्हें समाप्त करने हेतु प्रयास करें।

उपरोक्त प्रवृत्तियों का पालन करने वाले संगठन में एक ऐसे वातावरण का सृजन होता है, जिससे पुस्तकालय द्वारा प्रदत्त सेवा की गुणवत्ता में सुधार होने की संभावनाएँ बढ़ जाती हैं। सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन की प्रणाली को स्पष्ट करने के लिए गुणवत्ता विशेषकों / विद्वानों ने विभिन्न मॉडल्स सुझाये हैं। तीन प्रमुख मॉडल्स को संक्षेप में निम्न रूपों में प्रस्तुत किया जा रहा है -

**( अ ) जूरान मॉडल -**

जूरान ने तीन घटकों - आधारशिला, प्रणाली रचना और प्रक्रिया में आवश्यक सुधार लाने की बात की है। आधारभूत घटक में संगठन की नीति और योजना, प्रबन्धकों के नेतृत्व का स्वरूप एवं उपयोक्ता को संगठन का केन्द्र बिन्दु समझने की प्रवृत्ति को स्थान दिया गया है। प्रणाली रचना से तात्पर्य गुणवत्ता प्रणाली की स्थापना से है, जबकि प्रक्रिया का आशय गुणवत्ता योजना, गुणवत्ता नियन्त्रण और गुणवत्ता सुधार है। जूरान का यह मॉडल आश्वस्त कराता है कि यदि संगठन में उपरोक्त तीनों घटक उपलब्ध हो तो परिणाम अत्यन्त लाभप्रद हो सकते हैं। एक ओर संगठन की आय में वृद्धि तथा लागत में कमी आ सकती है और दूसरी ओर न केवल कर्मचारी अपितु ग्राहक भी प्रसन्न रहेगे और यही सम्पूर्ण गुणवत्ता के सर्वोपरि उद्देश्य है।

**( ब ) डेमिंग मॉडल -**

डेमिंग महोदय ने गुणवत्ता प्रबन्धन की विद्या को उत्पादन क्षेत्र तक ही सीमित रखा। डेमिंग ने नियोजन, क्रियान्वयन, निरीक्षण, निष्पादन का चक्रीय मॉडल प्रस्तुत


HMDC-019

किये। डेमिंग ने गुणवत्ता मे सुधार हेतु निरन्तर प्रक्रिया पर बल दिया। उनके अनुसार सुधार की कोई निश्चित सीमा तय नहीं है। डेमिंग ने सुधार रूपी परिणाम आने पर कर्मचारियों को इसके श्रेय एवं पुरस्कृत करने पर बल दिया।

**(स) टेग्यूची मॉडल -**

टेग्यूची के अनुसार संगठनों में कार्य प्रवाह की दिशा वितरकों से निर्माताओं और बाद में निर्माताओं से ग्राहकों की ओर रहती है। टेग्यूची ने कहा कि कार्य के प्रवाह का आरम्भ ग्राहकों से निर्माताओं और बाद में निर्माताओं से सप्लायर्स तक होना चाहिए। क्योंकि ग्राहकों की आवश्यकता संगठन के उत्पाद को तय करती है और उत्पाद तय होने पर संगठन वितरकों से आवश्यक उत्पाद लेता है। अतः संगठन का अस्तित्व ग्राहकों पर अवलम्बित रहता है।

## 4.3 सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन :

सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन पाठकों की आवश्यकताओं को समझकर पाठकों को उसकी सेवा और संतुष्टि को सुधारने पर केन्द्रित है। सम्पूर्ण गुणवत्ता के कई तत्त्व हैं, जो परिवर्तन के लिए विभिन्न क्षेत्रों को सम्बोधित करते हैं। इन तत्वों को निम्न चित्र के माध्यम से दर्शाया गया है -

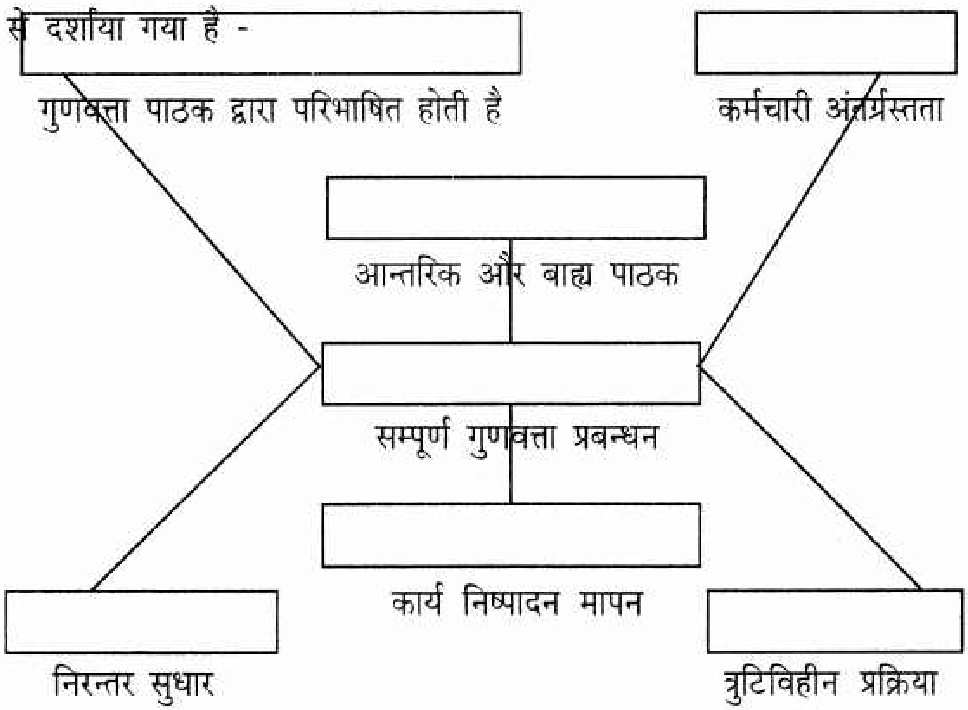


**(1) गुणवत्ता पाठक द्वारा परिभाषित होती है -**

किसी पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्र में सेवा की गुणवत्ता या सेवा की श्रेष्ठता, पाठकों की सेवा की इच्छा के, पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों के प्रति उसके बचनबद्धता

पर निर्भर करती है। गुणवत्ता पाठकों के द्वारा ही परिभाषित होती है, इसलिए पाठकों पर ध्यान केन्द्रित करने के लिए केवल आंतरिक प्रक्रियाओं की ओर ही ध्यान केन्द्रित करने के लिये आंतरिक प्रक्रियाओं की ओर ही ध्यान देने की नहीं अपितु, बाह्य बाजार की जानकारी भी आवश्यक है। केवल बाजार स्थल की आवश्यकताओं तथा आंतरिक प्रक्रियाओं की तुलना करने पर ही हम अपने पाठक को सम्पूर्ण गुणवत्ता वाली सेवा प्रदान कर सकते हैं।

**( 2 ) आन्तरिक एवं बाह्य पाठक -**

पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों को अपने आन्तरिक एवं बाह्य नवीनीकरण के लिये प्रशिक्षण तथा कौशल निर्माण के कार्यक्रमों में वृद्धि करने के अपने प्रयासों में 'ज्ञान प्राप्ति तथा संसाधन केन्द्र' के रूप में कार्य करते रहना चाहिये। पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों को अपने आन्तरिक एवं बाह्य पाठकों के सीधे सम्पर्क में रहना चाहिए। जिससे प्रत्येक कर्मचारी उन्हें पहचान सके। जिन्हें वे अपनी सेवा प्रदान करते हैं।

**( 3 ) कर्मचारी अंतर्ग्रस्तता -**

कर्मचारी अंतर्ग्रस्तता का अर्थ है कि प्रत्येक कर्मचारी को प्रारम्भिक पहल करनी चाहिए, दूसरो पर निर्भर नहीं रहना चाहिए क्योंकि पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों में सभी की भागीदारी से ही पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्र अपने उद्देश्य में सफल हो सकता है। अतः प्रत्येक कर्मचारी को ये समझना चाहिए कि वह समान रूप से योगदान करता है तथा वह केवल सहयोग और सहायता से ही सफल हो सकता है।

**( 4 ) त्रुटिविहीन प्रक्रिया -**

सम्पूर्ण गुणवत्तां प्रबन्धन का मुख्य उद्देश्य पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों में अपव्यय को रोकना, लागत को कम करना, अधिक प्रभावशाली तथा अधिक कुशल होना और त्रुटि विहीन प्रक्रियाओं को प्राप्त करना होता है। अतः प्रक्रियाओं को आलोचना, विश्लेषण तथा मूल्यांकन के लिए खुला रखना चाहिए।

**( 5 ) कार्य निष्पादन मापन -**

कार्य निष्पादन मापन एक निश्चित अन्तराल के बाद लगातार मापन करने पर आधारित होता है। इससे वर्तमान सेवा की सूचना मिलती है तथा पिछले कार्य निष्पादन मापन के साथ तुलनात्मक सुधार के स्तर का एक संकेत मिलता है। इस उद्देश्य के लिए एक समुचित प्रश्नावली की निर्माण करना चाहिए, जिससे उसकी कमजोरी तथा प्रगति दोनों का मूल्यांकन आसानी से समझा जा सके।

**( 6 ) निरन्तर सुधार -**

HMDC-019

पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों द्वारा अपना लक्ष्य निर्धारित करने चाहिए तथा उन लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु निरन्तर सुधार करना चाहिए। इसके लिए प्रशिक्षण, शिक्षा, संप्रेषण, उपलब्धियों आदि कार्यों को मान्यता प्रदान करने पर ध्यान देना भी बहुत आवश्यक है। प्रबन्धक को चाहिए कि कार्य करने के सभी क्षेत्रों में सुधार लाने हेतु सभी स्तरों पर सभी कर्मचारियों को प्रोत्साहित करने तथा प्रशिक्षण देने को अपने उत्तरद्रायित्व को पूरा करें। यदि आवश्यक हो तो पाठकों तथा कर्मचारियों दोनों को प्रौद्योगिकी तथा उपकरणों के बारे में तथ्य एकत्र करने के लिए सांख्यिकीय सर्वेक्षण तकनीकों के प्रयोग हेतु प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, जिससे पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों में निरन्तर सुधार किया जा सके।

## 4.4 पुस्तकालय तथा सूचना केन्द्र प्रबन्धन में सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन की तकनीकों का कार्यान्वयन-

सूसन तथा बर्नाड ने पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों की व्यवस्था में सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन के कार्यान्वयन हेतु एक मॉडल प्रस्तुत किया है। सूसन तथा बर्नाड के मॉडल में चार स्तर एवं प्रक्रिया के दस चरण हैं। इसे चित्र में दर्शाया गया है। इसमें लचीलापन होने के फलस्वरूप इसे विभिन्न परिस्थितियों में अपनाया जा सकता है, जो पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों के अन्दर एवं बाहर, सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन के कार्यान्वयन हेतु सहयोग के स्तर पर निर्भर करता है।

प्रथम दशा में उन प्रौद्योगिकी विकासों तथा सामाजिक परिवर्तनों से सम्बन्धित क्रियाकलापों को समाविष्ट किया जाता है, जो पुस्तकालय समुदाय के विकास को सुनिश्चित करते हैं। द्वितीय दशा में संगठन करने की गुणवत्ता पर अधिक बल दिया जाता है। इसके अन्तर्गत कर्मचारियों को गुणवत्ता एवं सेवा के प्रति जागरूक एवं स्वचालन प्रशिक्षण सम्मिलित हैं। तृतीय दशा में वर्तमान क्रियाकलापों का सांगोपांग मूल्यांकन एंव इसका ग्राहकों की आवश्यकताओं से सम्बन्ध स्थापित करना होता है। इसके अन्तर्गत टीम के क्रियाकलापों को महत्व देते हुए टीम के सदस्यों की गुणवत्ता वृद्धि हेतु ग्राहक सेवा के विभिन्न पक्षों से सम्बन्धित प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है, जिसमें पाठक / ग्राहक की अपेक्षा सम्मिलित है। चतुर्थ दशा में सघन प्रशिक्षण पर अत्यधिक बल दिया है। अगर कार्य प्रक्रिया मे परिवर्तन किया जा रहा है तो नवीन कौशलों हेतु कर्मचारियों को सघन प्रशिक्षण की आवश्कता होगी यथा-पुस्तकालय

कम्प्यूटरीकृत करने पर।

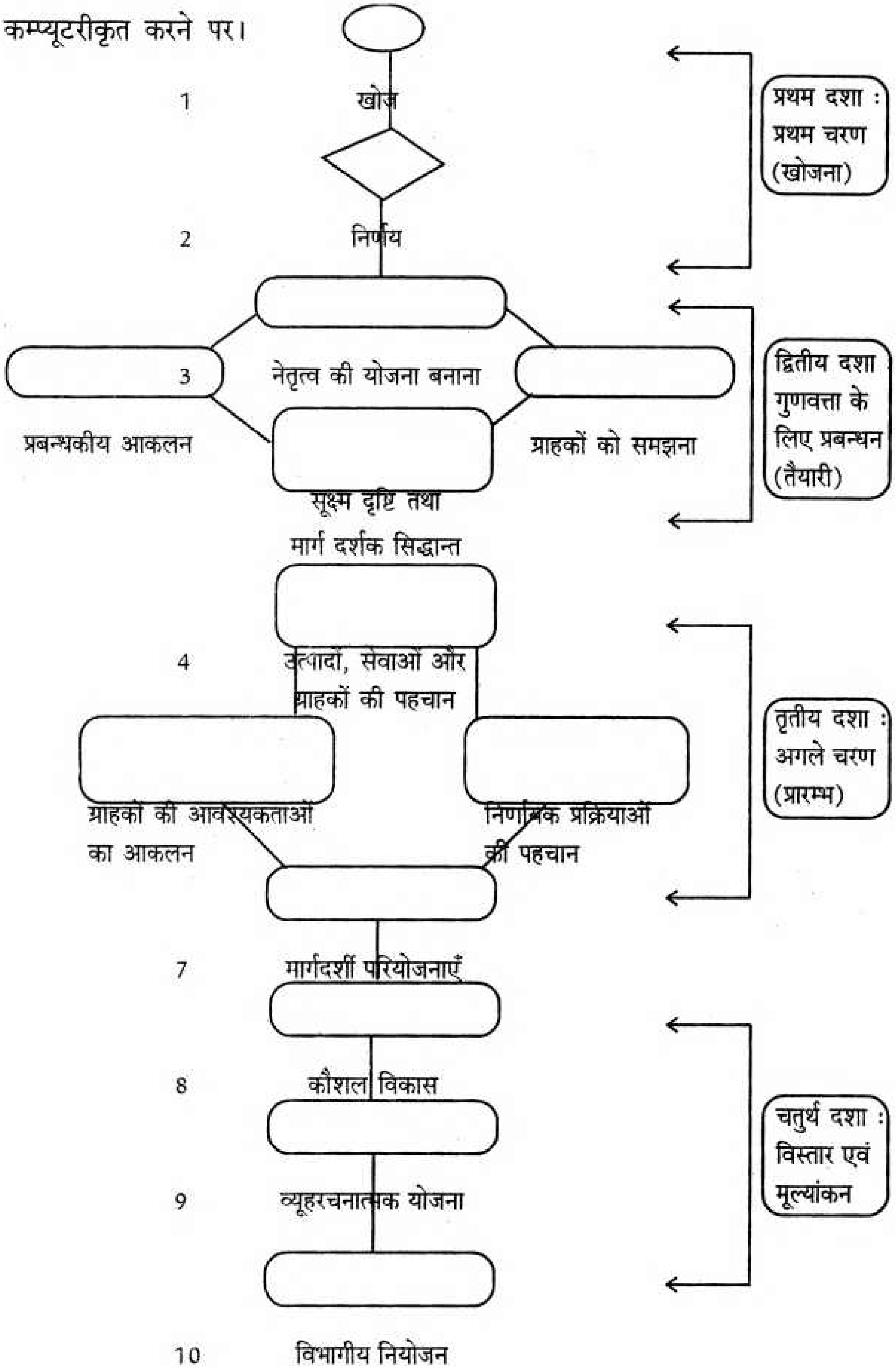


(चित्र : सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन पुस्तकालय कार्यान्वयन सूसन तथा बर्नाड मॉडल)

पुस्तकालयों तथा सूचना केन्द्रों में सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन के सफल कार्यान्वयन हेतु ग्राहकों की पहचान, कार्य प्रक्रियाओं का मानकीकरण, गुणवत्ता मापन प्रक्रिया, आंतरिक संगठन के प्रबन्धन में सुधार तथा मानव संसाधन प्रबन्धन में सुधार की

आवश्यकता होती है।

सिरकिन ने सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन सिद्धान्त के द्वारा पुस्तकालय तथा सूचना केन्द्रों की सेवाओं में वर्धन हेतु निम्न उपाय सुझाये हैं-

1. पुस्तकालय ब्रोशर का निर्माण।
2. पुस्तकालयं ओरियंटेशन।
3. अर्न्तपुस्तकालय आदान-प्रदान की सुविधा अपनाना।
4. सरल एवं सुगम अधिग्रहण प्रक्रिया।
5. सूचना पुर्नः प्राप्ति हेतु तकनीकी का उपयोग।
6. कर्मचारियों का प्रशिक्षण एवं विकास।
7. अभिप्रेरणा
8. उपयोक्ता आधारित सूचना सेवा।
9. सेवा ब्रोशर का निर्माण।
10. पुस्तकालय सेवा पर उपयोक्ता सर्वेक्षण करना।
11. पुस्तकालय अवधि में आवश्यक परिवर्तन करना।
12. कर्मचारी अधिन्यास में लचीलापन अपनाना।
13. वेन्डर द्वारा उत्पादन प्रदर्शन करवाना।
14. नये कर्मचारियों को उपयुक्त ओरियंटेशन प्रदान करना।
15. पुस्तकालय की भौतिक परियोजना में सुधार करना।
16. नयी या परिवर्तित सेवाओं को उपयोक्ताओं के संज्ञान में लाना।
17. उपयोक्ता एवं कर्मचारियों के प्रशिक्षण से सम्बन्धित सामग्रियों का विकास करना।
18. विशिष्ट समूह हेतु लक्षित सेवा की व्यवस्था।
19. इलेक्ट्रानिक प्रलेखों का लेखा-जोखा प्रस्तावित करना।
20. सदैव प्रसन्नचित रहना।

## 4.5 सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन के कार्यान्वयन में बाधक तत्त्व-

पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों के विभिन्न कार्यों एवं सेवाओं मे सम्पूर्ण गुणवत्ता

प्रबन्धन के कार्यान्वयन को प्रभावशाली ढंग से सक्षम बनाने हेतु कर्मचारियों की योग्यता एवं कार्यकुशलता में वृद्धि करने के लिए नवीन ज्ञान एवं तकनीकी प्रशिक्षण का सुअवसर प्रदान करना आवश्यक है। उपयुक्त उपायों के उपरान्त भी पुस्तकालयों में सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन के कार्यान्वयन में कुछ बाधक तत्व दृष्टिगोचर होते हैं, जिनका संक्षिप्त वर्णन अग्रलिखित है-

**( 1 ) शब्दावली की बाधा -**

सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन में प्रयुक्त शब्द ही इस ओर ध्यान आकर्षित करते हैं कि किसी संस्था विशेष के लिए निर्धारित मानकों का वहाँ उल्लंघन किया जा रहा है, साथ ही अपनी सेवाओं अथवा उत्पादों को गुणवत्ता पर भी ध्यान नहीं दिया जा रहा है।

**( 2 ) वचनबद्धता की बाधा -**

इस अध्याय में यह पहले ही स्पष्ट किया जा चुका है कि सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन एक दीर्घकालीन वचनबद्धता पर आधारित प्रक्रिया है। अतः पुस्तकालयों एवं सूचना केन्द्रों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे अपने क्रियाकलापों एवं सेवा क्षेत्रों में अधिक दीर्घकालीन बवचनबद्धता का पालन करें। ताकि पुस्तकालय की सेवाओं एवं कर्मचारियों की कार्य कुशलता में सकारात्मक परिवर्तन हो सके। परन्तु पुस्तकालय के कार्यों एवं सेवाओं की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए ऐसे परिवर्तनों को इस प्रक्रिया के अन्तर्गत अतिशीघ्र लाया जाना नितान्त आवश्यक होता है।

**( 3 ) प्रक्रियापरक बाधा -**

सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन की प्रक्रिया के अन्तर्गत किसी विषय या समस्या पर निर्णय लेने या स्थगित करने या उस समस्या पर अनिच्छा प्रकट करने या समस्या के समाधान की माँग का ही प्रतिनिधित्व किया जाता है। अतः प्रक्रिया के अन्तर्गत यह अत्यन्त आवश्यक है कि समस्या या विषय विशेष को सर्वप्रथम भलीभाँति परिभाषित करना चाहिए तथा उनके विश्लेषण हेतु क्रमिक प्रक्रियाओं का प्रयोग करना चाहिए तभी समस्या विशेष का दीर्घकालीन समाधान प्राप्त किया जा सकता है।

**( 4 ) व्यवसायिक बाधा -**

वस्तुतः सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन किसी संस्था या पुस्तकालय विशेष से पूर्ण व्यावसायिक की अपेक्षा रखती है, विशेषकर पुस्तकालय के सेवाओं, कार्यों एवं उपयोक्ता के प्रति। अतः यदि सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्ध के इस दृष्टिकोण का पालन किया जाये तो आवश्यकता से अधिक मानकों, परम्पराओं इत्यादि के कारण पुस्तकालय की कार्यशीलता एवं उपरोक्त का पुस्तकालयों के प्रति दृष्टिकोण में प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। पूर्ण व्यावसायिकता



HMDC-019

के पक्ष पर किसी संस्था को उतना ही सहमत होना चाहिए जितना संस्था एवं उपयोक्ता दोनों के हित में हो।

## 4.6 सहभागी प्रबन्धन -

वर्तमान समय में प्रबन्धकों का परिवर्तित दृष्टिकोण एवं उद्योगपति के चिन्तन में सुधार के फलस्वरूप कर्मचारियों को अब एक वस्तु, पुर्जा, निर्जीव साधन, नौकर नहीं समझा जाता है, अपितु उसे सजीव, सहकर्मी एंव सदस्य के रूप में मान्य किये जाने लगा है। कर्मचारियों को अब प्रबन्धन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा समझा जाता है तथा उसके मत, अभिव्यक्ति, विचार, सुझाव आदि को निर्णय लेने की प्रक्रिया में सम्मिलित किया जाता है। प्रबन्धकीय नीतियों एवं योजनाओं का निर्माण के पूर्व कर्मचारियों से विचार-विमर्श एवं निर्णय प्रक्रिया में सम्मिलित किया जाता है। अतः कर्मचारियों को वर्तमान में एक सहयोगी, सहकर्मी एवं साझेदार के रूप में स्वीकार किया जाता है। निर्णय लेना किसी संगठन का अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रबन्धन प्रक्रिया है। किसी भी क्रियाकलाप का नियोजन एवं सफलतापूर्वक समापन, निर्णय के बिना नहीं हो सकता है। निर्णय दूरदृष्टिगामी होने पर अच्छे परिणाम प्राप्त हो सकते हैं। उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि आधुनिक प्रबन्धन तकनीकें सहगामी निर्णय लेने के प्रयोग को प्रोत्साहित करती है। इस प्रबन्धकीय विचारधारा में प्रबन्धक एक नेता के रूप में होता है तथा वह कर्मचारियों की सलाह से तुलनात्मक रूप में उत्तम निर्णय प्राप्त करने में समर्थ होता है। यह प्रबन्धन तकनीकी अपने कर्मचारियों, व्यक्तियों तथा समूहों को निर्णय लेने की प्रक्रिया में सम्मिलित करती है तथा इसी को सहभागी प्रबन्धन की संज्ञा दी जाती है। यह सिद्धान्त / तकनीकी अधिक प्रजातान्त्रिक माना जाता है। इसके अनुसार कार्य करते हुए प्रबन्धक कर्मचारियों को समान स्तर पर विचार-विमर्श करने योग्य समझता है। कर्मचारियों को प्रबन्धक समय-समय पर स्वतः कार्य करने का अवसर देता है। कर्मचारियों को निर्णायक तथ्यों पर विचार करने को प्रेरित करता है जिससे एक ओर कर्मचारियों को सन्तोष प्राप्त होता है और दूसरी ओर उसे उन्नति के अधिक अवसर प्राप्त होते हैं। उन्नति के अधिक अवसर मिलने के कारण सामान्य जीवन स्तर में सुधार होता है। तथा कर्मचारी अधिक आय अर्जित करने में समर्थ होता है।

### 4.6.1 परिभाषा-

सहभागी प्रबन्धन की परिभाषा का व्याख्यान विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न तरीके


HMDC-019

से किया है। सहभागी प्रबन्धन से सम्बन्धित कुछ प्रमुख परिभाषाएँ निम्नवत् प्रस्तुत की जा रही है-

"सहभागिता के आशय किसी समूह स्थिति में श्रमिक का मानसिक एवं भावात्मक रूप में कार्य में योगदान है जो समूह के उद्देश्यों को पूरा करने में, सहयोग देने तथा अपने उत्तरदायित्व को समझने के लिये प्रेरित करता है।"

– कीथ डेविस

"उद्योग में सहभागिता की विचारधारा से आशय किसी औद्योगिक संगठन के श्रमिकों द्वारा अपने उचित प्रतिनिधियों के माध्यम से प्रबन्धन के उपयुक्त स्तरों पर सम्पूर्ण प्रबन्धकीय क्षेत्र की क्रियाओं में निर्णय लेने के अधिकार में हिस्सा बाँटना है।"

– बी॰ डी॰ मेहत्राज

"प्रबन्धन में श्रमिकों की सहभागिता से आशय प्रबन्धन और श्रमिकों द्वारा बराबर के साझेदारों की भाँति प्रबन्ध संचालन से है।"

– एन॰ पी॰ धूसिया

"प्रबन्धन में वास्तविक कर्मचारी भागिता श्रम पूँजी के बीच सहयोग स्थापित करने की एक विधि है। यह संस्था में क्या हो रहा है, के दृष्टिकोण से कर्मचारियों एवं प्रबन्धन के बीच संयुक्त परामर्श मात्र नहीं है, यद्यपि संयुक्त परामर्श स्वयं में कोई बुरी बात नहीं है, किन्तु इसे प्रबन्ध में वास्तविक सहभागिता नहीं माना जा सकता है।"

– बी॰ आर॰ सेठ

### 4.6.2 प्रबन्धन में सहभागिता के उद्देश्य -

प्रबन्धन में कर्मचारियों को सहभागी बनाने के कई उद्देश्य हो सकते हैं। प्रमुख उद्देश्य निम्न है-

1. सहभागिता द्वारा उत्पादकता में वृद्धि करना,
2. संगठन के प्रति अपनत्व की भावना का विकास करना,
3. विभिन्न समस्याओं पर कर्मचारियों से परामर्श एवं सुझाव प्राप्त करना,
4. कर्मचारियों के मनोबल को बढ़ाना एवं दलीय भावना का निर्माण करना,
5. कर्मचारी तथा प्रबन्ध के हितों में एकत्रीकरण करना,
6. कर्मचारियों में आत्म-विश्वास, आत्म-सम्मान, सामाजिक चेतना व अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता उत्पन्न करना,

7. निर्णयों के क्रियान्वयन को सरल बनाना,

8. कर्मचारियों की कार्य दशाओं में सुधार करना।

## 4.7 सहभागिता के स्वरूप -

सामान्य रूप से सहभागिता प्रबन्धन के प्रमुख स्वरूप निम्न है-

**(1) सुझाव योजनाएँ -**

यह सहभागिता का सरलतम स्वरूप है जिसके अन्तर्गत प्रबन्धकीय मामलों में सुधार हेतु कर्मचारियों से सुझाव आमंत्रित किये जाते हैं। ये सुझाव लागत, उत्पादन प्रणाली, कार्य की दशाओं, यंत्रों, अनुशासन, सुरक्षा, कर्मचारी, कल्याण, सामान्य प्रबन्धन इत्यादि के सम्बन्ध में हो सकते हैं। समिति द्वारा विभिन्न सुझावों की समीक्षा की जाती है और महत्वपूर्ण एवं उपयोगी सुझावों को लागू किया जाता है।

**(2) शिकायत निवारण की व्यवस्था -**

जब कर्मचारियों की शिकायतों का उचित एवं सही समय पर निवारण नहीं होता है तो कर्मचारियों में असन्तोष उत्पन्न होता है। जिसके परिणाम स्वरूप संगठन के क्रियाकलापों में बाधा उत्पन्न होती है। अतः प्रबन्धकों द्वारा सही समय पर उचित निर्णय लेकर कर्मचारियों की शिकायतों को निपटाने हेतु औपचारिक व्यवस्था की जाती है।

**(3) संयुक्त परामर्श -**

इस प्रणाली के अन्तर्गत प्रबन्धन की विभिन्न समस्याओं पर संस्था प्रमुखों एवं कर्मचारियों द्वारा आपस में विचार-विमर्श कर हल निकाला जाता हैं। इसके लिए संयुक्त परामर्श समिति का गठन किया जाता है, जिसमें दोनों तरफ के प्रतिनिधियों को सम्मिलित किया जाता है। ये प्रायः परामर्शकारी प्रकृति की होती है तथा समिति में पर्यवेक्षक स्तर के अधिकारी एवं योग्य तथा अनुभवी कर्मचारियों को सम्मिलित किया जाता है। समिति के निर्णयों से सभी को अवगत तथा निर्णयों को शीघ्रतापूर्वक लागू किया जाता है।

**(4) सह-स्वामित्व या सह-भागीदारी-**

यह सहभागिता की एक उपयोगी विधि है। इसके अन्तर्गत कर्मचारियों को स्वामित्व में अंशधारी बनाया जाता है। इससे कर्मचारियों में संस्था के प्रति अपनत्व की भावना विकसित होती है और वे संस्था की समस्याओं पर मालिक व कर्मचारी दोनों की

दृष्टि से विचार करने लगते हैं। उनमें वैयक्तिक लक्ष्यों व उद्देश्यों में समन्वय स्थापित करने की भावना उत्पन्न होती है।

**( 5 ) संचालन मण्डल में कर्मचारियों को प्रतिनिधित्व -**

सहभागिता की पूर्णता इस बात में निहित है कि कर्मचारियों को प्रबन्ध के उच्चतम स्तर पर लिये जाने वाले निर्णयों में भी शामिल किया जाये। इस पद्धति में कर्मचारी नीति निर्धारण एवं नियोजन के स्तर पर प्रबन्ध में सहभागी हो सकते हैं। इस विधि के द्वारा उच्च स्तरीय निर्णयों में कर्मचारियों का योगदान होता है। कर्मचारी स्वयं को अधिक सुरक्षित महसूस करते हैं। क्योंकि वे सोचते हैं कि उनके द्वारा चुने हुये प्रतिनिधि उनकी हितों की रक्षा हेतु संचालन मण्डल में मौजूद हैं।

**( 6 ) लाभ भागीदारी –**

यह एक महत्वपूर्ण विधि है, जिसके अनुसार कर्मचारियों को लाभ का एक भाग मिलता है, जो लाभ होने के पूर्व ही निश्चित कर दिया जाता है। इस योजना में परिश्रम व प्रतिफल में सीधा सम्बन्ध हो जाने के कारण कर्मचारियों में परिश्रम की भावना उत्पन्न होती हैं और कर्मचारी एवं नियोक्ता दोनों में सहयोग बढ़ता है तथा मतभेद समाप्त हो जाते हैं।

**( 7 ) सामूहिक सौदेबाजी–**

यह नियोजन व कर्मचारी के पारस्परिक वार्तालाप के द्वारा समस्याओं के समाधान खोजने की एक प्रभावी प्रक्रिया है।

## 4.8 पुस्तकालयों तथा सूचना केन्द्रों में सहभागी प्रबन्धन -

पुस्तकालय तथा सूचना केन्द्रों का सामाजिक उत्तरदायित्व अन्य अधिकतर संगठनों की तरह कर्मचारियों और जनसाधारण दोनों की आवश्यकताओं को संतुष्ट करने का होता है। सहभागी प्रबन्धन एक ऐसी विधि है, जो पुस्तकालयों तथा सूचना केन्द्रों के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए कर्मचारियों की प्रभावशीलता तथा कार्यकुशलता को सुधारती है।

सहभागिता की विचारधारा मूलतः मानवीय सम्बन्धों की विचारधारा से सम्बन्धित है। यह कर्मचारियों को उनके प्रतिनिधियों के माध्यम से प्रबन्ध के विभिन्न स्तरा पर लियें जाने वाले निर्णयों की प्रक्रिया में शामिल करती है। इस प्रबन्धकीय विचारधारा को पुस्तकालय तथा सूचना केन्द्रों में अपेक्षाकृत अनदेखा किया गया है। जबकि आधुनिक



HMDC-019

प्रबन्धन ने तकनीकी रूप में प्रमाणित किया है कि पुस्तकालयों एवं सूचना केन्द्रों में सामूहिक निर्णय लेने एवं कार्मिक विकास हेतु सहभागी प्रबन्धन उपयोगी प्रबन्धकीय विधि है। सहभागी प्रबन्धन निर्णयों की गुणवत्ता को प्रभावित करने के साथ-साथ उत्पादकता के लिए उनके कार्यान्वयन को भी प्रभावित करता है। पुस्तकालयों तथा सूचना केन्द्रों के लक्ष्यों तथा साधनों के निर्धारण में एवं इन्हें सुविधाजनक रूप में हासिल करने में पुस्तकालयों तथा सूचना केन्द्रों के कर्मचारियों को सम्मिलित करना, पुस्तकालयों एवं सूचना केन्द्रों द्वारा प्रदत्त सेवा को सुधार सकता है।

सूचना के अभाव में कोई भी निर्णय नहीं लिया जा सकता है। अतः निर्णय हेतु सूचना की उपलब्धता आवश्यक है। पुस्तकालय तथा सूचना केन्द्र के किसी गतिविधि या क्रियाकलाप के बारे में निर्णय लेने की प्रक्रिया में कर्मचारियों का शमिल होना ही सहभागिता प्रबन्धन है। वस्तुतः पुस्तकालय एक प्रणाली के रूप में कार्य करती है और उस प्रणाली के अन्तर्गत किसी एक गतिविधि से सम्बन्धित सूचना, सम्पूर्ण प्रणाली के बारे में माँगी गई सूचना, विस्तार एवं व्यापकता के दृष्टिकोण से काफी भिन्न होती है। सहभागी प्रबन्धन निर्णय लेने की प्रक्रिया को नीचे के स्तर की ओर खिसकाता है, क्योंकि वरिष्ठ अधिकारियों को पुस्तकालय संचालन से सम्बन्धित प्रासंगिक व व्यावहारिक सूचना नहीं होती। पुस्तकालय के निचले स्तर की पंक्तियों में कार्यरत व्यक्ति के पास पुस्तकालय के समस्त क्रियाकलापों से सम्बन्धित सूचना होती है और वे निर्णय लेने की प्रक्रिया में परस्पर सहयोग करते हैं। अतः इसके द्वारा पुस्तकालय का सफल संचालन एवं उत्तम सेवा प्रदान तथा समस्याओं का निवारण आदि, अत्यधिक व्यावहारिक एवं सृजनात्मक होता है। निर्णय लेने की प्रक्रिया में सम्मिलित किये गये कर्मचारियों में आत्म-सम्मान, मनोबल में वृद्धि, अपनत्व की भावना, उत्तरदायित्व बोध पैदा हो जाने से पुस्तकालय के लिए लक्ष्यों को प्राप्त करना सुगम हो जाता है, क्योंकि सहभागी बनने से कर्मचारी पुस्तकालयों के लक्ष्यों के प्रति अधिक जागरूक हो जाता है।

## 4.9 सहभागी प्रबन्धन : लाभ तथा हानि -

पुस्तकालय के उद्देश्यों तथा साधनों के निर्धारण में तथा इन्हें प्राप्त करने में पुस्तकालय कर्मचारियों को शामिल किया जाना पुस्तकालय सेवा को सुधार सकता है। सहभागी प्रबन्धन का लाभ निम्न है-

1. पुस्तकालय को उपयोगी, व्यावहारिक एवं अच्छे सुझाव प्राप्त होते हैं।
2. कर्मचारियों में आत्म-सम्मान की भावना पैदा होती है तथा उनकी अपने कार्य में रूचि बढ़ती है।

3. प्रबन्ध व्यवस्था को प्रभावशाली बनाने के लिए नवीन विचार प्राप्त होते हैं।
4. कर्मचारियों के मनोबल में वृद्धि हो जाने से संस्था के लिए लक्ष्यों को प्राप्त करना सुगम हो जाता है।
5. इससे कर्मचारियों की मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति होती है।
6. कर्मचरियों में अपनत्व की भावना, उत्तरदायी बोध उत्पन्न होने से निर्णयों के क्रियान्वयन में सुगमता होती है तथा इच्छित परिणाम प्राप्त होते हैं।
7. इसके द्वारा उच्च गुणवत्तापूर्ण, निर्णय तथा पुस्तकालय सेवा के गुणवत्तापूर्ण परिणाम प्राप्त होते हैं।
8. सहभागी निर्णय सभी समूहों को या व्यक्तियों को व्यापक रूप से स्वीकार्य होते हैं।

**सहभागी निर्णय की हानियाँ -**

1. कर्मचारियों के कई व्यर्थ, अनुत्पादक एवं अनावश्यक सुझावों से प्रबन्धकों का मूल्यवान समय नष्ट होता है।
2. अनेक समय पर सुझाव प्रबन्धकों की क्रियाओं और संस्था की नीतियों के विरोध में होते हैं।
3. सहभागी निर्णय में लचीलापन नहीं होने की दशा पर सम्पूर्ण कार्यवाही अवरूद्ध भी हो सकती है।
4. सहभागी निर्णय अधिक खर्चीला एवं अधिक समय साध्य होता है।

## 4.10 सारांश -

प्रस्तुत इकाई के माध्यम से पाठकगण को सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन की अवधारणा, स्तम्भ, प्रवृत्तियां, तत्त्व कार्यान्वयन तथा सहभागी प्रबन्धन अर्थ, उद्देश्य, स्वरूप अनुप्रयोंग से अवगत करवाने का प्रयास किया गया है।

वस्तुतः दोनों एक दूसरे से अनुकूल दिखाई देते हैं। सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्र में उपयोक्ताओं की आवश्यकता पर केन्द्रित होता है, जबकि सहभागी प्रबन्धन में प्रबन्धकीय नीतियों और योजनाओं का निर्माण के पूर्व कर्मचारियों से विचार - विमर्श एवं निर्णय प्रक्रिया में कर्मचारियों को सम्मिलित किया जाना होता है। अतः सहभागी प्रबन्धन में व्यक्ति अथवा कर्मचारी निर्णय लेने की प्रक्रिया में शामिल होते हैं तथा निर्णयों पर पहुँचते हैं जबकि ग्राहकों की आवश्यकतों को समझने तथा उनकी सेवा एवं सन्तुष्टि में अनवरत सुधार हेतु सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन एक उपयोगी व युक्तिपूर्ण प्रबन्धन उपकरण है।

## 4.11 अभ्यास कार्य -

1. सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन से आप क्या समझते हैं? इसके स्तम्भ एवं आवश्यक प्रवृत्तियों पर प्रकाश डालिये।
2. पुस्तकालय तथा सूचना केन्द्र के प्रबन्धन में सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन की तकनीकों के कार्यान्वयन को समझाइये।
3. सहभागी प्रबन्धन से आप क्या समझते हैं? इसके विभिन्न स्वरूपों को बताइये।
4. पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्र में सहभागी प्रबन्धन के कार्य, लाभ तथा हानि को स्पष्ट करें।

## 4.12 सन्दर्भ ग्रन्थ -


1. Susan, Jurow and Barnard, Susan B. (Eds). (1993). Integrating Total; Quality Management in Library Setting. New York : The Howorth Press Inc.
2. Rowley, Jennifer (1996), Implementing TQM for Librery Services, The Issues. Aslib Proceeding.
3. Bank, John (1996). The Essence of TQM. London : Prentice Hall International (U.K.) Limited.
4. Indira Gandhi National Open University. (1999). School of Social Sciences. BLIS-2 : Library Management. New Delhi : IGNOU.
5. Sirkin, A.F. (1993) Customer Service : Anthoer Side of TQM Journal of Library Administration.
6. Narayan. B (1998). Total Quality Management. New Delhi : Prentice Hall.
7. Jain, S.L. and Gupta, D. N. (1996). TQM in Library and information services. Annals of Library Science and Documentation 43 (2).
8. MP Bhoj Open University (2009). BLIS 2, Block 4, Bhopal : MPBOU.

|| सरस्वती नः सुभगा मयस्करत् ||

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय
प्रयागराज

# BLIS-102
## पुस्तकालय प्रबन्धन

# खण्ड

# 2

# पुस्तकालय चयन एवं चयन स्त्रोत


इकाई - 5
पुस्तकालय चयन के सिद्धान्त एवं नीति 113

इकाई - 6
पुस्तक चयन श्रोतों के प्रकार 131

इकाई - 7
पुस्तक : अर्जन, परिग्रहण एवं तकनीकी प्रक्रियाकरण 145

इकाई - 8
सावधिक प्रकाशन : अर्जन, रखरखाव एवं नित्यकार्य 169

## विशेषज्ञ समिति - पाठ्यक्रम अभिकल्पन

| | |
|---|---|
| **डॉ0 पाण्डेय एस0 के0 शर्मा** | अवकाश प्राप्त मुख्य ग्रंथालयी, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली, |
| **डॉ0 ए0 पी0 गक्खर** | विश्वविद्यालय ग्रंथालयी, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इला0 |
| **डॉ0 यू0 सी0 शर्मा** | एसोसियेट प्रो0 एवं विभागाध्यक्ष, बी0आर0 अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा |
| **डॉ0 सोनल सिंह** | एसोसिएट प्रोफेसर, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन |
| **डॉ0 ए0 पी0 सिंह** | एसोसिएट प्रोफेसर, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी |
| **डॉ0संजीव सर्राफ** | उपपुस्तकालयाध्यक्ष, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी |
| **डॉ0 टी0एन0 दुबे** (सदस्य सचिव) | विश्वविद्यालय ग्रंथालयी, उ0प्र0रा0ट0 मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद |

## सम्पादक मण्डल

| | |
|---|---|
| **डॉ0 टी0 एन0 दुबे** | विश्वविद्यालय ग्रंथालयी, उ0 प्र0 रा0ट0 मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद |
| **श्री आर0 जे0 मौर्य** | सहायक ग्रन्थालयी, उ0 प्र0 रा0ट0 मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद |
| **श्री राजेश गौतम** | प्रवक्ता, पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान विभाग, उ0 प्र0 रा0ट0 मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद |



## लेखक

**डॉ0 एच0 के0 चक्रवर्ती** — एसोसिएट प्रोफेसर, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी



## परिमापक

**डॉ0 वेदानन्द त्रिपाठी** — ग्रन्थालयी, नारायण पी0 जी0 कालेज, शिकोहाबाद, (उ0प्र0)

प्रस्तुत पाठ्य सामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के स्वयं के हैं।

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, **प्रयागराज**

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य-सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।



NMDC-019 BLIS-02/110

## खण्ड परिचय -द्वितीय : पुस्तक चयन एवं चयन स्त्रोत

पुस्तकालय एक सामाजिक संस्था है, जो जन सामान्य के लिए होती है जिसका प्रमुख उद्देश्य जन सामान्य की पाठ्य सामग्री सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति करना है, क्योंकि पाठ्य सामग्री ही पुस्तकालय का एक प्रमुख आधार है कोई भी पुस्तकालय चाहे वह कितना भी विशाल या लघु क्यों न हो, उसका वित्तीय साधन सीमित होता है। अतः जन सामान्य की पाठ्य समग्री सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु पुस्तक चयन नितान्त आवश्यक है। पुस्तक चयन सदैव पुस्तकालय को उत्तम तथा उपयोगी बनाता है। जिसके लिए विभिन्न विद्वानों द्वारा पुस्तक चयन के सिद्धान्तों एवं नीतियों का प्रतिपादन किया गया जिसके आधार पर विभिन्न प्रकार के पुस्तकालयों के स्वरूप के अनुसार पुस्तकों के चयन का प्रावधान किया गया। पुस्तक चयन के सिद्धान्तों में प्रमुख रूप से डा.एस.आर. रंगनाथन, एल.आर.मैककाल्विन, ड्रूरी तथा मेलविल ड्यूवी के सिद्धान्त प्रचलित है। जिसके आधार पर पुस्तक चयन के सिद्धान्तों तथा नीतियों का उल्लेख करते हुए पुस्तक चयन के तत्वों, विभिन्न आधार पर उनका मूल्यांकन, चयनकर्ता की योग्यता एवं विशेषताओं तथा किन पुस्तकालयों में किस प्रकार की पाठ्य सामग्रियों का संग्रह किया जाना चाहिए, का विस्तृत उल्लेख किया गया है।

पुस्तक चयन में पुस्तक चयन श्रोत का महत्वपूर्ण स्थान है जो पुस्तकालयाध्यक्षों तथा विशेषज्ञों को पुस्तकालय के पाठकों के अनुरूप पाठ्य सामग्रियों का चयनित करने में सहायक होती हैं। विभिन्न स्त्रोतों की व्याख्या करते हुए भारतीय प्रकाशनों की पाठ्य सामग्री के चयन हेतु भारतीय राष्ट्रीय वाङ्मयसूची, इन्डेक्स, इण्डियाना, इण्डियन बुक्स इन प्रिन्ट, इण्डियन बुक इण्डस्ट्रीज एवं भारतीय साहित्यों की राष्ट्रीय वाङ्मय सूची तथा विदेशी प्रकाशनों की पाठ्य सामग्रियों के लिए एसलिव. बुक लिस्ट, लन्दन, 1935, ब्रिटिश नेशनल विब्लियोग्राफी, बुक्स इन प्रिन्ट, वाउका, न्यूयार्क, ब्रिटिश बुक न्यूज, लन्दन आदि का वर्णन किया गया है जो अधिकतम पाठकों की पाठ्य सामग्रियों के चयन सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

पुस्तक चयन प्रक्रिया हेतु चयन सूची तैयार कर चयनित सूची को अनुमोदित करने का प्रावधान किया गया है। सूची तैयार करने हेतु विषय विशेषज्ञों की सहायता ली जाती है जिससे सर्वश्रेष्ठ एवं उपयोगी पाठ्य सामग्रियों का चयन सम्भव हो



HMDC-019

पाता है तथा चयनित पाठ्य सामग्रियों को कम करके उनकी तकनीकी प्रक्रिया अपना कर पाठकों के लिए उपयोगी बनाने का प्रयास किया जाता है। तकनीकी प्रक्रिया हेतु विभिन्न प्रकार की वर्गीकरण एवं सूचीकरण पद्धतियां का उपयोग किया जाता है। जिनमें कुछ पद्धतियों का उल्लेख किया गया है। पुस्तकालयाध्यक्ष सम्पूर्ण प्रक्रियाओं को अपनाकर पुस्तकालय को अधिकतम उपयोगी बनाता है।

इस खण्ड के अन्त में सामग्रियों को परिभाषित करते हुए उसके अर्जन एवं रखरखाव की व्याख्या की गई है। सामयिकी को वार्षिक शुल्क, समितियों की सदस्यता प्राप्त कर, उपहार तथा बदले में प्राप्त किया जा सकता है। प्राप्त सामयिकों को पुस्तकालय में व्यवस्थित करने हेतु प्रमुख रूप से एक पत्रक प्रतिपादित किया गया है तथा कार्डेक्स प्रणाली का उपयोग किया जाता है। उक्त समस्त क्रियाकलापों के माध्यम से सामयिकों को पुस्तकालय के पाठकों के लिए उपयोगी बनाया जाता है तथा एक श्रेष्ठ पुस्तकालय के रूप में स्थापित किया जाता है।

सम्पूर्ण खण्ड को चार इकाइयों में विभक्त किया गया है तथा इन इकाईयों में दी गई सामग्री का अध्ययन करने से पुस्तकालय विज्ञान के छात्रों की पाठ्यक्रम सम्बन्धी आवश्यकता की पूर्ति अवश्यम्भावी है। खण्ड के प्रत्येक इकाई के अन्त में दीर्घ तथा लघु उत्तरीय प्रश्नों को भी दर्शाया गया है, जो पाठ्यक्रम की तैयारी में सहायक सिद्ध होंगे।

# इकाई - 5 : पुस्तक चयन के सिद्धान्त एवं नीति

## इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 पुस्तक चयन अर्थ एवं परिभाषा

5.2 पुस्तक चयन के उद्देश्य

5.3 पुस्तक चयन की आवश्यकता

5.4 डॉ॰ रंगनाथन द्वारा प्रतिपादित पुस्तकालय विज्ञान के पंचसूत्रों के आलोक में पुस्तक चयन

5.5 पुस्तक चयन के सिद्धान्त

- 5.5.1 ड्यूरी के सिद्धान्त
- 5.5.2 मेल्विन डीवी के सिद्धान्त
- 5.5.3 मैककाल्विन के सिद्धान्त
- 5.5.4 रंगनाथन के सिद्धान्त

5.6 पुस्तक चयन के मापदण्ड

5.7 पुस्तक चयन की नीतियाँ

5.8 सारांश

5.9 अभ्यास हेतु प्रश्न

5.10 संदर्भ एवं इतर पाठ्य सामग्री

## 5.0 उद्देश्य

पुस्तकालय सम्बन्धी समस्त सेवाओं का आधार पुस्तकालय का संग्रह है और संग्रह निर्माण एक सतत प्रक्रिया है जिसके लिए पुस्तकों/पाठ्य सामग्रियों का चयन एक महत्वपूर्ण कारक है। इस इकाई में आप निम्न के बारे में अवगत हो सकेंगे:

1. पुस्तक चयन के क्या अभिप्राय हैं?
2. पुस्तक चयन के क्या उद्देश्य है?
3. पुस्तक चयन की आवश्यकता क्यों है?
4. डॉ॰ रंगनाथन द्वारा प्रतिपादित पुस्तकालय विज्ञान के सूत्र किस प्रकार

HMDC-019

पुस्तक चयन को प्रभावित करते हैं?

5. पुस्तक चयन हेतु विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों से अवगत होंगे।

6. पुस्तक चयन के मापदण्डों के बारे में जान सकेंगे।

7. पुस्तक चयन की नीतियों से अवगत हो सकेंगे।

## 5.1 पुस्तक चयनः अर्थ एवं परिभाषा

पुस्तकालय में लोग अपने ज्ञान की वृद्धि का आधार ढूढ़ते हैं। जहाँ पर यह प्रयास किया जाता है। कि सभी की अपनी ज्ञान व सूचना संबंधी जानकारियों की आवश्यकता की पूर्ति की जा सके। यह प्रयास कि सभी को अपनी आवश्यकतानुसार पाठ्य सामग्री उपलब्ध हो पाये, ही पुस्तक चयन है। यद्यपि आज के समय में जानकारी उपलब्ध करने के श्रोतं में काफी विविधता पायी जाती है। पुस्तक भी एक बड़ा एवं प्रखर माध्यम है। निश्चित रूप से पाठ्य सामग्री का चयन एक निरन्तर प्रक्रिया है तथा पाठ्य सामग्री की सदैव समय और आवश्यकता के आधार पर वृद्धि कराना तथा अद्यतन रखना एक विशाल लक्ष्य है।

जिस गति से पाठकों का प्रयोगकर्ताओं की संख्या बढ़ रही है तथा आवश्यकताओं में विविधता आ रही है पुस्तकों की संख्या भी काफी तेजी से बढ़ रही हैं। कोई भी पुस्तकालय अपने संग्रह में पुस्तक संख्या व उसकी गुणात्मकता के लिये जाना जाता है। यह सत्य है कि भवन तथा पढ़ने की सुविधाओं का अपना महत्व है, पर फिर भी यह अत्यन्त आवश्यक तत्व है कि उसमें संग्रहीत विषय वस्तु उपयोगी हो तथा आवश्यकताओं के अनुरूप हो।

जिस प्रकार के पाठकों की संख्या में वृद्धि हो रही है उसी प्रकार पुस्तकों के प्रकाशन के प्रकाशन में भी वृद्धि प्रदर्शित होती है। अपने पुस्तकालय में पुस्तकों की उपलब्धता संरक्षण की समस्या, उपभोक्ता संबंधी समस्याओं के अनुरूप होनी चाहिए।

शिक्षा का यह अर्थ है कि पाठकों को गत तथ्यों की जानकारी मिले वरन् पुस्तकालय का उपयोग आध्यात्मिक, बौद्धिक, व्यवसायिक लाभ के लिए तथा व्यक्तिगत आनन्द के लिये भी किया जाता है। पाठक पुस्तकों के अध्ययन के द्वारा अपने को सुसंस्कृत करके जीवन में ऊँचे आदर्शों को प्राप्त करना चाहता है। यही वह अभिलाषा


NMDC-019

है जो जनसाधारण को पुस्तकालय प्रयोग हेतु प्रोत्साहित करती है। श्रेष्ठ पुस्तकों द्वारा प्रसारित ज्ञान केवल सुसंगठित पुस्तकालयों द्वारा ही संग्रहीत है जिससे जनसाधारण को उसकी उपलब्धता सुनिश्चित की जाती है। विभिन्न पुस्तकालयों जैसे शैक्षणिक, सार्वजनिक, व्यवसायिक तथा विशिष्ट पुस्तकालय इनके अंग है।

पुस्तकालयों को रचनात्मक, प्रासंगिक, उपयोगी तथा प्रभावशाली बनाने के लिये उचित पाठ्य सामग्री का होना अत्यन्त आवश्यक है। सार्वजनिक पुस्तकालयों में पुस्तक चयन अधिकतम प्रयोक्ताओं की रूचि एवं आवश्यकताओं के आधार पर होनी चाहिए। समस्त पुस्तकालय सभी प्रकार के उद्देश्यों की पूर्ति नहीं कर सकते तथा उनके अपने भी कुछ मापदंड निर्धारित होते हैं। जिनकी अवहेलना नहीं की जानी चाहिए। उदाहरण स्वरूप आवश्यकता होने पर भी सरल एवं स्तरहीन क्रय नहीं किया जा सकता।

पुस्तकालयों का एक उद्देश्य सभी प्रकार के उद्योग धंधों के काम करने वाले व्यवसायियों को व्यवहारिक ज्ञान प्रदान करना है। पुस्तकालय अपने प्रभावित क्षेत्रीय विशेषताओं तथा प्रयोक्ताओं की विशिष्ट आवश्यकताओं के अन्दर ही चयन पद्धति अपनाते हैं। उदाहरण स्वरूप यदि कोई पुस्तकालय जन-जातीय क्षेत्र में सेवारत हैं तो जनजातीय लोगों के लिये चलाई जा रही सरकारी योजनाओं से संबंधित साहित्य भी उपलब्ध कराना चाहिए। आज के पुस्तकालयों में निःशुल्क सेवा का प्रावधान रखा जाता है। भवन एवं पुस्तकों का संगठन ही महत्वपूर्ण नहीं है अपितु यह भी ध्यान रखा जाना चाहिये कि पुस्तकालय को रचनात्मक, उपयोगी एवं प्रभावशाली शिक्षण संस्था बनाने के लिए डा॰ एस॰ आर॰ रंगनाथन के द्वितीय सूत्र "प्रत्येक पाठक को उसकी पुस्तक मिले" तृतीय सूत्र "प्रत्येक पुस्तक को उसका पाठक मिले" तथा चतुर्थ सूत्र "पाठक का समय भी बचाया जा सके" का जब तक उपयोग सुनिश्चित नहीं किया जाता, पुस्तकालय एक संग्रह केन्द्र ही रह जायेगा। अतः यह सर्वोपरि है कि पुस्तक तथा पाठक का सम्पर्क बनाया जाय, इसीलिये अभिरूचि का ध्यान रखना आवश्यक है। इस सम्पर्क को बढ़ाने में विभिन्न तत्व प्रभावित करते हैं उदाहरणस्वरूप—

1. पठन-पाठन से संबंधित सुविधायें,
2. अभिरूचि पूर्ण पुस्तक चयन,
3. कर्मचारियों का सहयोग,
4. पुस्तकों की उपलब्धता इत्यादि।



HMDC-019

यह सभी तत्व मिलकर ही पुस्तकालय को उपयोगी बनाते हैं।

## 5.2 पुस्तक चयन के उद्देश्य

एफ॰ डब्ल्यू॰ ड्यूरी के शब्दों में, ग्रन्थ-चयन का मुख्य उद्देश्य "उपयुक्त पाठक को, उपयुक्त समय पर उपयुक्त ग्रन्थ प्रदान करना है"। ग्रन्थालयों में ग्रन्थ-चयन करने का कार्य अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि ग्रन्थालय की सम्पूर्ण सफलता उसके संग्रह पर ही निर्भर करती है। ग्रन्थालयों में पाठकों की माँग के अनुसार उपयुक्त, श्रेष्ठ तथा उपयोगी ग्रन्थों का संग्रह नहीं होगा तो न केवल ग्रन्थों के क्रय करने में किया गया व्यय अपितु भवन-निर्माण, साज-सज्जा, कर्मचारियों के वेतन इत्यादि पर भी व्यय किया हुआ समस्त धन व्यर्थ ही जायेगा। इसलिए ग्रन्थालयों में अधिकतम व्यक्तियों की आवश्यकताओं, रूचियों के अनुरूप ही श्रेष्ठ ग्रन्थों का चयन एवं संग्रहण करना चाहिए।

पुस्तक चयन के महत्वपूर्ण उद्देश्य निम्नलिखित हैं :

1. पाठ्य सामग्री का चयन करते समय पाठकों की अभिरूचियों को दृष्टिगत रखना चाहिए।
2. सामान्य ज्ञान, सन्दर्भ ग्रन्थ और मनोरंजन हेतु आवश्यक पाठ्य सामग्री का चयन किया जाना चाहिये।
3. पुस्तक संग्रह को पाठकों के पाठ्य विषय एवं अध्ययन अभिरूचि को ध्यान में रखकर संतुलित रखा जाना चाहिए।
4. पाठ्य सामग्री को अन्तिम रूप से क्रय करने के पहले पुस्तकालयाध्यक्ष द्वारा उसका मूल्यांकन किया जाना चाहिए।
5. पाठकों हेतु उपयुक्त एवं पर्याप्त पाठ्य सामग्री का चयन किया जाना चाहिये।

## 5.3 पुस्तक चयन का आवश्यकता

पुस्तकालय की श्रेष्ठाा उसमें उपलब्ध पुस्तकों से ही आंकी जाती है। क्योंकि बिना पुस्तकों के पुस्तकालय की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। पुस्तकालय में पुस्तकों किसी भी माध्यम से आ सकती है। परन्तु पुस्तकालयाध्यक्ष को उन पुस्तकों में से उपयोगी एवं सर्वश्रेष्ठ पुस्तकों का चयन करना चाहिए। पुस्तक चयन की आवश्यकता के निम्नलिखित महत्वपूर्ण कारण हैं।


HMDC-019

1. **पाठ्य सामग्री का प्रचुर मात्रा में होना :** आज का युग सूचनाओं का युग है और इस युग में प्रत्येक विषय पर विभिन्न प्रकार की पुस्तकें, विभिन्न संस्करणों, प्रकारों में होती है। क्योंकि सभी पुस्तकें उपयोगी नहीं हो सकती, इसलिए उनमें से उपयोगी पुस्तकों का चयन करना आवश्यक है।

2. **लोकप्रियता :** रूसी क्रान्ति के अग्रदूत लेनिन महोदय का कथन है कि "किसी सार्वजनिक पुस्तकालय की गौरव, गरिमा तथा मर्यादा उसमें संग्रहित दुर्लभ पाण्डुलिपियों की संख्या में विकास, पाठकों की पुस्तकें जुटाने में तत्परता तथा बालकों में पुस्तक के उपयोग की माँग रूचि पैदा करने में निहित है।" इसलिए पुस्तकालय का महत्व बढ़ाने और उसे लोकप्रिय बनाने के लिए पुस्तक चयन प्रक्रिया बहुत ही आवश्यक है।

3 **पुस्तकालय के संसाधनों का सीमित मात्रा में होना :**प्रत्येक पुस्तकालय के साधन, वित्त, स्थान, कर्मचारी, उपकरण आदि सीमित मात्रा में होते हैं। अतः यह सम्भव नहीं होता है कि प्रत्येक उपलब्ध पाठ्य सामग्री का पुस्तकालय में संग्रह किया जाय। इसलिए पुस्तक चयन बहुत ही आवश्यक कार्य है। रंगानाथन के अनुसार तीन कारकों से पुस्तकालय काफी प्रभावित होता है। सबसे पहले संसाधन के अन्तर्गत धन एवं कर्मचारी आते हैं। ये संसाधन सीमित मात्रा में होते हैं। इसलिए सीमित संसाधनों को ध्यान में रखकर उनका सर्वश्रेष्ठ उपयोग करना चाहिए। उसके बाद पाठक आते हैं अतः पुस्तकें पाठकों की रूचि के अनुसार होनी चाहिए। तीसरा कारक पाठ्यसामग्री है। पुस्तकालय के प्रथम नियम के अनुसार पुस्तकें उपयोगार्थ है इसीलिए पाठ्य सामग्री पाठकों के अनुसार उनकी आवश्यकता को ध्यान में रखना अति आवश्यक है। जिसके माध्यम से उत्तम पाठ्य सामग्री का संग्रह एक पुस्तकालय में हो सकता है। इसलिए उपलब्ध संसाधनों के अनुसार ही पाठ्य सामग्री का उपयोग करना चाहिए।

4. **पाठकों की अधिकतम माँग का पूर्व बोध होना :** प्रत्येक पुस्तकालय में पाठकों की माँग सामान्यता एक निश्चित सीमी के अन्तर्गत रहती है। यह सीमा अधिकतर स्थानीय भाषा, संस्कृति, शैक्षणिक तथा वातावरण स्तर पर निर्भर करती है। इसलिए पुस्तकालय में कर्मचारियों को पाठकों की अधिकतर मांगों के पूर्व ज्ञान होता है।

5. **पुस्तकालय सहयोग की भावना का विकास होना :** वर्तमान में पाठकों की



HMDC-019

विभिन्न आवश्यकताओं में और भी अधिक वृद्धि हो रही है। अतः इस प्रकार के सहयोग से पुस्तकालयों के पाठकों की मांग पर विशिष्ट पुस्तकों को अन्य पुस्तकालयों से मंगाकर पाठकों की विशिष्ट मांग को भी सफलतापूर्वक पूरा किया जा सकता है।

स्पष्ट है कि पुस्तकालय में पुस्तक चयन एक महत्वपूर्ण कार्य है।

## 5.4 डॉ॰ रंगनाथन द्वारा प्रतिपादित पुस्तकालय विज्ञान के पंच सूत्रों के आलेक में पुस्तक चयन।

डॉ॰ रंगनाथन द्वारा प्रतिपादित पुस्तकालय विज्ञान के पाँच सूत्रों में से तीन सूत्र पुस्तकों से सम्बन्धित है। अतः पुस्तक चयनकर्ता के लिए यह आवश्यक है कि इन सूत्रों को ध्यान में रखकर ही पुस्तकों का चयन करें।

1. **पुस्तकें प्रयोगार्थ है** :पुस्तकें जब क्रय की जाएगी तो उसका पाठकों द्वारा प्रयोग होना अनिवार्य है वरना उसका क्रय अनावश्यक होगा, इस सूत्र के अनुसार वैसे ही पुस्तकों का चयन तथा क्रय हो जिसका पाठकों द्वारा उपयोग हो सके। अतः पुस्तकों मे निहित विषयवस्तु के अतिरिक्त उसके बाह्य स्वरूप को भी देखना आवश्यक है। इसकी सामग्री, इसके टिकाऊपन, दीर्घ आयु तक चलने वाली है या नहीं, इसकी जिल्दबंदी कैसी है आदि का अवलोकन चयन करने से पूर्व आवश्यक है। इसमें किस प्रकार का कागज का प्रयोग किया गया है को भी देखना आवश्यक है। वर्तमान समय में अधिकतर प्रकाशन कार्य कम्प्यूटर द्वारा टाईप पर मुद्रण हो रहा है। इससे साफ और स्पष्ट छपाई कार्य होता है। इसका भी ध्यान रखना आवश्यक है। अगर पुस्तक मुद्रित हो तो उसके टाइप फेस को देख लेना आवश्यक है।

पुस्तक चयन करते समय स्थानीय भाषाको ध्यान में रख कर पुस्तकों का चयन करना चाहिए। जिस पुस्तकालय के लिए पुस्तकों का चयन किया जा रहा हे वहाँ के पाठक किन भाषाओं में पुस्तकों का अध्ययन करना चाहते हैं। जिन भाषाओं के अधिक पाठक होते हैं उन भाषाओं में पुस्तकों का क्रय करना श्रेष्कर होता है और प्रथम नियम की पूर्ति भी होती है। प्रथम सूत्र के अनुसार पुस्तकालय में ऐसी भाषा में पुस्तकों का चयन होना चाहिए जो वर्तमान तथा भविष्य के पाठक आसानी से पढ़ सकें। पुनः सरल भाषा में लिखी गई पुस्तकें अधिक लोकप्रिय होती है।

पुस्तक सरल, स्पष्ट स्वभाव, प्रगतिशील तरीके की होनी चाहिए। पुस्तकों में

चिन्तन तथा दृष्टान्तों का प्राथमिकता देना चाहिए।

2. **प्रत्येक पाठक के लिए उसकी पुस्तकें :** पुस्तकालय विज्ञान के द्वितीय सूत्र के अनुसार प्रत्येक पाठक को उसकी पुस्तकें मिलनी चाहिए- पुस्तक चयन व्यक्तिगत आवश्यकताओं के आधार पर करना चाहिए। पुस्तक चयन के पूर्व पाठकों की मांगों पर अवश्य ध्यान देना चाहिए। पुस्तक तथा सूचियों का पाठकों के समक्ष प्रर्दशन करना चाहिए ताकि वे हमें मूल्यवान सुझाव दे सकें।

प्रत्येक पाठक को उसकी इच्छित पुस्तक मिले इसके लिए पाठकों के स्तर, उसकी अभिरूचि आदि की जानकारी आवश्यक है। यह कार्य ठीक उसी प्रकार होना चाहिए कि जिस प्रकार एक दुकानदार अपने ग्राहकों की आवश्यकता को जान कर उसी के अनरूप अपनी दुकान में सामान रखता है। संदर्भ पुस्तकालयाध्यक्ष के समीप पाठक आते हैं और अपनी अभिरूचि की पुस्तिकों की मांग करते हैं, अतः उसे पता है कि पाठकों को कौन सी पुस्तकों या पाठ्य सामग्री का आवश्यकता है।

परिसंचरण विभाग के कर्मचारी भी इसमें सहायक सिद्ध हो सकते हैं, जिन पुस्तकों या विषयों की अधिक मांग होती है उसे मांग पर्ची पर एकत्र किया जाता है, इन मांग पर्ची के आधार पर ही चयन करना सरल हो जाता है।

शैक्षणिक पुस्तकालय में विशेष रूप से महाविद्यालय पुस्तकालय में पाठकों के आने से पूर्व ही उसके पाठ्यक्रम के अनुसार पुस्तकों का क्रय कर लिया जाता है। उसी प्रकार विश्वविद्यालय में शोधकर्ता के मांगों के अनुरूप पुस्तक क्रय की जानी चाहिए।

3. **प्रत्येक पुस्तक के लिए उसका पाठक :**उपर्युक्त वर्णित द्वितीय सूत्र को अगर आधार मानकर पुस्तक चयन किया जायेगा तो तृतीय सूत्र में उल्लिखित बातें स्वतः लागू हो जायेंगी। जिस प्रकार पाठकों को आधार मानकर पुस्तक चयन किया जायेगा तो वह उत्तम चयन माना जायेगा ठीक उसी प्रकार पुस्तक को भी आधार माना जाएगा। ऐसी पुस्तकें कदापि नहीं क्रय करनी चाहिए जिसका कोई पाठक ही नहीं हो। जिन भाषाओं को पाठक पढ़ने समझने में असमर्थ हो तो वैसी पुस्तकों का चयन नहीं करना चाहिए। एक सार्वजनिक पुस्तकालय को शोध स्तर की पुस्तकें क्रय नहीं करनी चाहिए।

## 5.5 पुस्तक चयन के सिद्धान्त

पुस्तकालयों में सम्पादित किये जाने वाले सभी कार्य किसी न किसी सिद्धान्त पर आधारित होते हैं। पुस्तकों का चयन भी सिद्धान्तों पर आधारित होता है। यद्यपि इसका

NMDC-019

कोई मानक सिद्धान्त आज तक नहीं है किन्तु पाठकों की मांगों तथा उनकी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए कुछ विद्वानों ने इस सम्बन्ध में अपने-अपने सिद्धान्त प्रस्तुत किये हैं, उनमें से कुछ प्रमुख सिद्धान्त निम्नवत् है।

## 5.5.1 ड्यूरी के सिद्धान्त

ड्यूरी (Drury) ने 1930 में पुस्तकालयों में, अध्ययन सामग्री के चयन के लिए मार्गदर्शन प्रदान करने वाला मूल सिद्धान्त प्रतिपादित किया था। यह सिद्धान्त था। "उचित पुस्तक, उचित उपयोक्ता को, उचित समय पर उपलब्ध कराना" ('to provide right book to right reader at the right time")। इसमें उपयोक्ता केन्द्र बिन्दु है। एक प्रलेख पाठक के संदर्भ में ठीक नहीं हो सकता है। जब किसी उपयोक्ता को ग्रंथ की आवश्यकता हो तो उसे उपलब्ध करवाया जाना चाहिए। पुस्तकालय को केवल उपयोक्ता की सूचनात्मक, शैक्षणिक और मनोरंजनात्मक आवश्यकताओं से संबंधित पाठ्य सामग्री का ही चयन करना चाहिए। उपयोक्ता द्वारा मांगे जाने पर चयनित सामग्री को अविलंब प्राप्त कर उपलब्ध करवाया जाना चाहिए। प्रलेखों के चयन में महत्वपूर्ण बात उपयोक्ता की आवश्यकाओं की जानकारी होनी चाहिए तथा साथ ही उन आवश्यकताओं को पूरा करने वाले प्रलेखों की जानकारी भी होनी चाहिए। किन्तु इन सब में महत्वपूर्ण बात है, एक ऐसी कार्यकुशल क्रियाविधि निर्मित करना जो चयनित सामग्री को उचित समय पर उपयोक्ता को उपलब्ध कराने के लक्ष्य को सुनिश्चित कर सके।

ड्यूरी के पुस्तक चयन के अति महत्वपूर्ण सिद्धान्तों की नीचे उल्लेख किया जा रहा है :

1. सभी पुस्तकों के सम्बन्ध में निर्णय करने के लिए उपयुक्त स्तरों को प्रस्थापित करना चाहिये।
2. सिद्धान्त को चतुराईपूर्वक लागू करना चाहिए।
3 किसी भी विषय पर सर्वश्रेष्ठ पुस्तकों को प्राप्त करने का लक्ष्य निर्धारित करना चाहिए।
4 प्रतिष्ठित तथा प्रमाणिक पुस्तकों को आकर्षक संस्करणों में सदैव संग्रहीत करना चाहिए।
5. स्थानीय इतिहास से सम्बन्धित पुस्तकों का संग्रह किया जाना चाहिए।
6. उन पुस्तकों का चयन किया जाना चाहिये जो आकार-प्रकार के साथ-

साथ विषय वस्तु में पुस्तकालय उद्देश्य के अनुरूप हो।

7. वास्तविक पाठकों के अलावा भविष्य के पाठकों की आवश्यकता को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए।

8. पुस्तक का सही मूल्यांकन करने के लिए सही मानक बनाने चाहिए।

9. ऐसी पुस्तकों का चयन करना चाहिए। जिनकी विशेषज्ञों एवं समुदाय के नेताओं ने मांग की हो।

10. बहुखण्डीय पुस्तकों के सभी खण्डों को खरीदना आवश्यक नहीं है।

11. पुस्तक चयन करते समय पुस्तकालय बजट का ध्यान अवश्य रखा जाना चाहिए।

12. उन पुस्तकों का आनावश्यक प्रतियाँ हटा देनी चाहिए जिनका वर्तमान एवं भविष्य में कोई महत्व नहीं है।

13. नई पुस्तकें खरीदने के स्थान पर उत्तम पुस्तकों का चयन किया जाना चाहिए।

14. पुस्तक चयन करते समय सकारात्मक विचार रखे जाने चाहिए।

15. प्रामाणिक, गल्प साहित्य के प्रति असहिष्णुता नहीं बरतनी चाहिए।

## 5.5.2 मेल्विन डी॰ वी॰ के सिद्धान्तः

**Melvil Dewey** ने पुस्तक चयन के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है जो इस प्रकार है—

**"The best book for the largest number at the least cost"** इसमें तीन प्रमुख तत्व विद्यमान है :-

(i) सर्वोत्तम पुस्तक (**Best Book**)

(ii) अधिकतम पाठक (**Largest Number**)

(iii) कम मूल्य (**Least Cost**)

### (i) सर्वोत्तम पुस्तक

सर्वोत्तम पुस्तक का अर्थ है वे पुस्तकें जो पाठकों की अभिरूचि के अनुरूप हो, जो पाठकों की अधिक सख्या को संतुष्ट कर सके। सर्वोत्तम पुस्तक का आधार स्वयं


HMDC-019

पाठकों की मांग तथा पुस्तक समीक्षा है। पुस्तकों के प्रकाशन के उपरान्त विषय विषय विशेज्ञयों द्वारा उक्त पुस्तक की समीक्षा पत्र पत्रिकाओं तथा समाचार पत्रों में प्रकाशित होती हैं। अच्छी पुस्तकों के मूल्यांकन के लिए यह एक सर्वोत्तम आधार है। साथ ही साथ पुस्तक की मांग पाठकों द्वारा अधिक की जाती है तो उसे भी सर्वोत्तम पुस्तक माना जा सकता है।

सर्वोत्तम पुस्तक वे हैं जो पाठकों की समस्या को हल करें, या उनकी मांग का निश्चित उत्तर दे। प्रायः पुस्तकों को तीन कोटियों (**Categories**) में विभक्त किया जा सकता है- प्राठकों के पाठ्यक्रम पर आधारित; सामयिक विषयों पर आधारित तथा प्रतिष्ठित ग्रंथ (**Classic**)। पाठ्यक्रम पर आधारित पुस्तकों को विशेषकर शैक्षणिक पुस्तकालय में क्रय करना अनिवार्य है। सामयिक विषयों पर बहुत अधिक प्रकाशन होता है। इसके सर्वोत्तम होने का मानक इसकी मांग तथा समीक्षा है। प्रतिष्ठित ग्रंथ निःसन्देह सर्वोत्तम पुस्तकें मानी जाती है क्योंकि मानव विकास के लिए यह उपयुक्त योगदान देती है। इन तीन संवर्गों के अतिरिक्त पुस्तकालय के लिए साहित्यिक विशेषता रखने वाली पुस्तकों तथा संदर्भ ग्रंथों का भी चयन आवश्यक है। सर्वोत्तम पुस्तक के बारे में **सी. ए. कटर** का मन्तव्य है कि सर्वोत्तम पुस्तकें पुस्तकालयाध्यक्ष अथवा चयन समिति की मांग और आवश्यकता को पूरा करने के लिए नहीं खरीदी जाती है, बल्कि सर्वोत्तम पुस्तक वो हैं जो पाठकों के मनोरंजन, ज्ञान वृद्धि तथा अध्ययन के लिए यथार्थ मागों को सन्तुष्ट करने के लिए खरीदी जाती है।

'सर्वोत्तम पाठ्य सामग्री' **सी॰ ए॰ कटर** के सिद्धान्तों का पालन करते हुए निम्न प्रकार की होनी चाहिए।

(क) पुस्तकालय को सभी विषयों पर सर्वोत्तम पुस्तकें उपलब्ध कराने का प्रयत्न करना चाहिए। लेकिन मध्यम श्रेणी की पुस्तक का भी चयन किया जाना चाहिए। जिसका पूर्वानुमान यह है कि वह उच्च प्रमाणिक कार्य के संदर्भ में पढ़ी जायेगी और प्रमाणिक पुस्तक का प्रयोग भी कभी-कभी ही होगा।

(ख) पुस्तकों को वास्तविक प्रयोग के लिए चयन करना चाहिए ताकि पाठकों की आवश्यकता या समस्या का समाधान हो सके।

(ग) पुस्तकें शैक्षणिक तथा मनोरंजनात्मक दृष्टि से खरीदने हेतु चयन करना चाहिए।

(घ) प्रतिष्ठित (**Classic**) प्रमाणिक (**Standard**) पुस्तकों को पुस्तकालय के संग्रह के लिए चयन करना चाहिए।

(च) लेखकों तथा उनकी पुस्तकों एवं उनकी कोटि को जानना आवश्यक है। पुस्तकों की कीमत तथा उनके भौतिक मूल्यों को भी जानना आवश्यक है। उन पुस्तकों का प्रकाशन का स्तर ऊंचा है कि नहीं, यह भी जानना आवश्यक है।

(छ) पुस्तक की छपाई, सम्पुटन, कागज तथा जिल्दबंदी आकर्षक हो।

## (ii) अधिकतम पाठक (Largest Number)

अधिकतम संख्या/पाठक से अभिप्रायः है कि चयनित पुस्तकों की मांग अधिक हो। पाठ्य सामग्री की आवश्यकता तथा मांग या तो द्रतगामी हो या पूर्वानुमानित हो। **एल॰ आर॰ मैक काल्विन** के अनुसार पुस्तकें स्वयं में कुछ नहीं। जब तक कि उनको मांग के द्वारा उपादेयत न बना दिया जाय। उनका श्वेत काज (White Paper) से अधिक जिन पर वह मुद्रित होती है, अस्तित्व नहीं होता। अधिकतम पाठकों हेतु पाठ्य सामग्री चयन के लिए निम्न वर्णित सिद्धान्तों को अपनाया जा सकता है:—

(क) चयनकर्ता को समुदाय की अभिरूचियाँ आवश्यकता, चाह आदि का अध्ययन करना चाहिए, जिन कोटि के पाठक अधिक हैं। उनकी अभिरूचियों का भी ध्यान रखना आवश्यक है। पुस्तक चयन तभी प्रभावशाली हो सकता है जब चयनकर्ता को पुस्तक एवं समाज का तर्कपूर्ण ज्ञान तथा पुस्तकालय प्रयोग का ज्ञान हो।

(ख) पुस्तक चयन के लिए स्वर्ण नियम (Golden Rule) को अपनाना चाहिए। अगर कोई पुस्तक चयनकर्ता के लिए उपयोगी हो सकती है तो यह पाठकों की आवश्यकता की भी पूर्ति करेगी।

(ग) पुस्तक चयन करते समय वर्तमान तथा सम्भावित (Potential) पाठकों का भी ध्यान रखना चाहिए और उन्हीं के अनुरूप पुस्तक चयन कर पुस्तकें क्रय करनी चाहिए।

पुस्तक चयन ऐसा होना चाहिए जिससे की समाज के प्रत्येक वर्ग की मांगों की पूर्ति हो सके। उनके शैक्षणिक, राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक तथा मनोरंजनात्मक दृष्टि से ज्ञान वृद्धि का क्रमबद्ध (Systematic) विकास हो सके। स्थाई मूल्यों की पुस्तकें खरीदी जानी चाहिए।

## (iii) कम मूल्य (Least Coot) :

कम मूल्य या न्यूनतम व्यय का आशय है कि सीमित साधनों के अन्तर्गत ही सर्वोत्तम पुस्तकों का क्रय किया जाय। पुस्तकालयों को दी जाने वाली अनुदान की रशि सीमित होती है। **अतः इसका उपयोग सही ढंग से होना चाहिए। कभी-कभी पुस्तक**


HMDC-019

विक्रेता प्रभावित कराकर वैसी पुस्तकों का चयन करा देते हैं जिसका मूल्य भी अधिक होता है तथा जिसका उपयोग भी कम पाठकों द्वारा किया जाता है। उपहार, विनिमय, पुस्तकालय, छूट का भी लाभ उठाना चाहिए। परन्तु इसका अर्थ कदापि नहीं लेना चाहिए कि कम कीमत में वैसी पुस्तकों को क्रय कर लें जो निम्न स्तर के लेखकों द्वारा लिखा गया हो। अच्छी पुस्तकें अच्छे लेखकों द्वारा ही लिखी जाती है, और उनका मूल्य भी अधिक होता है। अतः कम कीमत की पुस्तकों का चयन करते इस बात को भी ध्यान में करना आवश्यक है।

## 5.5.3 मैककाल्विन के सिद्धान्त :

मैककाल्विन महोदय ने ग्रन्थ चयन हेतु माँग का सिद्धान्त प्रतिपादित किया और उन्होंने कहा कि ग्रन्थ चयन माँग पर आधारित होना चाहिए। आपके अनुसार-पुस्तकें स्वयं में कुछ नहीं हैं जब तक कि उनको माँग के द्वारा उपादेय न बना लिया जाय। जितना अधिक ग्रन्थ चयन माँग से सम्बद्ध होना उतनी है अधिक सम्भाव्य सेवा होगी। आपके मतानुसार किसी भी पुस्तक की मांग पाठकों द्वारा उसकी उपयोगिता के कारणों से अधिक होती है, इसलिए पाठकों की मांग के अनुसार ही ग्रन्थों का चयन करना चाहिए। **मैक काल्विन** के अनुसार माँग के तीन पक्ष होते हैं— उपयोगिता, आकार तथा विभिन्नता। इन तीनों को एक साथ लेकर ही किसी माँग का मूल्याकन करना उचित है। परन्तु साधारणतया माँग के आकार पक्ष को ही निर्णायक तत्व मान लिया जाता है। अनेक माँगों का आकार विशाल हो सकता है, परन्तु उनकी उपयोगिता अल्प हो सकती है अर्थात् अनेक पाठक किसी विशिष्ट ग्रन्थ की माँग कर सकते हैं, परन्तु उपयोगिता की दृष्टि से वह ग्रन्थ अनुपयोगी एवं हानिकारक हो सकता है। माँग की विभिन्नता मानव प्रकृति की जटिलता के कारण उत्पन्न होती है। विभिन्न प्रकार के पाठकों द्वारा एक ही विषय के विभिन्न पक्षों पर विभिन्न स्तर की सामग्री की माँग की जाती हैं।

## 5.5.4 रंगनाथन के सिद्धान्त :

डॉ॰ एस॰ आर॰ रंगनाथन ने अपने पुस्तक चयन के सिद्धान्त में पुस्तकालय विज्ञान के प्रथम तीन सूत्रों को शामिल किया हैः

**प्रथम सूत्रः पुस्तकें उपयोग के लिये हैं :**

इस सूत्र के अनुसार पुस्तकालय में उसी साहित्य का चयन किया जाना चाहिए जिनका उपयोग हो सके अथवा होने की संभावना हो। जिस पाठ्य सामग्री के उपयोग होने की संभावना न हो उसका चयन नहीं किया जाना चाहिए।


NMDC-019

**द्वितीय सूत्रः प्रत्येक पाठक को उसकी पुस्तक मिले :**

इस सूत्र के अनुसार पुस्तकालय में पुस्तकों का चयन करने से पूर्व पाठकों की आवश्यकता को जान लेना चाहिये। पुस्तकालय में चयन पाठकों की आवश्यकता के अनुरूप ही होना चाहिए जिससे हर पाठक को अपनी रूचि का साहित्य प्राप्त हो सके।

**तृतीय सूत्रः प्रत्येक पुस्तक को उसका पाठक मिले :-**

इस सूत्र के अनुसार पुस्तकालय में उन्हीं पुस्तक का चयन किया जाना चाहिए जिनके पाठक पुस्तकालयों में उपलब्ध हों। यदि ऐसा पाठक मिलने की सम्भावना न हो तो ऐसी पुस्तकों का चयन नहीं किया जाना चाहिये।

उपर्युक्त के आधार पर पुस्तक चयन की नीतियाँ निम्नवत् हैं —

1. पुस्तकालय द्वारा चयनित आच्छादित (Umberal) के चयनित/प्रतिनिधि प्रलेखों को यथा संभव अधिकाधिक सख्या में अधिगृहित करना;
2. समान रूचि की संस्थाओं के साथ ग्रंथों के अधिग्रहण के लिए समन्वय/सहयोग संबंधी समझौता करना;
3. पुस्तकालय के उपच्छाया (Penumberal) क्षेत्र में रुचि की सूचना आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए जहाँ तक संभव हो अंतर पुस्तकालय सहयोग (Inter Library loan) पर निर्भर रहना;
4. पुस्तकालय के असंबद्ध क्षेत्र की रूचि की सूचना आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पूर्णतः अंतर पुस्तकालय सहयोग पर निर्भर रहना;
5. प्रलेख प्राप्ति के उद्देश्य से, जहाँ तक संभव हो, निम्नलिखित वरीयता क्रम को अपनाना चाहिए— निःशुल्क, विनिमय तथा खरीद द्वारा।
6. जब कभी किसी प्रलेख के किसी भाग से ही उपयोक्ता के उद्देश्य की पूर्ति हो जाती हो, तो उसके लिए संपूर्ण प्रलेख को खरीदने को तरजीह न दें।
7. अगर उद्देश्य पूरा हो जाता हो तो मैक्रोफॉर्म को पसंद किया जाना चाहिए।

## 5.6 पुस्तक चयन के मापदण्ड

सीमित साधनों में पुस्तकालयों के लिए उपयोक्ताओं के लिए उपयोगी पुस्तकों का चयन करना एवं क्रय करना अत्यन्त ही जटिल कार्य है। साथ ही पुस्तकों की छपाई तथा बाइंडिग की गुणवत्ता की जाँच हो जिससे उसमें टिकाऊपन भी हो ताकि अधिक से

अधिक पाठक अदिक दिनों तक उसका उपयोग कर सकें। इन सभी बातों के लिए पुस्तक क्रय के पूर्व इसका मूल्यांकन भी करना आवश्यक है। साथ ही साथ विद्वानों ने पुस्तक चयन के कुछ मापदण्ड भी निर्धारित किये हैं। इन मापदण्डों के आधार पर पुस्तक चयन समिति स्तरीय तथा उपयोगी पुस्तकें चयन कर सकती हैं।

पुस्तक चयन के निम्नलिखित मापदण्ड हैं —

1. स्तर (Standard)
2. प्रकाशन तिथि (Date of Publication)
3. संस्करण (Edition)
4. विषय अभिगम (Subject Approach)
5. चित्रण (Illustration)
6. अनुक्रमणिका (Index)
7. जिल्दबन्दी (Binding)
8. छपाई (Printing)

**1. स्तर ( Standard ) –** पुस्तक चयन करते समय इस बात का अवश्य ही ध्यान रहना चाहिए कि हम किस स्तर के छात्रों के लिए या पाठकों के लिए पुस्तक चयन कर रहे हैं। माध्यमिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक एक ही विषय की पढ़ाई होती है, जैसे—गणित, रसायनशास्त्र, भौतिकशास्त्र तथा राजनीतिकशास्त्र। लेकिन पाठक ज्यों-ज्यों उच्च शिक्षा की ओर बढ़ता है तो उसके स्तर में फर्क बढ़ता है और पुस्तकें भी उसी अनुपात में लिखी जाती है। एम.एस.सी. की रसायनशास्त्र की पुस्तकें अगर हाईस्कूल के विद्यार्थी के लिए क्रय की जाये तो वह अनुपयोगी होगी। अतः जिस पुस्तकालय के लिए पुस्तक क्रय की जा रही है उसके पाठकों के स्तर को भी ध्यान में रखना चाहिए।

**2. प्रकाशन तिथि ( Date of Publication ) –** पुस्तक का चयन होना आवश्यक है और इसकी पहचान प्रकाशन तिथि से ही की जा सकती है। कभी-कभी किसी पुस्तक के वाह्य रूप को देखने से बिल्कुल नहीं लगता है कि पुस्तक पुरानी हैं परन्तु उसकी प्रकाशन तिथि पुरानी होती है पुस्तक के अन्दर जो सूचनाएँ दी गई हैं, वह बहुत पुरानी हैं। उनके मुकाबले में जो पुस्तकें बाद में छपी वह अद्यतन सूचनाएँ देती है।

**3. संस्करण ( Edition ) –** पुस्तकालय में नए संस्करण की पुस्तक की मांग होती है। अतः चयन करते समय उसके संस्करण पर ध्यान दोना आवश्यक है। बहुत सारी ऐसी पुस्तकों हैं जिनका प्रकाशन प्रतिवर्ष नए संस्करण (Revised edition) के रूप


HMDC-019

में होता है। अतः छात्रों को यही पुस्तक चाहिए ताकि अद्यतन सूचना मिल सके।

**4. विषय अभिगम ( Subject Approach ) –** किसी विषय पर लेखक की पहुँच उनके अपने किसी दृष्टिकोण से होती है। पुस्तक में वर्णित विषय सम्बन्धित पुस्तकालय के पाठकों के लिए उपयोगी है कि नहीं इसकी बी जाँच आवश्यक है। पुस्तक में प्रस्तुत विषय विश्वसनीय है कि नहीं तथा पुस्तक उपयोगकर्ताओं को कितना लाभ पहुँचा सकती है इसका भी निर्णय आवश्यक है।

**5. चित्रण ( Illustration ) –** बहुत से ऐसे विषय हैं जिनके अन्तर्गत कठिन प्रश्नों को चित्रण के द्वारा ही पाठकों को समझाया जाता है जिससे वह आसानी से समझ लेते हैं। जैसे शरीर की रचना या भौगोलिक स्थिति। अतः चित्रण वाली पुस्तकें छात्रों के लिए अधिक उपयोगी होती है।

**6. अनुक्रणिका ( Index ) –** पुस्तकालय में नए संस्करण की पुस्तक की मांग होती है। इससे पाठकों को संदर्भ के लिए अन्य पुस्तकों का अध्ययन करना सरल हो जाता है।

**7. जिल्दबंदी ( Binding ) –** पुस्तकों का उपयोग पाठक करते हैं और वह इस दृष्टि से करते हैं कि यह पुस्तक मैंने पुस्तकालय से ली है। अतः इसका तनिक भी ख्याल नहीं करते हैं कि पुस्तक फटे नहीं। अतः मजबूत और अच्छी जिल्दबंदी ही पुस्तक को टिकाऊपन दे सकती है।

उपर्युक्त मापदण्डों के अतिरिक्त निम्नलिखित का भी पुस्तक चयन करते समय ध्यान रखा जाना आवश्यक है।

1. **विषय वस्तु** - पुस्तक के अन्दर वर्णित विषय का आधार क्या है, क्या यह उक्त पुस्तकालय के पाठकों के लिए उपयोगी है। विषय का क्षेत्र क्या है, यह सामान्य पाठक के लिए अथवा विशेषज्ञ के लिए है। सामाजिक घटनाओं पर अगर कोई पुस्तक है तो क्या उसमें सच्चाई भी है। विषय का आधार संतुलित तथा वस्तुनिष्ठ है। क्या मौलिक विषय है।

2. **लेखक का महत्व**-किसी भी पुस्तक के स्तर की जाँच उसके लेखक से भी की जा सकती है। लेखक की योग्यता शिक्षा तथा अनुभव पुस्तक लेखन के लिए महत्वपूर्ण मानी जाती है। अतः इसका मूल्यांकन आवश्यक है, पुस्तक के अन्दर जिस विषय के बारे में लिखा गया है क्या उसमें मूल सामग्री सम्मिलित की गई है, जिस विषय पर लेखक पुस्तक लिख रहा है उसका इस विषय पर अनुभव क्या है? क्या लेखक उदारवादी दृष्टिकोण क्या है? या सुधारवादी। पुस्तक में पक्षपात का रवैया तो नहीं अपनाया है?


HMDC-019

क्या लेखक इसका विशेषज्ञ है? इत्यादि का ध्यान रखना महत्वपूर्ण है।

**3. पुस्तक का गुण** – इसकी जाँच आवश्यक है कि क्या पुस्तक मौलिक है और यह किसी सीमा तक पाठकों को प्रभावित कर सकेगी? इसकी भाषा शुद्ध है सरल तथा स्पष्ट है अथवा जटिल। इसकी उपयोगिता स्थाई है अथवा क्षणिक क्या पुस्तक विवादग्रस्त है? तथा संदिग्ध तथ्यों पर आधारित है।

## 5.7 पुस्तक चयन की नीतियाँ :

किसी भी ग्रन्थालय का मूल्यांकन उसमें संग्रहीत ग्रन्थों के आधार पर ही किया जाता है। वास्तव में ग्रन्थालयों का लक्ष्य अधिकतम व्यक्तियों को न्यूनतम व्यय पर सर्वोत्तम अध्ययन सामग्री प्रदान करना है। ग्रन्थालयों में सर्वोत्तम अध्ययन सामग्री अर्थात् सर्वोत्तम ग्रन्थों का संकलन तब ही सम्भव हो सकेगा जब ग्रन्थ चयन करते समय एक श्रेष्ठ ग्रन्थ नीति का अनुपालन किया जाय। सर्वप्रथम सर्वोत्तम शब्द की व्याख्या करना आवश्यक है।

सर्वोत्तम शब्द विशुद्ध रूप से सापेक्षिक शब्द है अर्थात् जो दूसरों की अपेक्षा उपयोगी और श्रेष्ठ हो। जो ग्रन्थ अभियान्त्रिकी (Engineering) के छात्र के लिए सर्वोत्तम सिद्ध हो सकता है वही ग्रन्थ औषधिशास्त्र (Medical Science) के छात्र के लिए अनुपयोगी एवं निरर्थक हो सकता है। फिर भी सर्वोत्तम ग्रन्थों में सत्यता, सुस्पष्टता, रूचि तथा साहित्यिक विशेषता नामक विशेषताएँ होनी चाहिए। सर्वोत्तम ग्रन्थों का चयन करने के लिए निम्न बिन्दुओं पर अवश्यक विचार करना चाहिए।

**( 1 ) आकर्षक स्वरूप ( Good get-up )** - ग्रन्थालयों हेतु ग्रन्थों का चयन करते समय उन ग्रन्थों को प्राथमिकता देनी चाहिए जिनका बाह्य-स्वरूप एवं आकार आकर्षक, सुन्दर तथा स्वच्छ होता है। जैसा कि हम जानते हैं कि मनुष्य की यह जन्मजात प्रवृत्ति रही है कि वह आकर्षक वस्तु की ओर शीघ्र ही स्वतः ही आकर्षित होता है। अतः इस सिद्धान्त के आधार पर आकर्षक स्वरूप एवं बनावट के ग्रन्थों का चयन वरीयता के आधार पर किया जाना चाहिए।

**( 2 ) सभी विषयों के ग्रन्थ ( All Subjects )** - ग्रन्थालयों में सभी विषयों एवं प्रकरणों की रूचियों के पाठक होते हैं। यदि सार्वजनिक ग्रन्थालय है तो उसके क्षेत्र में विभिन्न विषय की रूचियों के निवासी उसके पाठक हो सकते हैं और यदि कोई शैक्षणिक ग्रन्थालय है तो वहाँ के पाठकों का तो विभिन्न विषयों से सम्बन्धित होना स्वाभाविक है। अतः ग्रन्थालय में संग्रहण एवं संकलन हेतु सभी विषयों के ग्रन्थ चयन

किये जाने का प्रावधान करना चाहिए।

**( 3 ) सभी के लिए ( For All )** - ग्रन्थालय किसी भी प्रकार का हो उनके पाठक विभिन्न अभिरूचियों वाले होते हैं तथा उनकी मांग भी विविध प्रकार की होती है- कोई पाठक उपन्यास पढ़ना चाहता है, कोई कविता, कहानी अथवा गल्पसाहित्य। दूसरा पाठक अपने किसी विषय की पुस्तक पढ़ना चाहता है इसके साथ ही एक ही पाठक विभिन्न समय पर विभिन्न तरह का साहित्य पढ़ना चाहता है। इससे यह सिद्ध होता है कि पाठकों की रूचियाँ भिन्न-भिन्न होती हैं। अतः इसके लिए यह आवश्यक है कि ग्रन्थालयों में ग्रन्थों का चयन सभी तरह के पाठकों की अभिरूचियों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए।

**( 4 ) नवीन एवं अद्यतन संस्करण ( New and Latest Editions )** - ज्ञान निरन्तर गतिशील एवं वर्धनशील होता है। अतः ग्रन्थों के पुराने संस्करणों में निहित पठनीय-सामग्री की विषय-वस्तु कुछ समय के बाद ही प्राचीन, अनुपयोगी तथा निरर्थक हो जाती है। ऐसे ग्रन्थों का चयन करके ग्रन्थालय के लिए क्रय करना ग्रन्थालय की उपयोगिता में कमी करना होता है। अतः ग्रन्थों का चयन करते समय नवीन एवं अद्यतन संस्करणों का ही चयन करना ग्रन्थालय तथा पाठकों के लिए हितकर रहेगा।

**( 5 ) लोकप्रिय ग्रन्थ ( Popular Books )** - कुछ ग्रन्थों की उपयोगिता इतनी बढ़ जाती है कि वे पाठकों में अत्यन्त लोकप्रिय हो जाते हैं। ऐसे ग्रन्थ प्रायः सभी विषयों में मिल जाते हैं जिनकी लोकप्रियता दिन र दिन बढ़ती जाती है और जिसके फलस्वरूप उनकी माँग एवं उपादेयता में भी वृद्धि होती जाती है। अतः ऐसे ग्रन्थों की अनेक प्रतियाँ ग्रन्थालयों में क्रय की जा सकती हैं।

**( 6 ) बजट के अनुसार ( According to Budget )** - सभी ग्रन्थालयों का बजट सीमित होता है और सीमित बजट के अनुसार ही ग्रन्थों का चयन किया जाना चाहिए। कम से कम धन व्यय करके अधिक से अधिक सर्वोत्तम ग्रन्थों का चयन करना चाहिए। इसके लिए प्रतिशत छूट () उपहार, विनिमय आदि का लाभ प्राप्त करना चाहिए।

## 5.8 सारांश

इस इकाई में आपने निम्नलिखित के बारे में विस्तारपूर्वक ज्ञानार्जन किया है।

पुस्तक चयन का अर्थ एवं उसकी परिभाषा,

- पुस्तक चयन के उद्देश्य एवं आवश्यकता,
- रंगनाथन के पुस्तकालय विज्ञान के सूत्र तथा उनका पुस्तक चयन में योगदान,
- पुस्तक चयन के महत्वपूर्ण सिद्धान्त
- पुस्तक चयन के मापदण्डों का अध्ययन तथा
- पुस्तक चयन हेतु नीतियों एवं निर्देशात्मक तत्वों की सम्यक जानकारी।

इस प्रकार इकाई के अध्ययनोपरान्त आप पुस्तक चयन के सिद्धान्तों एवं नीतियों के विभिन्न पक्षों से अवगत हो गये हैं।

## 5.8 सारांश

1. पुस्तक चयन से क्या अभिप्राय है?
2. पुस्तक चयन के उद्देश्य एवं आवश्यकता पर प्रकाश डालिए?
3. पुस्तक चयन हेतु पुस्तकालय विज्ञान के सूत्रों के क्या निहितार्थ हैं?
4. पुस्तक चयन के सम्बन्ध में ड्यूरी के सिद्धान्तों की चर्चा कीजिए?
5. मेल्विन डीवी द्वारा प्रतिपादित पुस्तक चयन हेतु सिद्धान्तों को स्पष्ट कीजिए?
6. पुस्तक चयन के मापदण्डों की चर्चा कीजिए?
7. पुस्तक चयन के नीति निर्धारण में महत्वपूर्ण कारकों की चर्चा कीजिए?

# इकाई -6 : पुस्तक चयन श्रोतों के प्रकार

## इकाई की रूपरेखा


6.0 उद्देश्य

6.1 पुस्तक चयन श्रोत का आशय

6.2 पुस्तक चयन के विभिन्न श्रोत

6.3 भारतीय प्रकाशनों में चयन श्रोत

6.4 विदेशी प्रकाशनों में चयन श्रोत

6.5 निष्कर्ष

6.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

6.7 संदर्भ एवं इतर पाठ्य सामग्री


## 6.0 उद्देश्य

पुस्तकालय में अनेक प्रकार की पाठ्य सामग्रीयों का संग्रह किया जाता है जो पाठकों की सूचना/मनोरंजन सम्बन्धी / आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। पुस्तकालयों में कुछ इस तरह के सभी प्रकाशक मंगाये जाते हैं जो प्रकाशनों एवं पाठ्य सामग्रीयों के बारे मे महत्वपूर्ण सूचना देते हैं। इस इकाई में आप पुस्तकों एवं पुस्केत्तर सामग्रियों के चयन के लिए विभिन्न चयन स्रोतों उनकी विशेषताओं तथा भारतीय एवं विदेशी प्रकाशकों के लिए महत्वपूर्ण श्रोतों के बारे में जानकारी अर्पित करेंगे। इस इकाई के अध्ययनोंपरान्त आप निम्न बातों को जानने में सक्षम हो सकेंगे।

1. चयन स्रोत क्या है।
2. चयन के विभिन्न स्रोत कौन-कौन से है।
3. महत्वपूर्ण भारतीय एवं विदेशी चयन स्रोत कौन-कौन से हैं।

## 6.1 पुस्तक चयन स्रोत से आशय

पुस्तक चयन से अभिप्राय है, अपने सीमित साधनों को देखते हुये पाठकों की जरूरतों की पूर्ति के लिए बहुत सी उपलब्ध पाठ्य सामग्री में से उपयोगी का चयन करता है। ताकि पुस्तकालय के संग्रह में वृद्धि होती रहे। वह एक कला है, कोई साधारण कार्य

HMDC-019

नहीं, कठिन है। इसके लिए पाठ्य सामग्री की उपलब्धि का सम्पूर्ण ज्ञान, पाठकों की रूचि एवं मांग और उपलब्ध साधनों के विषय में जानकारी आवश्यक है।

सूचना संसाधनों का विकास किसी भी पुस्तकालय अथवा सूचना केन्द्र की महत्वपूर्ण गतिविधि है क्योंकि यह पुस्तकालयों की कुशल एवं प्रभावी गतिविधियों को सुनिश्चित करती है। यह गतिविधि केवल पाठकों को उपयुक्त पाठ्य सामग्री प्रदान करती है। सूचना संसाधनों का विकास केवल उपयुक्त चयन स्रोतों या संर्दिकाओं अथवा विभिन्न प्रकाशनों के संबंध में सूचना देने वाले स्रोतों के द्वारा ही संभव है। ये स्रोत आश्यकतानुसार या तो विद्यामान प्रकाशनों तथा/या नवीन एवं आगामी प्रकाशनों की सूचना प्रदान करते हैं। ग्रन्थसूचियाँ तथा प्रकाशित पुस्तकालय प्रसूचियाँ तथा प्रकाशकों, मुद्रकों पुस्तक विक्रेताओं द्वारा विज्ञप्ति सेवाओं/नवीन प्रकाशकों के लिए रचना तन्त्र के रूप में परवर्ती अथवा नवीन तथा आगामी प्रकाशकों के लिए स्रोत प्रकाशित किये जाते हैं। इसी प्रकार भारतीय राष्ट्रीय पुस्तकालय, कोलकाटा (भारतीय राष्ट्रीय ग्रन्थसूची) जैसी संस्थाओं या व्यापारिक एजेन्सियों (इंडियन बुक्स इन प्रिन्ट, अमेरिकन बुक्स पब्लिशिंग रिकार्ड, ब्रिटिस बुक्स इन प्रिन्ट इत्यादि) या पत्रिका प्रकाशकों (बुक रिव्यूज) या समाचार पत्रों जिनमें उनके साप्ताहिक अंक के नये प्रकाशन, नाम के अन्तर्गत ग्रंथ समालोचनाओं की पारंपारिक रूप में सूचना प्रकाशित की जाती है। द्वारा प्रकाशित सूचनाऐं भी पुस्तक चयन स्रोत का कार्य करती है। इसके अतिरिक्त विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संस्थानों द्वारा प्रकाशित सामयिक सूचियाँ प्रलेख चयन के लिए स्रोतों के रूप में प्रयुक्त की जा सकती है। पुस्तक चयन स्रोत कई प्रकार के हो सकते हैं। जो पुस्तकालयाध्यक्ष की सहायता करते हैं परन्तु वह स्रोत बहुत दूर तक सामान्य न होकर सीमित क्षेत्र का ही प्रतिनिधित्व करते हैं। कुछ वह स्रोत है जो कि सामान्य रूप से सभी विषयों पर अपनी सूचनाएँ प्रदान करते हैं।

## 6.2 पुस्तक चयन के विभिन्न श्रोत

पुस्तकालयों हेतु पुस्तक चयन करते समय कुछ उपकरणों का प्रयोग महत्वपूर्ण होता है जो पुस्तकों के बारे में सम्यक जानकारी उपलब्ध कराते हैं। पुस्तकों का चयन करते समय पुस्तकालय के प्रकार, उनके पाठक एवं उनकी आवश्यकताओं को ध्यान में रखा जाना अत्यन्त ही आवश्यक है। पुस्तकालय में नवीन पुस्तकों के साथ-साथ प्राचीन एवं संदर्भ ग्रन्थों का भी चयन किया जाना चाहिए। इस कार्य चयन स्रोत काफी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हैं। कुछ स्रोत काफी चुनिन्दा विषयों पर ही अपनी सूचनायें केन्द्रीत करते हैं। इनका सहयोग विशिष्ट तथा विश्वविद्यालय या शोध


HMDC-019

ग्रन्थालयों में अधिक किया जाता है। परन्तु कभी-कभी यह आलोचनाये पछपातपूर्ण हो जाती है। क्योंकि इनको लिखने वाले अपनी व्यक्तिगत रूचि व अरूचि का प्रमेय उनकी समीक्षाओं में व्यक्त करता है।

**( 1 ) अमुद्रित स्त्रोत -** पाठकों द्वारा दिये लिखित व मौखिक ग्रन्थ चयन के सम्बन्ध में सुझाव संदर्भ सेवा कर्मचारियों द्वारा तैयार किये गये विवरण, प्रकाशकों के प्रतिनिधियों द्वारा दी गयी सूचनायें अन्य ग्रनालियों के भण्डार कक्षों, ग्रन्थ विक्रेताओं की दुकानों एवं प्रदर्शनीयों में रखी हुई पुस्तकों, व्यक्तिगत रूप से देखकर बनाई गई सूचियों आदि को अमुद्रित स्त्रोत अथवा उपकरण माना जाता है।

**( 2 ) मुद्रित स्त्रोत -** मुद्रित स्त्रोतों में वाडग्मयसूचियाँ व्यापारिक सूचियाँ, प्रकाशकों की सूचियाँ तथा सामयिक प्रकाशनों में प्रकाशित, ग्रन्थों की समलोचनाएँ एवं समिक्षाएँ आदि सम्मिलित होते हैं। विभिन्न मुद्रित उपकरणों का वर्णन किसी भी उत्तम ग्रन्थ पर लिखित ग्रन्थ से प्राप्त किया जा सकता है। भारत में प्रकाशित ग्रन्थों के चयन के लिए स्त्रोतों का नितान्त अभाव है किन्तु विदेशी ग्रन्थों के चयन के लिए पर्याप्त स्त्रोत उपकरण उपलब्ध हैं। इन भारतीय एवं विदेशी जानकारी चयन स्त्रोतों की जानकारी इसी इकाई में आगे दिया गया है। मुद्रित स्त्रोतों को निम्नलिखित छः श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है।

(i) पुस्तकों की सम-सामयिक सूचियाँ जो पुस्तिकाओं, बुलेटिनों, पत्रिकाओं, विज्ञप्ति, आवरकों इत्यादि के रूप में प्रस्तुत की जाती हैं।

(ii) प्रसूचियाँ तथा ग्रन्थसूचियाँ

(iii) राष्ट्रीय ग्रन्थसूचियाँ

(iv) विषयात्मक ग्रन्थसूचियाँ

(v) सामयिक समालोचनाएँ

(vi) विशिष्ट सूचियाँ जो ग्रन्थि संस्तुतियाँ ग्रन्त विक्रेताओं अथवा किसी एक विशिष्ट क्षेत्र के विषय में मूल प्रकाशनों से सम्बन्धीत जानकारी उपलब्ध कराती है। कुछ सामान्य प्रकृति के महत्वपूर्ण चयन स्त्रोतों के उदाहरण निम्नवत् हैं।

1. American Library Association - इसके द्वारा प्रकाशित पुस्तक सूची, जो Library Journal के रूप में प्रकाशित होती है मुद्रित या आनलाइन दोनों रूप में


HMDC-019

उपलब्ध है।

2. New York Times Book Review - इसे भी आनलाइन प्राप्त करके समीक्षायें प्राप्त की जा सकती हैं।

3. Publishers Weekly - यह भी एक अच्छा तथा विश्वसनीय स्रोत है परन्तु यह एक मँहगा स्रोत है। यद्यपि इसमें प्रकाशित समीक्षायें काफी विश्वसनीय तथा निरपेक्ष मानी जांती हैं ।

4. Horn Book Magazine - छोटे बच्चों के साहित्य के लिये काफी विश्वसनीय तथा विस्तृत स्रोत मानी जाती है यह आज भी मुद्रित रूप में मँगायी जा सकती है।

5. Bulletin of the Center of Children's Books - भी बाल साहित्य के लिये एक और विश्वसनीय स्रोत है। जो आनलाइन है तथा इसका मुद्रित संस्करण भी उपलब्ध है।

6. Library Media Connection जो कि Linworth द्वारा प्रकाशित है। काफी यह महत्वपूर्ण समीक्षायें प्रदान करता है जो पुस्तकचयन हेतु काफी महत्वपूर्ण हैं।

7. The Voice of Youth Advocates- Voya वयस्क साहित्य के चुनाव हेंतु सर्वोत्तम स्रोत माना जाता है।

8. Online Book Stores- ऑनलाइन पुस्तकें क्रय करने हेतु आजकल अत्यन्त प्रचलित Websites उपलब्ध है। उदाहरण के लिये amazon.com जो सभी विषयों पर पुस्तकों से संबंधित सारी जानकारी निःशुल्क प्रदान करती है।

9. Barnes and Nobles- एक ऐसी Website है जो एक लाख पुस्तकों की जानकारी आनलाइन प्रदान करती है।

10. Alibris- एक वेबसाइट है जो लाखों पुस्तकों की जानकारी ऑनलाइन प्रदान करती है।

11. OCLC's World Cat - यह भी एक अत्यन्त विस्तृत सूचना प्रदान करने वाला स्रोत है।

उपर्युक्त के अतिरिक्त निम्नलिखित वेबसाइटें भी पुस्तक चयन हेतु महत्वपूर्ण स्रोत हैः-
http://bookwizard.scholastic.com/tbw/homePage.do
http://www.pbs.org/teachers/bookslinks/
http://www.aaupnet.org/librarybooks/index.html

कुछ पब्लिशर्स भी अपने प्रकाशनों की जानकारी ऑनलाइन उपलब्ध कराते हैं। जिनमें से महत्वपूर्ण प्रकाशनों की सूची निम्नवत् हैं:-

Blackwells
cambridge university press
Oxford University Press
Palgrave
Springer
Routledge
De Gruyter
Kluwer Academic
National Academies Press
Book Sellers Association
American University Presses
Wiley

भारत में प्रकाशित पुस्तक के चयन में उपकरणों का नितान्त अभाव है।हमारे देश में आज भी हिन्दी पुस्तकों का Books in Print उपलब्ध नहीं है, जो जानकारी प्रदान कर सके कि कौन सी पुस्तक हिन्दीं भाषा में उपलब्ध है तथा कौन सी नहीं? आशा है आने वाले कुछ वर्षों में Books in Print प्रकाशित होने की संभावना है, जिससे हिन्दी पुस्तकों का चयन अपेक्षाकृत आसान हो जायेगा।

## 6.3 भारतीय प्रकाशनों के लिये पुस्तक चयन के स्रोत (Book Selection Sources for Indian Publications)

भारतीय प्रकाशनों के चयन करने के लिए उनके श्रोतों की जानकारी प्राप्त करना एक मुश्किल कार्य है क्योंकि यहाँ पर प्रकाशक विभिन्न स्तरों पर प्रकाशन करते हैं तथा एक सर्वमान्य वाङमय सूची का सर्वथा अभाव है। भारतीय राष्ट्रीय वांग्यमयी सूची का प्रकाशन भी पूर्णतया निरन्तर नहीं है तथा इसके द्वारा सभी प्रकाशनों को शामिल भी नहीं किया जाता। तथापि यह भारतीय प्रकाशनों के विभिन्न भाषाओं में प्रकाशित साहित्य के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण जानकारी का श्रोत है। आज के युग में प्रकाशक अपने द्वारा प्रकाशित पुस्तकों की जानकारी इस सूची में न देकर अपनी निजी वेबसाइट पर देना अधिक पसन्द करते हैं। यदि भारतीय पुस्तकों के चयन श्रोतों का अध्ययन करना हो तो निम्नलिखित श्रोतों का अध्ययन महत्वपूर्ण होगा।

(1) Indian National Bibliography (भारतीय राष्ट्रीय वाङमय सूची)

यह भारत देश की अंग्रेजी तथा भारतीय संविधान में स्वीकृत अन्य भारतीय भाषाओं में प्रकाशित सभी पुस्तकों की राष्ट्रीय वाङमय सूची है।

भारतीय राष्ट्रीय वांग्यमय सूची पुस्तक एवं समाचार पत्र (सार्वजनिक पुस्तकालय) अधिनियम, 1954 (अधिनियम सं0 27 वर्ष, 1954 का संशोधन अधिनियम सं0 99 वर्ष 1956) के अन्तर्गत राष्ट्रीय पुस्तकालय, कोलकाता में प्राप्त असमीया, बंगला, अंग्रेजी, गुजराती, हिन्दी कन्नड़, मलयालम, मराठी, उड़िया, पंजाबी, संस्कृत, तमिल, तेलुगु तथा उर्द् भाषा के अद्यतन भारतीय प्रकाशनों का प्राधिकृत ग्रंथसूची रिकार्ड संचयनित हैं।

अधोलिखित प्रकार के प्रकाशनों की सूचना इसमें सम्माहित नहीं है:-

क) मानचित्र

ख) म्यूजिकल एसकोर्स

ग) धारावाहिक एवं समाचार पत्र (नई धारावाहिक का प्रथम अंक तथा नये शीर्षक के अंतर्गत धारावाहिक का प्रथम अंक छोड़कर)

घ) टेक्सटबुक के कुंजी एवं गाइड

च) एकांध तथा इस तरह के अन्य सामग्रियाँ आदि।

मुख्य प्रविष्टियाँ रोमन लिपि में तथा परितुलन तथा टीका अंग्रेजी में है। वर्गीकृत भाग डेवी डिशमल योजना के अनुरूप व्यवहार में लाया जाता है लेकिन कोलोन क्लासिफिकेशन योजना से संख्याओं का दाहिने हाथ के नीचे में प्रत्येक प्रविष्टियों में की जाती है जो ग्रंथ सूची के व्यवहारमूलक होती है तथा पुस्तकालय कोलोन क्लासिफिकेशन योजना के अनुरूप इसे व्यवस्थित रखती है।

**(2) Index Indiana (इंडेक्स इंडियाना)**

यह भारतीय भाषाओं की धारावाहिकों के साहित्यिकी अनुसंधान के लिए एक महत्वाकांक्षी परियोजना रही है। इंडेक्स इंडियाना का प्रथम अंक 1977 ई. में त्रैमासिक रूप में निकाला गया तथा 1981 ई. से इसे वार्षिकी रूप में प्रकाशित किया जाने लगा। प्रारंभिक चरण में 6 भाषाओं यथाः बंगला, हिन्दी, गुजराती, मराठी, तमिल तथा मलयालम के धारावाहिक थे। अनुच्छेदात्मक (इंडेक्सिंग) प्रलेखों जिसमें भारतीय साहित्य

सामाजिक विज्ञान, भारतीय चिकित्सा पद्धति, लोक साहित्य, दर्शन आदि में अनुसंधानकर्ताओं को काफी मदद हासिल हो सकती है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी आदि में इस तरह के प्रकशन पहले से ही उपलब्ध है। सक्षम भाषा व्यवसायिकों की कमी के कारण अधिकांश समय यह परियोजना अनुमान के अनुसार खरी नहीं उतर पाई हैं, फिर भी इस दिशा में कई कारगर कदम भी उठाये गये हैं।

इस इंडेक्स (अनुच्छेद) को तीन भागों में बांटा गया है - वर्गीकृत भाग, विषय अनुच्छेद तथा लेखक अनुच्छेद। इसमें प्रविष्टियाँ डेवी-डेशिमल क्लासिफिकेशन सिस्टम के अनुसार की जाती है। सभी प्रविष्टियाँ वर्गीकृत भाग में शृंखलागत संख्या के अनुरूप की जाती है। लेखक का नाम तथा शीर्षक रोमन लिपि में लोकप्रिय वर्णागत रूप में की जाती है लेकिन कोई विशेषणात्मक चिन्ह का व्यवहार किये उनके निकटतम रूप में की जाती है। विषय और लेखक इंडेक्स इन शृंखलागत संख्या से जुड़े रहते हैं।

इसके अद्यतन खंड का प्रकाशन 6 भाषाओं में जिसमें बंगला, हिन्दी, गुजराती, मराठी, मलयालम तथा तमिल में वर्ष 1992-1998 को प्रकाशित किया गया। इस शृंखला के शेष खण्डों के शीघ्र ही प्रकाशित होने की आशा है। यह भारतीय धारावाहिक प्रकाशनों के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी उपलब्ध कराती है।

(3) **Indian Books in Print** : यह दिल्ली से प्रकाशित है तथा 1976 तक अंग्रेजी भाषा में प्रकाशित लगभग 70,000 भारतीय प्रकाशनों को जो प्राप्य हैं इसमें सूचीबद्ध किया गया है।

(4) **Indian Book Reporter** : यह 1965 में गुड़गाँव से प्रकाशित हुयी थी जिसमें ग्रन्थों के लेखक, शीर्षक एवं विषय से सम्बन्धित प्रविष्टियों को एक ही आनुवर्णिक क्रम में व्यवस्थित किया जाता है। इसके सभी मासिक अंकों को एक वार्षिक खण्ड में संचित कर दिया जाता है।

(5) **Accession List India** : यह नई दिल्ली में स्थित यू एस लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस कार्यालय द्वारा अप्राप्य भारतीय ग्रन्थों की मासि सूची होती है। इसे प्रकाशनों की मूल भाषाओं के अनुसार क्रमबद्ध किया जाता है तथा प्रविष्टियों को प्रत्येक भाषा के खण्ड के अन्तर्गत लेखकों के नामों से वर्णक्रम में व्यवस्थित किया जाता है।

(6) **Indian Book Industry** : यह प्राइवेट प्रकाशन है तथा नई दिल्ली से प्रकाशित होती है। इसमें कुछ महत्वपूर्ण प्रकरणों पर लेख प्रकाशित होते हैं इसके

HMDC-019

अतिरिक्त, यह प्रत्येक माह अंग्रेजी भाषा में प्रकाशित ग्रन्थों की जानकारी भी देती है। इसमें कुछ प्रमुख ग्रन्थों की समीक्षाएँ भी प्रकाशित होती हैं।

(7) **National Bibliography of Indian Literarute** : यह नई दिल्ली से साहित्य अजादानुम प्राइवेट संस्था द्वारा 1962 से प्रकाशित होती है।

इसके अतिरिक्त अन्य महत्वपूर्ण श्रोत निम्नवत् है :-

1. BEPI : A Bibliograhy of English Publication in India, 1976-Anual Delhi DKF Trust.
2. Books of India : Supplement of Index India, 1976-Annual, Jaipur, Rajasthan University.
3. Recent Indian Book, 1975 - Quarterly, New Delhi, FPBAI
4. Indian National Bibliography, 1958-Monthly, Calcutta, Central Reference Library.
5. Indian Books in Print, 1970, Comp. By Sher Singh & Others, Delhi, Indian Bureau of Bibliography.
6. Indian Books 1969 Annual Varanasi, Indian Bibliography Centre.
7. National Bibliograhy of Indian Literature, 1910 - 1953 New Delhi, Shaitya Akademy, 1962
8. Impex Catalogue : A Reference Catalogue of Indian Books in English Language.
9. Indian Book Reporter, Gurgaon, Prabhu Book Service.
10. Social Sciences Publications, a Bibliography of Works Published in India, New Delhi, UNESCO
11. Indian Press Index, with Book Review Supplements, 1968.
12. Indian Book by H.D. Sharma, 1971.
13. Indian Book Industry. Federation of Indian Publishers and Book-

sellers.

14. Bibliography of Scientific Publication of South and South East Asia, New Delhi, UNESCO

15. Cumulative Book Index : World list of Scientific Books in English Language, New York, Wilson

16. राष्ट्रीय ग्रन्थ सूची, 1958-वार्षिक, लखनऊ हिन्दी विभाग उत्तर प्रदेश

17. हिन्दी ग्रन्थ सूची, पटना सिन्हा लाइब्रेरी, 1952

18. हिन्दी में उच्चतर, साहित्य, राजबली पाण्डेय द्वारा सम्पादित, वाराणसी, नागरी प्राचारिणी सभा, 1957

19. वृहद् हिन्दी ग्रन्थ सूची, यशपाल महाजन तथा कृष्ण महाजन द्वारा सम्पादित, दिल्ली भारतीय ग्रन्थ निकेतन।

## 6.5 विदेशी प्रकाशनों के लिए पुस्तक चयन के स्रोत (Book Selection Source for Foreign Publications)

विदेशी प्रकाशित पुस्तकों की जानकारी प्राप्त करने के लिए अनेक श्रोतों की आवश्यकता होती है विदेशी प्रकाशनों हेतु उपलब्ध श्रोतों में से कुछ विशेष देश के प्रकाशनों का प्रतिनिधित्व करते हैं तथा कुछ विषय विशेष का प्रतिनिधित्व करते हैं तथा कुछ प्रकाशक विशेष पर प्रकाशित साहित्य का प्रतिनिधित्व करते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ स्रोत मुद्रित व आनलाइन, दोनों रूपों में प्राप्त है। परन्तु आजकल आनलाइन स्रोतों का अधिक उपयोग हो रहा है जो कि प्रकाशक विशेष के द्वारा ही बनायी गयी है। वितरकों द्वारा भी कई ऑनलाइन जानकारी अनेक प्रकाशकों के बारे में पाई जाती है। विदेशी प्रकाशनों के चयन में निम्नलिखित चयन श्रोत उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं।

(1) ASLIB Book List, London, 1935 (Monthly)

यह वैज्ञानिक एवं तकनीकी विषयों से सम्बन्धित लगभग 70 पुस्तकों की मासिक तालिका होती है। इसमें प्रविष्टियों को यूडीसी वर्गीकरण पद्धति के अनुसार चार भागों में वर्गीकृत क्रम में व्यवस्थित किया जाता है। प्रत्येक प्रविष्टि में लेखक, शीर्षक, प्रकाशन विवरण, पृष्ठ आदि का विवरण दिया जाता है तथा पुस्तक के विषय की संक्षेप में व्याख्या की जाती है।

(2) British National Bibliography London, 1950

इसमें ग्रेट-ब्रिटेन के कॉपीराइट के अन्तर्गत ब्रिटिश म्यूजियम में प्रत्येक सप्ताह प्राप्त किये गये नवीन ब्रिटिश प्रकाशनों को सूचीबद्ध किया जाता है। प्रविष्टियों को दशमलव वर्गीकरण पद्धति के अनुसार वर्गीकृत क्रम में व्यवस्थित किया जाता है।

यह राष्ट्रीय वाङमय सूची यू.के. तथा आयरलैण्ड के समस्त प्रकाशनों की जानकारी प्रदान करती है। इसमें मुख्यतः पारम्परिक रूप से मुद्रित साहित्य को ही स्थान मिलता है। परन्तु सन 2003 से इलेक्ट्रानिक साहित्य को भी स्थान दिया जाता है।

नई पुस्तकें तथा नयी सामयिकी का पूर्ण उल्लेख इसमें सन 1950 से प्रकाशित हो रहा है। इसमें शामिल करने के लिए सभी प्रकाशित पुस्तकों व सामायिकियों को अधिकृत रूप से ब्रिटिश नेशनल लाइब्रेरी के कार्यालय में जमा करने के लिए भेजा जाता है तथा इस प्रोग्राम मे सभी प्रकाशकों को अपनी पुस्तकें बिना मूल्य के ब्रिटिश बुक डिलेवरी एक्ट के अन्तर्गत कानूनी बाध्यता भी सुनिश्चित की गयी है। इसमें सम्मिलित सभी सामग्री को ए.ए.सी.आर.-2 के अनुसार सूचीकृत किया जाता है तथा विषय शीर्षक लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस सब्जेक्ट हेडिंग के अनुसार बनाया जाता है। वर्तमान में वर्गीकरण के लिए डी.डी.सी.-22 संस्करण प्रयोग किया जा रहा है। यह कार्य पूर्णतया प्रशिक्षित कर्मचारियों द्वारा ही किया जाता है। इस कार्य को करने के लिए पांच ब्रिटिश तथा आयरिस ग्रन्थालयों को शामिल किया गया है। इसमें आने वाली पुस्तकों के विषय में जानकारी प्राप्त होती है। Catalogouging-in-Publication Programmes के तहत आने वाले शीर्षक प्रकाशन तिथि से लगभग 16 हफ्ते पूर्व प्रदान किये जाते हैं। सभी रिकार्ड खोज के लिए आनलाइन उपलब्ध है। इन्हें एक एक करके क्रमवार प्राप्त किया जा सकता है। उपलब्ध रिकार्ड MARC-21 प्रारूप में प्राप्त होते है। इसे शुल्क द्वारा भी साप्ताहिक रूप में प्राप्त किया जा सकता है, जो कि पी.डी.एफ. प्रारूप में उपलब्ध होते हैं। इतने प्रयासों के साथ भी सभी प्रकाशन सामग्रियों का उल्लेख नहीं हो पाता। इसमें मुख्यतः सरकारी तथा कुछ अन्य प्रकाशनों की भी जानकारी होती हैं। इसको और अधिक व्यापक बनाने के प्रयास निरन्तर जारी है।

(3) Books-in-Print, Bowker, New York

इसमें अमेरिका में प्रकाशित नवीन प्रकाशनों को सूचीबद्ध किया जाता है। यह एक बहुत विस्तृत प्रकाशनों की सूची है।

(4) British Book News, London

यह ग्रेट ब्रिटेन एवं कामनवेल्थ देशों में प्रकाशित पुस्तकों का चयन करने का बहुत उपयोगी श्रोत है। इसमें चयनित पुस्तकों का ही उल्लेख किया जाता है तथा लगभग 250 श्रेष्ठ पुस्तकों की समीक्षाएँ प्रकाशित की जाती हैं। प्रविष्टियों को वर्गीकृत क्रम में व्यवस्थित किया जाता है। जिसमें लेखक, व्याख्या, प्रकाशन, विवरण पृष्ठ इत्यादि का विवरण एवं मूल्य आदि का उल्लेख किया जाता है। इसमें समीक्षाएँ भी प्रस्तुत की जाती हैं।

(5) British-Books-in-Print, Whitakear, London

इसमें 2,00,000 के लगभग ब्रिटिश पुस्तकों की जानकारी दी जाती है जो लगभग 3000 ब्रिटिश पुस्तक विक्रेताओं के यहाँ किसी निश्चित समय पर उपलब्ध होती है। इसका नवीनतम संस्करण (1976) दो खण्डों में प्रकाशित किया गया है।

(6) Subject Guide to Books Print, Bowkar, N.Y.

इसमें अमेरिकी पुस्तकों को सम्मिलित किया जाता है। इसकी प्रविष्टियाँ विषयानुसार आनुवर्णिक क्रम में व्यवस्थित की जाती है। प्रविष्टि में लेखक, आख्या, प्रकाशन एवं पृष्ठादि विवरण का उल्लेख किया जाता है।

(7) आस्ट्रेलियन राष्ट्रीय वाङमय सूची

आस्ट्रेलियन राष्ट्रीय वाङमयसूची भी आस्ट्रेलिया में प्रकाशित पुस्तकों की सूची प्रदान करती है। इसका प्रकाशन 1960से हो रहा है। इसकी निरन्तरता में लगातार परिवर्तन होता रहा है। 1961-66 तक यह चार अंक प्रतिमाह प्रकाशित होती थी। फिर 1967-80 तक दो अंक प्रतिमाह प्रकाशित होने लगे। 1981-85 प्रतिमाह एक अंक तक प्रकाशित होने लगा। 1986 के पश्चात यह इलेक्ट्रानिक रूप में प्रकाशित होने लगी।

(8) Times Literary Supplement

यदि साहित्यिक पुस्तकों का चयन ही प्राथमिकता हो तो यह सूची प्रकाशित साहित्य का अत्यंत महत्वपूर्ण श्रोत है। इसका प्रकाशन 1902 से निरन्तर हो रहा है। यह पूर्ण रूप से 20वीं शताब्दी के चिन्तकों, लेखकों, समीक्षकों द्वारा प्रशंसनीय रही है।इनमें से कई महत्वपूर्ण लेखक एवं समालोचक इसमें अपनी समीक्षायें भी प्रदान करते रहे, हैं

जिनमें से कुछ प्रमुख हैं; T.S.Eliot, Virginia Wolf Gore Videl, तथा Seamus Heany । यह एक मात्र साहित्यिक प्रकाशन है जो साप्ताहिक है, जिसका क्षेत्र काफी व्यापक है तथा काफी अद्यतन प्रकाशकों की समीक्षायें प्रदान करता है। यह नाटक व चल चित्रों पर भी समीक्षायें प्रदान करता है। इसे अत्यन्त अधिकृत माना जाता है। प्रतिवर्ष यह अपने क्षेत्र को अधिक व्यापक करता जा रहा है। यह आजकल ऑनलाइन भी है तथा यू.एस.ए., इस्लामिक देशों, जर्मनी व अफ्रीकी आदि देशों में काफी प्रचलित है।

उपर्युक्त के अतिरिक्त निम्न श्रोत भी विदेशी प्रकाशनों हेतु महत्वपूर्ण चयन श्रोत हैं।

1. Book Seller, 1858- Weekly, London, J. Whitaker
2. British Book in Print, 1967 - Annual, London, Whitaker
3. British National Bibliography 1950 Weekly - London, British Library Bibliograhy Service Division
4. Cumulative Book List, 1924 Quarterly, London, Whitkaer
5. Publisher Weekly, 1872 - New York, R.R. Bowker
6. American Book Publishing Record. 1961 - Monthly, New York, R. R. Bowker.
7. Books in Print, 1948-Annual, New York, R.R. Bowker
8. Cumulative Book Index, 1889, Monthly New York, H.W. Wilson
9. The National Union Catalogue 1984, Monthly, Washington, Library of Congress
10. Aslib Book List, Monthly, London, Aslib
11. Book Review Digest Monthly, New York Wilson
12. Publisher's Trade List Annual, New York, Bowker
13. Readers Guide and Bookman's Annual : a Guide a Literature, New Tork, Bowker
14. Subuject Guide to Books in Print Annual, New York, Bowker
15. British Books in Print Annual : The Reference Catalogue of Current Literature (Formely know as Reference Catalogue of Cur-

rent Literature) London Whitaker

16. Dickinson (AD) : World's Best Book, 1953

17. Graham (Bessie) : Bookman's Manual Ed. 6, 1948

18. Sonenschein (WS) : The Best Books 6V.

पुस्तकालयों में पुस्तकों एवं सामयिक प्रकाशनों के अतिरिक्त भी कई तरह के प्रकाशन पाठ्य सामग्री के रूप में आते हैं। इन सामग्रियों के अन्तर्गत निम्नलिखित को सम्मिलित किया जाता है।

1. माइक्रोफार्म (Microforms)
2. एटलस (Atlas)
3. ग्लोब (Globe)
4. पिक्चर (Picture)
5. सी॰डी॰ रोम (CD-Rom)
6. कारटोग्राफिक सामग्री (Cartographic Materials)

उपर्युक्त प्रकार की सामग्री के चयन हेतु निम्नलिखित उपकरणों का उपयोग किया जाता है :-

1. Library Journal, R. R. Bowker, 1876.
2. School Library Journal, R. R. Bowker, 1954
3. Video Times, Publication International, 1984
4. Wilson Library Bulletin, H. W. Wilson, 1914
5. Film Library Quarterly, Film Library Information Council, 1967
6. Video Source Book Syosset, National Video Clearning House, 1979, Annual
7. Audio-Video Market Place : A Multi media Guide New York, R. R. Bowker, 1969, Annual
8. Film File Minneopolis, Media Referral Service 1980, Annual
9. Instructional Innovator, 1956
10. Limbacher J. L. : Feature Film, on 8 mm, 16 mm and Video tap Ed 8, New York, R. R. Bowker, 1985

11. Library Technology Reports, Chicago, American Library Association.

## 6.5 निष्कर्ष

यह इकाई मुख्य रूप से पुस्तक चयन के श्रोतों पर सम्पर्क जानकारी आपने अर्जित की है। इसमें पुस्तक चयन के श्रोत क्या है? यह कितने प्रकार के होते हैं, साथ ही साथ इसी इकाई में आपने भारतीय प्रकाशनों एवं विदेशी प्रकाशनों के चयन हेतु चयन श्रोतों की भी जानकारी प्राप्त की है। इसी इकाई में पुस्तकालय में क्रय की जाने वाली अपुस्तकीय सामग्रियों तथा एटलस, माइक्रोफार्म के चयन श्रोतों के बारे में भी ज्ञानार्जन किया। इस इकाई के अध्ययनोंपरान्त आप किसी भी पुस्तकालय में पुस्तक चयन हेतु निर्णय लेने में सक्षम हो गये हैं।

## 6.5 बोध प्रश्न

### दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. भारतीय प्रकाशनों के चयन हेतु महत्वपूर्ण चयन श्रोतों पर विस्तार पूर्वक चर्चा कीजिए।
2. विदेशी प्रकाशनों के लिये मुख्य चयन श्रोत कौन कौन से हैं तथा बच्चों का व वयस्कों के लिये उपयुक्त श्रोतों को स्पष्ट कीजिए।

### लघु उत्तरीय प्रश्न

3. भारतीय वाङमय सूची पर संक्षिप्त लेख लिखिए।
4. ब्रिटिश नेशनल वाग्यम सूची पर संक्षिप्त रूप से प्रकाश डालिए।

## 6.6 सन्दर्भ तथा इतर पाठ्य सामग्री

1. मिश्रा, प्रसिद्ध कुमार एवं राकेश जैन, पुस्तकालय प्रबन्ध, रजत प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008
2. Mittal, R. L. Library Administration, Metropolation, New Delhi, 1978.
3. सिंह, आर0 के0 एवं सेंगर, सुनीता पुस्तकालय प्रबन्ध, युनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2007
4. शर्मा, प्रहलाद, पुस्तकालय प्रबन्ध, युनिवर्सिटी पब्लिकेशन, जयपुर।


HMDC-019

# इकाई -7 : पुस्तक : अर्जन, परिग्रहण एवं तकनीकी प्रक्रियाकरण

## इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 पुस्तक चयन प्रक्रिया

7.1.1 पुस्तक चयन उपकरणों का अध्ययन

7.1.2 चयनित पुस्तकों की तालिका बनाना

7.1.3 चयनित पुस्तक तालिका का अनुमोदन

7.1.4 पुस्तक क्रयादेश की तैयारी

7.1.5 क्रयादेश प्रक्रिया

7.1.6 पुस्तक क्रयादेश भेजना

7.1.7 आदेश के पश्चात पुस्तक आने पर मिलान करना

7.1.7.1 पुस्तक सम्बन्धी त्रुटियाँ

7.1.7.2 बीजक सम्बन्धी त्रुटियाँ

7.1.7.3 अन्य प्रकार की त्रुटियाँ

7.1.7.4 भौतिक स्वरूप परीक्षण

7.2 पुस्तक परिग्रहण

7.2.1 परिग्रहण पंजिका की आवश्यकता एवं महत्व

7.3 विल पारित करना

7.4 तकनीकी प्रक्रियाकरण

7.4.1 वर्गीकरण

7.4.2 सूचीकरण

7.4.3 अन्य प्रक्रियाकरण कार्य

7.4.4 चिप्पी लगाना

7.4.3.1 लेबिल लगाना

7.3.4.2 लेबिल गुप्त पृष्ठ

7.3.4.3 सूची पत्रों का निर्माण

7.3.4.4 क्रमांकन कार्य एवं लेखन कार्य



NMDC-019

7.5 पुस्तक चयन व अर्जन विभाग की स्थापना

7.6 पुस्तक चयन व अर्जन विभाग के कार्य

7.7 पुस्तक चयन एवं अर्जन विभाग का महत्व

7.8 निष्कर्ष

7.9 बोध प्रश्न

7.10 संदर्भ एवं इतर पाठ्य सामग्री

## 7.0 उद्देश्य

पुस्तकालयों में सूचना श्रोतों का अर्जन एवं संगठन एक महत्वपूर्ण कार्य है जो स्पष्ट नीतियों पर आधारित होता है। पुस्तकों का चयन, अर्जन एवं परिग्रहण सम्मिलित कार्य है जिसके ठीक ढंग से सम्पादित होने पर इनका वर्गीकरण एवं सूचीकरण कर सूचना श्रोतों को पाठकों हेतु उपलब्ध कराया जाता है। इस इकाई में आपको इस सन्दर्भ किये जाने वाले शृंखलाबद्ध कार्यों एवं इसके लिए निर्धारित प्रक्रिया का परिचय प्रदान किया जायेगा। इस इकाई के अध्ययनोपरान्त आप निम्न प्रक्रियाओं एवं कार्यों के बारे में जानने में सक्षम हो सकेंगे।

1. पुस्तक चयन प्रक्रिया क्या है।

2. पुस्तक उद्देश्य कैसे किया जाता है।

3. पुस्तकों का अधिग्रहण कैसे किया जाता है।

4. पाठकों को उपलब्ध कराने के पूर्व किये जाने वाली तकनीकी प्रक्रिया प्रक्रियाओं की जानकारी ।

5. उपर्युक्त प्रक्रियाओं में प्रयुक्त विभिन्न अभिलेखों एवं पंजिकाओं के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

## 7.1 पुस्तक चयन की प्रक्रिया

प्रायः पुस्तकालयाध्यक्षों की पुस्तकों तथा पत्रिकाओं को क्रय करने की अपनी अपनी विधि होती है तथा वे ऑडिट की आवश्यकताओं को संतुष्ट करने के लिए जितनी सुगम व्यवस्था हो सके, अपनाते है। पुस्तक चयन कार्य कुछ समय पहले तक पुस्तकालय कर्मचारियों द्वारा न करके अन्य व्यक्तियों द्वारा किया जाता था। सार्वजनिक पुस्तकालयों में यह कार्य विशेषज्ञों के द्वारा कराया जाता था तथा शैक्षणिक पुस्तकालयों में विभिन्न

विषयों के विभागाध्यक्षों द्वारा किया जाता था। लेकिन अब समय बदल चुका है अब पुस्तकालयाध्यक्ष पूर्ण शिक्षित एवं प्रशिक्षित होते हैं। अतः यह कार्य पुस्तकालय के कर्मचारियों द्वारा सम्पन्न किया जाता है मुद्रण कला के अविष्कार के परिणाम स्वरूप पुस्तक चयन का कार्य अत्यन्त ही महत्वपूर्ण हो गया है क्योंकि पुस्तकालय को अपनी वित्तीय सीमा के अन्तर्गत ही पाठकों को उनकी वांछित पाठ्य सामग्री उपलब्ध करानी होती है। जबकि साहित्य का प्रकाशन पुस्तकों के चयन में विभिन्न प्रकार के उपकरणों का प्रयोग आवश्यक हो गया है।

## 7.1.1 पुस्तक चयन उपकरणों का अध्ययन

पुस्तक चयन पुस्तक-चयन के उपकरणों के माध्यम एवं सहायता से सम्पन्न किया जाता है। अतः पुस्तकालय में पुस्तक चयन के समस्त उपकरण उपलब्ध होने चाहिये तथा उनका अध्ययन चयनकर्ता को करना चाहिए एवं विभिन्न उपकरणों से नवीन पुस्तकों की जानकारी एकत्रित करनी चाहिए। इन उपकरणों में से उपयोगी पुस्तकों का चयन करना चाहिए तथा नवीन पुस्तकों के अतिरिक्त अनेक उपयोगी प्राचीन पुस्तकें भी, जों पुस्तकालय में उपलबध नहीं हैं, उन सभी के सम्बन्ध में सूचना एकत्रित करनी चाहिए। अन्य स्रोत से भी पुस्तक चयन में सुझाव इत्यादि प्राप्त कर लेना चाहिए। इस प्रकार उपकरणों का अध्ययन करने के पश्चात पाठकों की आवश्यकता व अभिरूचि के अनुसार उपयुक्त पुस्तकों का चयन किया जाना। छोट-छोटे पुस्तकालयों में साधारणतया पुस्तक चयन का कार्य वर्ष में केवल एक बार तथा बड़े पुस्तकालयों में दो अथवा अधिक बार किया जाता है।

## 7.1.2 चयनित पुस्तकों की तालिका बनाना (List of the selected books)

पुस्तक उपकरणों की सहायता से पुस्तकों का चयन करने के पश्चात् पुस्तकों को कार्डों के रुप में एकीकृत कर लिया जाता है प्रत्येक पुस्तक के लिए एक कार्ड बना दिया जाता है या पुस्तकों की तालिका बना ली जाती है। जिसमें सम्पूर्ण पुस्तकों का विवरण एक ही तालिका में रख लिया जाता है और तालिका विशेषज्ञ को पुनः अवलोकन के लिए दिखाई जाती है जिसमें उनसे सम्बन्धित पुस्तक के बारे में जानकारी प्राप्त की जाती है। तथा तालिका में कोई ऐसी पुस्तक है जो उनको उचित नहीं लगती तो वे परामर्श ले सकते हैं तथा पुस्तकालयाध्यक्ष का उत्तरदायित्व है कि पुस्तकों की विशेषता तथा उनकी उपयोगिता को विषय विशेषज्ञ को प्रस्तुत करके उसको संतुष्ट करें और उसके पश्चात् उस तालिका को उनके अनुमोदन के लिए आगे की कार्यवाही के लिए भेजा जाता है।


HMDC-019

## 7.1.3 चयनित पुस्तक तालिका का अनुमोदन (Approval of the list) :

जब पुस्तकों की तालिका बन जाती है तो उस तालिका को पुस्तकालय चयन समिति के पास अनुमति के लिए पुस्तकालय द्वारा भेजा जाता है। पुस्तकालय समिति की बैठक प्रायः महीने में एक बार होती है पुस्तकालयाध्यक्ष जब तालिका को अनुमोदन के लिए समिति को देता है तो उस समय कोष (Fund) की उपलब्धता के बारे में भी समिति को अवगत कराता है और पुस्तकालय समिति द्वारा उसकी अनुमति की औपचारिकता उसके द्वारा पूरी की जाती है। जब पुस्तकालय समिति पुस्तक चयन तालिका की स्वीकृति प्रदान करती है उसके पश्चात् पुस्तकालयाध्यक्ष उस पर अपना अन्तिम निर्णय देता है तदुपरान्त क्रयादेश (Order) की तैयारी शुरू हो जाती है।

## 7.1.4 पुस्तक क्रयादेश की तैयारी (Preparation for book order) :

एक बार जब पुस्तक ख़रीदने के लिए चयन कर ली जाती है और उस पूर्ण तालिका पर पुस्तकालय समिति के अनुमोदन के बाद चयनित पुस्तकों को प्राप्ति के लिए उनका आदेश पत्र तैयार किया जाता है यह सारा कार्य जो पुस्तकों के क्रय से सम्बन्धित है, पुस्तक आदेश (Book Ordering) कहलाता है। पुस्तक आदेश पुस्तकालय की एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है इसके इसके लिए पुस्तकालय संगठन, कर्मचारी, वित्त आदि के रिकार्ड की भली-भाँति व्यवस्था की जानी चाहिए। पुस्तक आदेश भेजने से पूर्व पुस्तकों का पुनः निरीक्षण तथा जाँच करना आवश्यक होता है। यह कार्य इसलिए किया जाता है कि किसी भी कारणवश ऐसी पुस्तकें तालिका में हैं जो पहले से ही पुस्तकालय में हैं तो उसको तालिका में से निरस्त कर दिया जाय। उसके बाद जिस भी प्रकाशक तथा विक्रेता से पुस्तक मँगानी है उसके लिए क्रयादेश भेजने की तैयारी की जाती है।

## 7.1.5 क्रयादेश प्रक्रिया (Process of Ordering) :

पुस्तक चयन को एक बार फिर अन्तिम रूप देने के पश्चात पुस्तकालय द्वारा पुस्तक प्राप्ति (Acquire) के लिए कार्यवाही की जाती है। इस कार्य के लिए पुस्तकालयों में क्रय द्वारा अधिग्रहण की अनेक विधियों का अनुसरण किया जाता है। ये विधियाँ निम्नलिखित है।

1. निविदा विधि (Tender Method)
2. निवेदित मूल्य विधि (Quotation method)
3. प्रकाशकों को प्रत्यक्ष आदेश (Direct ordering with publishers)
4. स्थायी आपूर्तिकर्ता विधि (Standing vender method)


HMDC-019

5. पुस्तकालय विक्रेता योजना (DLP: Dealer Library Plan)

6. स्थायी आदेश (Standing Order)

7. अनुमोदन के लिए पुस्तक (Book-on-approval)

8. मुक्त कार्य (Open purchase)

### 1. निविदा विधि ( Tender method )

इस विधि में चयनित पुस्तकों की तालिका को अनेक प्रकाशकों तथा विक्रेताओं के पास भेजा जाता है कि वह प्रत्येक पुस्तक के कम से कम मूल्य को निवेदित (Quote) करें। इस प्रकार कम से कम मूल्य निवेदित करने वाले विक्रेता को पुस्तक भेजने के लिए आदेश दे दिया जाता है। लेकिन इस कार्य को करने में काफी मात्रा में कागजी कार्यवाही और समय की हानि होती है। इस कार्य को करने में काफी समय लगता है। जिसका वजह से पुस्तकालय की बची हुई राशि समय पर उपयोग नहीं होने के कारण रद्द हो जाती है। इसके अलावा विक्रेता के पास वांछित पुस्तकें सदैव उपलब्ध नहीं होती हैं। जिसकी वजह से उनकी समय पर पूर्ति नहीं कर सकता है।

### 2. निवेदिता मूल्य विधि ( Quotation method )

यह विधि भी लगभग निविदा विधि की तरह ही है इसमें भी प्रकाशकों तथा विक्रेताओं से न्यूनतम निवेदित, मूल्य, भारतीय एवं विदेशी पुस्तकों (Indian and foreign Books) पर व्यापारिक छूट यदि कोई हो, तो तथा विदेशी राशि की रूपांतरण राशि (Conversion Ratesx for Foreign Currencies) के साथ अपनी दरें प्रस्तुत करें। प्रत्येक वर्ष के प्रारम्भ से ही इस कार्य की पुनरावृत्ति की जाती है। सभी निविदाओं की तुलना की जाती है तथा तुलना करने के बाद सबसे कम मूल्य वाले विक्रेता का चयन करके अनुमोदन के लिए प्राधिकारी के पास भेजा जाता है।

### 4. प्रकाशकों का प्रत्यक्ष आदेश ( Direct ordering with publishers )

स्थानीय पुस्तक विक्रेता (Local book sellers) की अकुशलता के कारण अधिकतर पुस्तकालय सीधे प्रकाशकों अथवा उनके प्रतिनिधियों को आदेश देना उचित समझते हैं। हालांकि इस प्रक्रिया में काफी पेपर कार्य करना पड़ता है जैसे बैंक ड्राफ्ट प्राप्त करना, उसे प्रकाशक को भेजना, पुस्तक प्राप्त न होने की दशा में प्रकाशक को पत्र व्यवहार करना आदि। लेकिन यह प्रक्रिया लगातार शुरू हो जाती है तो यह कार्य आसामी से हो जाता है। केवल आदेश करने में आयात लाइसेंस (Important Licence) और विदेशी विनिमय (Foreign Exchange) नियमों से सम्बन्धित ही समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। इसलिए इस प्रक्रिया में स्थानीय पुस्तक विक्रेता


HMDC-019

की अपेक्षा प्रकाशकों को प्रत्यक्ष आदेश देना ही लाभकारी होता है।

**5. पुस्तकालय विक्रेता योजना ( DLP : Dealer Library Plan ) :**

इस योजना के अन्तर्गत पुस्तकालयों और प्रकाशकों के समूहों के बीच एक अनुबंध (Agreement) होता है। जिसके अन्तर्गत प्रकाशक द्वारा किसी विशेष विषय पर पुस्तकें प्रकाशित करता है। तो सबसे पहले वह पुस्तक में पुस्तकालय में भेजेगा। उसके बाद पुस्तकालय को पूर्ण अधिकार होगा कि पुस्तक को स्वीकृत करें या अस्वीकृत। इस विधि में ध्यान देने योग्य बात यह है कि डी॰एल॰पी॰ (DLP) के अन्तर्गत पुस्तकालयों में स्थानीय पुस्तक विक्रेताओं (Local vendor) की अपेक्षा पुस्तकें शीघ्र प्राप्त हो जाती हैं और इसके साथ-ही-साथ यह लाभ भी होता है कि प्रकाशित पुस्तकें जल्द ही चयन और अर्जन (Acquisition) के लिए पुस्तकालय को प्राप्त हो जाती है। जहाँ इस विधि का लाभ है वहाँ इसका दोष भी है कि पुस्तकालय को अपनी विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुसार पुस्तकें प्राप्त नहीं हो सकती हैं। इस समस्या का समाधान प्रकाशकों द्वारा पुस्तकालयों की रूचियों के अनुसार पुस्तकों को भेजने में सावधानी अपनाकर दूर किया जाता है।

**6. स्थायी आदेश ( Standing order ) :**

इस विधि में कुछ ऐसी निश्चित पुस्तकें होती हैं जैसे-पुस्तक माला की पुस्तकें (Series Books), बहुखण्डीय पुस्तकें (Multivolumed Books), किस्तों में प्रकाशित पुस्तकें (Instalment Books), और पूर्व भुगतान आधारित पुस्तकें (Subscription Books) होती है। जो एक साथ प्रकाशित नहीं होती बल्कि विभिन्न सालों या समय के अन्तराल के बाद ही प्रकाशित होती हैं। इसलिए पुस्तकालय इन पुस्तकों की प्राप्ति के लिए स्थायी आदेश () प्रक्रिया का सहारा लेते हैं जिसके माध्यम से पुस्तक जब भी प्रकाशित होती हैं बिना समय नष्ट किये पुस्तकें पुस्तकालय में पहुँच जाती हैं। इस प्रक्रिया (Process) में ना तो प्रकाशकों से पत्राचार की आवश्यकता होती है न ही प्रकाशन की विज्ञाप्तियों की जानकारी पर नजर रखनी होती है।

**7. अनुमोदन के लिए पुस्तक ( Book-on-approval ) :**

इस विधि के अनुसार व्यापार को बढ़ाने के उद्देश्य से प्रकाशकों तथा पुस्तक विक्रेताओं के द्वारा पुस्तकों के चयन एवं आदेश के लिए पुस्तकालयों को अनुमोदनार्थ पुस्तकें भेजने की प्रक्रिया होती है। दूसरा यह भी है कि पुस्तकालयाध्यक्ष तथा पाठक पुस्तकों की दुकानों पर जाते हैं तथा अनुमोदन के लिए पुस्तकें लाते हैं इन पुस्तकों पर चयन समिति द्वारा अध्ययन किया जाता है तथा चयन करने के बाद पुस्तकों का आदेश

पुस्तकालय द्वारा प्रदान किया जाता है। इस विधि का एक दोष यह है कि पुस्तक विक्रेता कई बार न बिकने वाली पुस्तकें भी अनुमोदन के लिए भेजते हैं।

**8. मुक्त क्रय ( Open purchase ) :**

इस विधि में जब पुस्तकालयों में एक बार आपूर्ति (Supply) की शर्तों तथा व्यापारिक छूट इत्यादि का निर्धारण करने के बाद पुस्तकों को किसी भी प्रकाशक अथवा पुस्तक विक्रेता से मुक्त क्रय (Open Purchase) के द्वारा खरीदी जाती है। यह विधि आधुनिक युग में काफी अधिक प्रचलित हो रही है। इसके अन्तर्गत चाहे दिल्ली के प्रगति मैदान का पुस्तक मेला हो या अन्य कहीं का पुस्तक मेला हो इनसे पुस्तकालयों द्वारा किये जाने वाला क्रय मुक्त क्रय विधि का अच्छा उदाहरण है।

## 7.1.6 पुस्तक क्रयादेश भेजना

पूर्णतया पुस्तक सूची बन जाने तथा उसका अनुमोदन हो जाने के पश्चात महत्वपूर्ण कार्य क्रयादेश तैयार करना तथा उसे भेजा जाता है। इसमें सर्वप्रथम मांग में आयी पुस्तकों की उपलब्धता सुनिश्चित करनी पड़ती है। यदि यह सूची पुस्तक प्रदर्शन के द्वारा उपलब्ध पुस्तकों की होती है तो यह कार्य आसान हो जाता है क्योंकि वितरक/ विक्रेता का चयन स्वतः ही हो जाता है। अन्य परिस्थितियों में एक ऐसे वितरकों का नाम चयनित होना चाहिये जो कि पुस्तकों की आपूर्ति कर सकें। इन वितरकों में से एक नाम चयन हो वितरण की विशिष्टाता के आधार पर कर लिया जाता है जिसे क्रयादेश दिया जाना होता है। तद्पश्चात क्रयादेश का निर्माण होना चाहिए। एक सामान्य ग्रन्थालय में नमूने के रूप में लिखित क्रयादेश का प्रयोग किया जा सकता है। आवश्यकता होने पर कुछ परिवर्तन भी किये जा सकते हैं।

### क्रयादेश का नमूना

पुस्तकालय का नाम

क्रमांक ------------- दिनांक ---------------

प्रिय महोदय, आपके पत्र क्रमांक ---------- दिनांक ------------- के प्रतिउत्तर में निवेदन है कि संलग्न सूची की पुस्तकों को निम्न शर्तों तथा दशाओं पर ----------- की अवधि के अन्दर पुस्तकालय को उपलब्ध करने की व्यवस्था करें।

1. बीजक (Bill) की तीन प्रतियाँ भेजी जायें।
2. यदि पुस्तकें निर्धारित अवधि तक नहीं भेजी गई तो आदेश निरस्त समझा जाये।
3. जो भी पुस्तकें भेजें उन्हें भली भाँति जांच कर भेजें। कमी पाई जाने पर वापसी

HMDC-019

का खर्चा आपका होगा।

4. विदेशी प्रकाशन का मूल्य मूल मुद्रा में ही अंकित किया जाये और बाद में भारतीय मुद्रा में अंकित किया जाये।

5. हमारा आदेश क्रमांक एवं दिनांक बीजक (Bill)पर लिखना न भूलें।

6. पुस्तकें आदेश पत्रक के अनुसार ही भेजी जानी चाहिये।

7. प्रत्येक पुस्तक की एक ही प्रति भेजें। जब तक एक से अधिक प्रतियां की संख्या अंकित न हो।

8. प्रत्येक पुस्तक का प्रकाशकीय मूल्य ही मान्य होगा।

9. प्रत्येक पुस्तक का नवीन संस्करण (Latest Edition)भेजें तथा जहाँ तक सम्भव हो पुस्तकालय संस्करण ही भेजे जाँयें।

10. पुस्तकालय में पुस्तकें भेजने में होने वाला व्यय भार आपका होगा।

11. वी.पी.पी.(VPP)द्वारा भेजी गई पुस्तकें स्वीकार नहीं की जायेंगी।

12. यदि पार्सल क्षतिग्रस्त हुआ तो उसकी जिम्मेदारी आपकी होगी।

13. प्रत्येक पुस्तक पर पुस्तकालय द्वारा स्वीकृत दर के अनुसार छूट दी जानी चाहिए।

आपका विश्वासपात्र

(पुस्तकालयाध्यक्ष)

## 7.1.7 आदेश के पश्चात पुस्तक आने पर मिलान करना

पुस्तक विक्रेता की पुस्तक, आदेश के पश्चात जब पुस्तकालय में आती है तो उनका आदेश पत्रक से मिलान किया जाता है। आपूर्ति में निम्नलिखित विसंगतियां हो सकती हैं।

### 7.1.7.1 पुस्तक सम्बन्धी त्रुटियाँ -

1. पुस्तक निदर्श प्रति (Specimen copy) है।

2. पुस्तक की आख्या, आदेशित पुस्तक की आख्या से भिन्न है।

3. आदेशित लेखक से भिन्न लेखक की पुस्तक है।

4. संस्करण पुराना है जबकि पुस्तक का नया संस्करण बिक्री हेतु उपलब्ध है।

5. पुस्तकालय संस्करण के स्थान पर पत्रावरणबद्ध संस्करण (Paper Back Edition) भेजा गया है।

6. **पुस्तक का मुद्रण दोषपूर्ण है**, कई पृष्ठ मुद्रित नहीं हैं, मुद्रण आंखों पर जोर



HMDC-019

डालता है, स्याही फैली हुई है, अध्ययन सुविधाजनक नहीं है।

7. पुस्तक में पृष्ठ पूर्ण नहीं है, जिल्द टूटी हुई है, पृष्ठ फटे हुए हैं।

8. आवश्यक सहायक सामग्री पुस्तक के साथ नहीं है।

9. पुस्तक सीड़न युक्त अथवा भीगी हुई है अथवा पूर्व में प्रयुक्त की जा चुकी है।

### 7.1.7.2 बीजक सम्बन्धी त्रुटियाँ

1. बीजक में अंकित पुस्तकों के लेखक अथवा आख्या गलत लिख दिये गये हैं।

2. पुस्तकालय का नाम गलत लिख दिया गया है।

3. अनेक पुस्तकों के मूल्य प्रकाशित मूल्यों से अधिक अंकित किए गये हैं तथा इस सम्बन्ध में कोई पुष्टि पत्र भी बीजक के साथ संलग्न नहीं किया गया है।

4. पुस्तकालय संस्करण के स्थान पर पत्रावरणबद्ध संस्करण भेजा गया है और मूल्य पुस्तकालय संस्करण का चार्ज किया गया है।

5. बीजक में मूल्यों का योग गलत है, विदेशी मुद्रा की रूपान्तरित दर मान्य दर नहीं है, छूट की दर पुस्तकालय द्वारा स्वीकृत दर नहीं है।

### 7.1.7.3 अन्य प्रकार की त्रुटियाँ

1. आदेश में उल्लेखित पुस्तकों में से क्रम संख्या की पुस्तकें नहीं भेजी गयी हैं।

2. बीजक में अंकित पुस्तकों के लेखक अथवा आख्या गलत लिख दिए गये हैं।

3. अनेक पुस्तकों के मूल्य प्रकाशित मूल्यों से अधिक अंकित किए गये हैं तथा इस सम्बन्ध में कोई पुष्टि पत्र भी बीजक के साथ संलग्न नहीं किया गया है। इत्यादि

### 7.1.7.4 पुस्तक का भौतिक परीक्षण (Physical Checking of Books)

आदेश-पत्रक तथा बिल के परीक्षण के समय ही पुस्तक की भौतिक पूर्णता का भी ध्यान रखना चाहिए, जैसे - कभी कभी पुस्तक मार्ग में विकृत हो जाती है अथवा जिल्दसाज की असावधानी से पुस्तक का कोई भाग लगने से रह जाता है अथवा दो बार लग जाता है। इस प्रकार की एवं अन्य किसी कारण से अपूर्ण रह गई पुस्तक को विक्रेता को वापिस भेज देना चाहिये तथा उसके स्थान पर पुस्तक की नई प्रति मँगानी चाहिये। यदि ऐसा नहीं कर सकें तो उसे प्रत्यय पत्र (Credit Note) भेजना चाहिए, जिससे पुस्तकालय बिल का भुगतान करने से पूर्व उन पुस्तकों का मूल्य काट सके।

## 7.2 पुस्तक परिग्रहण

पुस्तकों का बिल तथा क्रयादेश से मिलान करने के पश्चात उनका परिग्रहण किया जाता है। खरीदी गयी प्रत्येक नई पुस्तक को क्रम से दर्ज कर उसे क्रम संख्या प्रदान



HMDC-019

करते हैं जिसे हम परिग्रहण संख्या कहते हैं। परिग्रहण रजिस्टर में सामान्यतः परिग्रहण संख्या, लेखक, आख्या, संस्करण, स्थान एवं पता, प्रकाशन तिथि, खण्ड संख्या, मूल्य, विक्रेता का नाम एवं पता, जिल्द, आकार, बाउचर संख्या एवं दिनांक, क्रमांक (Call Number), परिग्रहण की तारीख एवं प्रत्याहरण की तिथि दी जाती है।

भौतिक परीक्षण के उपरान्त पुस्तकों को बिल के अनुसार व्यवस्थित कर परिग्रहण रजिस्टर में एक एक कर दर्ज किया जाता है तथा प्रत्येक को परिग्रहण संख्या प्रदान की जाती है। इस परिग्रहण संख्या को पुस्तक के मुख्य पृष्ठ के पीछे के भाग में तथा पुस्तक के अन्दर पुस्तकालय द्वारा निर्धारित गुप्त पृष्ठ पर अंकित किया जाता है, जिससे यह ज्ञात हो सके कि यह पुस्तक अमुक पुस्तकालय की है। परिग्रहण संख्या को बिल में पुस्तक के नाम के सामने बायीं ओर अंकित किया जाता है। बिल पर परिग्रहण संख्या प्रमाणित करती है कि पुस्तकों को परिग्रहण रजिस्टर में अंकित कर लिया गया है। इसके पश्चात बिल को भुगतान के लिए स्वीकृत कर दिया जाता है। परिग्रहण रजिस्टर पुस्तकालय का एक अधिकृत अभिलेख (Record) माना जाता है। इस रजिस्टर में निम्न कालम बने होते हैं- सबसे पहला कालम परिग्रहण संख्या (Accession Number) का ही होता है। जो पहले ही क्रम में छपे हुए होते हैं। अन्य कालमों में लेखक, पुस्तक का शीर्षक, संस्करण, प्रकाशक, आकार, पृष्ठ संख्या, मूल्य, माध्यम, वर्गांक, पुस्तकांक, विषय इत्यादि आते हैं। बिल में जिस क्रम में पुस्तक लिखी होती है उसी क्रम में उन पुस्तकों का विवरण परिग्रहण रजिस्टर में चढ़ाया जाता है तथा जिस परिग्रहण संख्या पर वह पुस्तक प्रविष्ट की जाती है, वह उस पुस्तक की स्थायी परिग्रहण संख्या बन जाती है। इस परिग्रहण संख्या को तत्सम्बन्धित पुस्तक तथा उससे सम्बन्धित बिल पर डाल दिया जाता है। परिग्रहण संख्या प्रदान करने के लिए इस प्रकार की सम्पूर्ण प्रक्रिया चलती रहती है। इसके बाद पुस्तकों को बिल के साथ तकनीकी विभाग में प्रस्तुतीकरण कार्य सम्पन्न करने के लिए भेज दिया जाता है। परिग्रहण रजिस्टर में निम्न कालम होते हैं -

## 7.2.2 परिग्रहण पंजिका की आवश्यकता एवं महत्व

1. **प्रमाणित एवं स्थायी लेखा** - यह पुस्तकालय में सुलभ पाठ्य सामग्री का प्रामाणिक एवं स्थायी लेखा है। लेखा परीक्षण (Audit) करते समय इसी को अधिकृत अभिलेख माना जाता है।

2. **पुस्तकालय सम्पत्ति घोषित करने के लिए** - परिग्रहण पंजिका में परिग्रहण संख्या प्रदान कर तथा उस संख्या के सामने पुस्तक का समस्त वर्णन लिखा जाता है।

संख्या अंकित कर पुस्तक को विधिवत रूप से पुस्तकालय की सम्पत्ति घोषित किया जाता है। अतः पुस्तक को विधिवत रूप से पुस्तकालय की सम्पत्ति घोषित करने के लिए इसकी आवश्यकता होती है।

**परिग्रहण मोहर का नमूना**

पुस्तकालय का नाम ----------------------

परिग्रहण संख्या -------------------------

प्राप्त तिथि ------------------------------

वितरक ---------------------------------

मूल्य -----------------------------------

परिग्रहणकर्ता के हस्ताक्षर

3. **पुस्तक विशेष का तिथिक्रम निश्चित करना** - पुस्तकालय में संग्रहित पुस्तकों के मध्य किसी विशिष्ट पुस्तक के तैथिक क्रम (Chronological Order) को निशिचत करने के लिए इसकी आवश्यकता होती है।

4. **पुस्तकालय संग्रह की वृद्धि की जानकारी** - पुस्तकालय में किस वर्ष या किसी अमुक तिथि तक कितनी पुस्तकें थी अथवा किसी विशेष वर्ष तथा विशिष्ट तिथि को कितनी पुस्तकें पुस्तकालय में खरीदी गयी अथवा उपहार स्वरूप प्राप्त हुई, की तैथिक क्रम में जानकारी इसके द्वारा प्रदान की जाती है। अतः पुस्तकालय में संग्रहीत पाठ्य सामग्री की वृद्धि के जानकारी के लिए इसकी जरूरत पड़ती है।

5. **पुस्तक के पुस्तकालय में उपलब्ध न होने पर पुस्तक के पूर्ण विवरण की जानकारी** - यही एक अभिलेख है जिसके माध्यम से पुस्तक के सम्पूर्ण वाङमयी (Bibliographical) विवरण की जानकारी प्राप्त हो सकती है। पुस्तक के पुस्तकालय में अनुपलब्ध होने की दशा में पुस्तक के पूर्ण वाङमयी वर्णन की जानकारी प्राप्त करने के लिए इसकी आवश्यकता पड़ती है।

6. **पुस्तक प्राप्ति से निष्कासन तक के विवरणार्थ** - परिग्रहण पंजिका ही एक ऐसा अभिलेख है, जिससे पुस्तक की प्राप्ति से उसके निष्कासन तक की जानकारी प्राप्त होती है तथा इस पंजिका द्वारा ही पुस्तक के सम्बन्ध में ज्यादा जानकारी प्राप्त होती है।

7. **भण्डार सत्यापन के लिए** - निधान सूची (Shelf list) के उपलब्ध न होने पर



HMDC-019

## पणिग्रहण पंजिका का नमूना

| 02 | 03 | 04 | 05 | 06 | 07 | 08 | 09 | 10 | 11 | 12 | 13 | | 14 | | 15 |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| Accession NO. | Subject | Author | Name of Book | Edition | Place / Pub. | Year | Pages | Vol. | Source | Bill No. and Date | Cost | | Call No. | | Withdrawl Date |
| | | | | | | | | | | | Rs. | P | Class No. | Book No. | |
| | | | | | | | | | | | | | | | |



NMDC-019

भण्डार सत्यापन के लिए परिग्रहण पंजिका की जरूरत पड़ती है।

## 7.4 तकनीकी प्रक्रियाकरण

तकनीकी प्रक्रियाकरण का कार्य पुस्तकालय के तकनीकि अनुभाग में किया जाता है जो पुस्तकालय के अन्य अनुभागों की तरह ही तकनीकी अनुभाग भी बहुत महत्वपूर्ण है इस अनुभाग को प्रस्तुतीकरण अनुभाग (Processing Section) बनाया जाता है क्योंकि यही वह अनुभाग है जहाँ पर पुस्तकालय की पाठ्य सामग्री को सेवा योग्य (Serviceable) बनाया जांता है पुस्तकालय में पुस्तकों का परिग्रहण (Accessioning) हो जाने के बाद पुस्तकों को तकनीकी अनुभाग (Technical Section) में भेज दिया जाता है। जिसमें पुस्तक से सम्बन्धित सभी तकनीकी कार्य सम्पन्न किये जाते हैं जिसके अन्तर्गत वर्गीकरण (Classification) तथा सूचीकरण (Cataloging) कार्य तथा इसके अतिरिक्त पुस्तक की साज सज्जा से सम्बन्धित पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करने से पूर्व अन्य प्रक्रिया भी की जाती है जैसे लेबिल लगाना, प्राधिकरण स्लिप, दिनांक स्लिप, पुस्तक कार्ड, पॉकेट आदि कार्य इसी अनुभाग के अन्तर्गत किये जाते हैं, इसलिए इस अनुभाग को प्रस्तुतीकरण अनुभाग (Processing Section) भी कहते हैं।

इस अनुभाग के बिना पुस्तकालय उस अंधेरे कमरे जैसा होता है जिसमें पाठकों को अपनी पुस्तक ढूँढना एक अत्यन्त कष्टकारी कार्य होता है। इसलिए यह अनुभाग पाठकों के लिए अंधेरे पुस्तकालय में रोशनी जैसा होता है। इस अनुभाग का मुख्य कार्य पाठ्य सामग्री को तकनीकी प्रक्रिया से गुजार कर निधानियों (Shelving) तक पहुँचाना है ताकि पाठक अपनी पसन्द की पाठ्य सामग्री आसामी से प्राप्त कर सकें। यह अनुभाग छोटे पुस्तकालयों में अर्जन अनुभाग (Acquisition Section) के साथ ही होता है लेकिन बड़े पुस्तकालयों में यह अनुभाग अलग होता है।

### 7.4.1 वर्गीकरण प्रक्रिया (Classification Process)

परिग्रहण संख्या (Accession Number) देने के बाद का कार्य वर्गीकरण है जो पुस्तक को उसकी विशेषता के आधार पर विशेष विषय के अन्तर्गत रखता है। इसमें एक कर्मचारी की आवश्यकता होती है जो पुस्तक को वर्गीकृत करता है उसे वर्गीकरण (Clasification) कहते हैं। वर्गीकरण का कार्य काफी महत्वपूर्ण है इसलिए इस कार्य को करते समय काफी महत्वपूर्ण है इसलिए इस कार्य को करते समय काफी सावधानी रखनी



HMDC-019

चाहिए तथा उससे सम्बन्धित विषयों का निर्धारण करने के लिए पुस्तक के निम्न भाग की जानकारी अवश्य लेनी चाहिए जिससे पुस्तक को उचित वर्ग प्रदान किया जा सके ये निम्न भाग है जिसकी सहायता से पुस्तक के वर्ग का आसानी के पता चल सकता है।

1. शीर्षक (Title) उपशीर्षक (Subtitle)

2. प्रस्तावना (Preface)

3. विषय सूची की तालिका (Table of Contents)

4. पुस्तक की जैकेट (Book Jackets flaps)

5. पुस्तक की समीक्षा (Book review)

**( 1 ) वर्गांक का निर्धारण ( Assigning Class Number )** जब पुस्तक के बारे में ज्ञात हो जाता है कि यह पुस्तक उस विशेष विषय की है तब उस पुस्तक को उस वर्गीकरण पद्धति के अनुसार उसके वर्गांक का निर्धारण किया जाता है तथा उसको मुख्य पृष्ठ के पिछले पृष्ठ पर पेन्सिल द्वारा लिख दिया जाता है। पेन्सिल से लिखा जाता है कि अगर कोई गलती है या भविष्य में वर्गांक परिवर्तन की सम्भावना है तो आसानी से परिवर्तन किया जा सके।

वर्गांक बनाने हेतु मुख्यतया प्रयोग में आने वाली वर्गीकरण योजनायें निम्नलिखित हैं-

(1) Dewey Decimal Classification, by Melvil Dewey

(2) Universal Decimal Classification.

(3) Library of Congress Classification.

(4) Subject Classification by J.D. Brown.

(5) Expension Classification, by C.A. Cutter.

(6) Bibliography Classification by H.E. Bliss.

(7) Colon Classification by Dr. S. R. Ranganathan.

(8) Rider's International Classification, by Fermant Rider.

### 7.4.2 ग्रंथांक का निर्धारण (Alloting Book Number)



HMDC-019

पुस्तक को वर्गांक निर्धारित करने के पश्चात् उसको ग्रन्थांक (Book Num-

ber) का निर्धारण किया जाता है। इसके लिए भी विभिन्न विद्वानों की ग्रन्थांक सारणियाँ (Book Number Tables) उपलब्ध हैं जिनकी सहायता से पुस्तक के लिए उसका ग्रन्थांक निर्धारण आसानी से किया जा सकता है। ये सारणियां (Tables) निम्नलिखित हैं।

1. कटर्स ऑथर टेबल्स (Cutter's Author Table)
2. कटर ऑथर टेबल्स (Cutter-Sanborne Author Table)
3. मेरिल्स ऑथर टेबल्स (Merrill's Author Table)
4. ऑथर टेबल्स ऑफ एल. स्टेनले जस्ट (Author Tables of L. Stanley Jast)
5. बिस्कोइ टाइम टेबल्स (Biscoe Time Tables)
6. (Ranganthan's book Number System)

ग्रन्थांक बनाने हेतु उपरोक्त में से कोई एक प्रणाली प्रयुक्त की जा सकती है। यह पुस्तकालय पर निर्भर करता है कि कौन सी प्रणाली प्रयोग में लायी जाय।

### 7.4.3 संग्रह संख्या का निर्धारण

ग्रन्थांक संख्या के निर्धारण के बाद पुस्तकों को उनकी संग्रह संख्या की जाती है जो यह बताती है कि किस संग्रह विशेष में पुस्तक रखी जायेगी। जैसे -RR का प्रयोग संदर्भ ग्रन्थों हेतु किया जाता हैं तो यदि किसी पुस्तक के आहवाहन संख्या में सेइसे देखकर यह निर्धारित किया जा सकता है कि संदर्भ हेतु है।

### 7.4.4 सूचीकरण (Cataloguing)

वर्गीकरण करने के पश्चात् पुस्तकों का सूचीकरण किया जाता है जिससे उनका प्रयोग बढाया जा सके। जहाँ एक ओर वर्गीकरण भण्डार-गृह की आलमारियों में ग्रन्थों की व्यवस्था को सुविधाजनक बनाता है तो वहीं दूसरी ओर सूचीकरण किसी ग्रन्थ के लिए पाठकों की विभिन्न प्रकार की माँगों को संतुष्ट करता है। कोई भी पाठक एक ग्रन्थ की माँग विभिन्न आधारों पर कर सकता है। सूची ग्रन्थ प्राप्त करने में पाठक की सहायता करती है। ग्रन्थालय में सूची का विशेष महत्व होता है अतः प्रत्येक ग्रन्थ का सूचीकरण करना आवश्यक होता है।

ग्रन्थों का सूचीकरण करने की भी अनेक पद्धतियाँ हैं। ग्रन्थालय की आवश्यकता एवं उपयोगिता के अनुसार ही किसी भी सूचीकरण पद्धति को अपनाया जा सकता है। उनमें से निम्न अत्यन्त प्रसिद्ध है—अमेरिकन लाइब्रेरियन एसोसियेशन कोड (ALA code), क्लासीफाइड केटलॉग कोड (CCC) तथा ए ए सी आर —प्रथम एवं द्वितीय कोड (AACR-I and AACR-II) इनमें से किसी एक पद्धति को ग्रन्थालयों में सूचीकरण करने के लिए अपनाया जाता है।

सूचीकरण में परिशुद्धता, एकरूपता तथा सामंजस्यता आवश्यक तत्व हैं, अतः ग्रन्थों का सूचीकरण करने के लिए उपरोक्त सूची संहिताओं में से, किसी एक को आधार बनाना आवश्यक है। साधारणतया सार्वजनिक ग्रन्थालयों में अनुवर्णिक सूची (Dictionary Cataogue) तथा शैक्षणिक एवम् शोध ग्रन्थालयों में अनुवर्ग सूची (Classification Catalogue) निर्मित करने की अनुशंसा की जाती है। सूची के बाह्य-स्वरूपों में पत्रक स्वरूप को अपनाने पर अधिक बल दिया जाता है।

आज कल यह कार्य अधिकतर कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर ही कर लेता है परन्तु मानवीय प्रयत्नों द्वारा यह कार्य पुस्तकालय के सूचीकरण विभाग का ही है।

### 7.4.3 अन्यः प्रक्रियाकरण कार्य (Other Processing Work)

ग्रन्थों का परिग्रहण वर्गीकरण एवं सूचीकरण करने के पश्चात् ग्रन्थों को गति प्रदान करने के लिए उनमें अन्य कार्य भी सम्पन्न करने पड़ते हैं जिनसे ग्रन्थों को विन्यसित करने, उनके खोजने तथा आदान-प्रदान कार्य में सहायता प्राप्त होती हैं।

**7.4.3.1 लेबिल लगाना ( Lebelling )** – प्रत्येक ग्रन्थ पर कुछ पर्णी (Slips) तथा लेबिल (Lebel) लगाये जाते हैं जैसे-प्राधिकरण स्लिप (Authority Slip) दिनांक स्लिप (Date Slip) ग्रन्थ कार्ड (Book Card) पाकेट (Pocket) ग्रन्थालय के नाम की सील, स्पाइन (Spine) आदि चिपकाये एवं लगाये जाते हैं।

**( 1 ) प्राधिकरण स्लिप ( Authority Slip )** -यह एक स्लिप होती है चित्र नं0 1 के अनुसार कालम बने होते हैं। इस स्लिप को प्राधिकरण स्लिप (Authoruty Slip) कहते हैं। क्योंकि इस स्लिप में उस ग्रन्थालय का विवरण होता है। जिस ग्रन्थालय की वह पुस्तक होती है तथा ग्रन्थालय का मोनोग्राम (Monogram) भी इसमें छपा होता है, जो पुस्तकालय की प्रामाणिकता सिद्ध करता है। उसके नीचे पुस्तक

की परिग्रहण संख्या वर्गांक, ग्रन्थांक, खण्ड संख्या तथा प्रति संख्या आदि के भी कालम बने होते हैं। जिनमें उपरोक्त कालम पुस्तक के उपरोक्त विवरण के क्रमानुसार लिखे होते हैं। यह स्लिप पुस्तक के कवर पृष्ठ के पीछे के पृष्ठ पर चिपकाई जाती है।

**प्रमामिकता स्लिप (Authority Slip)**

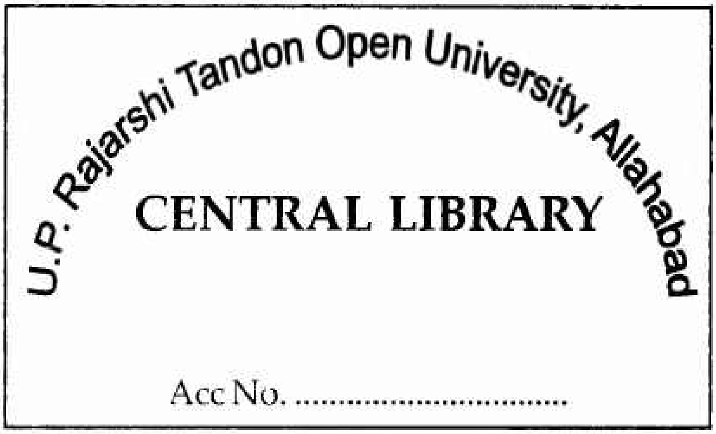


**( 2 ) दिनांक स्लिप ( Date Slip )** - यह भी एक स्लिप होती है जो पुस्तक के अन्तिम पृष्ठ पर चिपकाई जाती है जिसमें कुछ कालम बने होते हैं। सबसे ऊपर ग्रन्थालय का नाम लिखा होता है। उसके बाद दे दिनांक एवं हस्ताक्षर के कालम बने होते हें। जिस दिनांक को पुस्तक प्रदान (Issue) की जाती है उसे पुस्तक का देय दिनांक कहते हैं। पुस्तक प्रदान करते समय कर्मचारी उस दिन का दिनांक डालता है तथा हस्ताक्षर वाले कालम में अपने हस्ताक्षर करता है और जब पुस्तक लौटकर आती है पुस्तकालय कर्मचारी पुस्तक के पीछे पड़े हुए दिनांक को देखकर पुस्तक को लौटाने का कार्य प्रारम्भ करता है।

**देय दिनांक पर्ची ( Due Date Slip )**

CENTRAL LIBRARY

U.P. Rajarshi Tandon Open University, Allahabad

Author

Title

Acc. No. Call No.

This book should be returned on or before the date last stamped below otherwise 1 Rs. Fine per day.

| | |
|---|---|
| | |
| | |
| | |

**( 3 ) बुक पॉकेट चिपकाना ( Book Pocket Fixing )** - बुक पॉकेट पुस्तक के पिछले कवर पेज के अन्दर की तरफ नीचे के कोने पर दांयी तरफ चिपकाया

HMDC-019

जाता है। चिपकाने से पहले इसको ढीला कर लेना चाहिए ताकि पुस्तक पत्रक (Book Card) बिना किसी रुकावट के बुक पॉकेट के अन्दर चला जाय। इसके बाहरी तरफ पुस्तकालय का नाम, और उसके नियम सूक्ष्म में मुद्रित होते हैं।

**पुस्तक पॉकेट ( Book Pocket )**

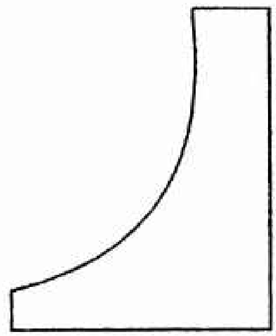

**( 4 ) पुस्तक पत्रक ( Book Card )** - प्रत्येक पुस्तक के लिए एक पुस्तक पत्रक होता है जिसका आकार 5×3'' इंच का होता है यह मुद्रित (Printed) होता है जिसमें पुस्तक की क्रमांक संख्या, परिसंचरण संख्या, लेखक तथा उसका शीर्षक व उससे सम्बन्धित नियम दिये होते हैं तथा इसके निचले भाग में देय तिथि तथा सदस्य संख्या आदि अंकित होती है जो पुस्तक के आदान प्रदान के समय में काम आती है।

आधुनिक समय में पत्रक का आकार आधुनिक आदान प्रदान प्रणाली के अनुसार छोटा कर दिया गया है। इसमें केवल क्रमक, संख्या, परिसंचरण संख्या, लेखक, व शीर्षक ही मुद्रित होते हैं इसमें पुस्तक आदान प्रदान करते समय पुस्तक पत्रक पर कुछ भी लिखने की आवश्यकता नहीं होती है।

Acc. No.......................... Call No..................

CENTRAL LIBRARY

U.P. Rajarshi Tandon Open University, Allahabad

Title

Author

**( 5 ) स्पाइन ( Spine )** - स्पाइन कागज की बनी हुयी एक गोल स्लिप होती है जो पुस्तक के जिल्दबन्दी वाले भाग पर नीचे की ओर चिपकाई जाती है। यह पुस्तक का वह भाग होता है जो आलमारियों में क्रमानुसार व्यवस्थित पुस्तकों में सामने

से पाठक को दिखाई देता है। पुस्तक का क्रामक अंक (वर्गांक एवं ग्रन्थांक) इस पर लिखे जाते हैं। स्पाइन चिपंकाकर उस पर पुस्तक का क्रामक अंक लिखने का उद्देश्य यह होता है कि पुस्तक को निकालकर देखने की अपेक्षा स्पाइन पर लिखे क्रामक अंक से ही पहचान लिया जाता है। अन्यथा पुस्तक को निकालकर देखना पड़ता है।

**7.4.3.2 गुप्त पृष्ठ ( Secret Page ) -** प्रत्येक ग्रन्थालय पुस्तकों के सम्बन्ध में अपना एक गुप्त पृष्ठ नियत किये हुए रहते हैं जिस पर न दिखाई देने वाले स्थान सीमन (सिलाई) के पास ही पुस्तक की परिग्रहण संख्या लिखी जाती है। यह-परिग्रहण संख्या इस ढंग से लिखी जाती है जो सामान्य पाठक उसे देख न सके। पुस्तक के गुम हो जाने तथा उसके पुनः प्राप्त होने पर उस गुप्त पृष्ठ पर लिखी हुई परिग्रहण संख्या से ही पुस्तक का ज्ञान होता है कि यह पुस्तक इस ग्रन्थालय की है अथवा नहीं।

**7.4.3.3 सूची पत्रकों का निर्माण ( Catalogue Cards ) -** सूचीकरण करने के लिए सूचीकार द्वारा ग्रन्थ की मुख्य प्रविष्टि निर्मित कर दी जाती है तथा उसी के आधार पर अन्य इतर प्रविष्टियों का निर्माण किया जाता है। विदेशों में ऐसी संस्थाएँ हैं जो पुस्तकों के प्रकाशन के साथ ही उनके सूची पत्रक भी मुद्रित करा देती हैं जिससे ग्रन्थालयों का कार्य कम हो जाता है तथा सूची पत्रकों को एकरूपता भी आ जाती है। लेकिन भारत मे ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है।

सूची कार्य किसी मान्य सूची संहिता के अनुसार ही किया जाता है चूंकि एक पुस्तक के अनेक सूची पत्रक तैयार किये जाते हैं अतः ग्रन्थालय अपनी आवश्कता को दृष्टिगत रखते हुए पत्रकों की संख्या में कमी कर सकते हैं। सूची पत्रकों के निर्माण में स्वच्छता एवं शुद्धता पर विशेष ध्यान रखना चाहिए।

**7.4.3.4 क्रमांक कार्य ( Numbering ) -** अन्य कार्यों की अपेक्षा यह सरल कार्य होता है। छोटे-छोटे ग्रन्थालयों में जो व्यक्ति सूचीकरण कार्य करता है वही क्रमांक आदि लिखने का कार्य भी कर लेता है। किन्तु बड़े ग्रन्थालयों में जहाँ बड़ी संख्या में ग्रन्थों का सूचीकरण कार्य होता है वहाँ इस कार्य को किसी एक लिपिक को सौंप दिया जाता है। क्रमांकन करने वाले व्यक्ति का लेखन अच्छा होना चाहिए। क्रमांकन कार्य पुनः-पुनः होने वाला कार्य है। वर्गीकरण द्वारा दिए गये क्रामक अंक को तथा परिग्रहण अंक को अधिकार पर्णी, बुक कार्ड, देय दिनांक पर्णी, आदि कई जगह लिखना पड़ता है। स्पाइन पर क्रमांक अंक स्याही में लिखा जाता है जबकि अन्य स्थानों पर पेन्सिल में लिखा जाता है। सभी सूची पत्रकों पर भी क्रमांक अंक लिखने होते हैं ये सभी पेन्सिल में लिखे जाते हैं।

**( b ) सूची पत्रकों का व्यवस्थापन ( Filling of Cataloguing Cards )**

पुस्तकालय में सूची पत्रकों का सूची केबिनेट (Catalogue Cabinate) व्यवस्थापन


HMDC-019

के लिए ए.एल.ए. के संचिकाकरण के नियमों (A.L.A. rules for filing cataogue cards) द्वारा करना चाहिए इसके द्वारा करने की मुख्यतः दो विधियाँ हैं (i) वर्ण प्रति वर्ण (Letter by Letter) (ii) शब्द प्रति शब्द (Word by Word) इस कार्य को करने के लिए कर्मचारी को सावधानी पूर्वक करना चाहिए और इसके लिए उसे समय समय पर प्रशिक्षण (Training) दिया जाना चाहिए जिससे वह सूची पत्रक को उचित स्थान पर रख सके और पाठकों को कोई परेशानी ना हो।

**( c ) पुस्तकों को निधानियों पर व्यवस्थित करना ( Shelving of the Books ) :** पुस्तकों के तकनीकी कार्य से सम्बन्धित सभी कार्य पूरा होने के बाद उनको पाठकों के उपयोग के लिए उनकों निधानियों पर व्यवस्थित किया जाता है। जिससे पाठक अपने प्रयोग की पुस्तक प्राप्त कर लेता है इस कार्य को सावधानी पूर्वक किया जाता है इसका व्यवस्थापन का कार्य सम्बन्धित श्रेणी चिन्ह (Sequence Number) द्वारा किया जाता है। जिस श्रेणी की पुस्तक बाद में आयेगी उसी अनुसार व्यवस्था भी की जाती है जिससे भविष्य में अगर उसी श्रेणी में पुस्तक आती है तो उसे बिना किसी समस्या के उसको निधानियों पर व्यवस्थित किया जा सकता है।

## 7.5 पुस्तक चयन एवं अर्जन विभाग की स्थापना

समुचित पुस्तकों को संग्रहीत एवं संकलित करना किसी भी पुस्तकालय का प्रथम कर्तव्य होता है, क्योंकि प्रत्येक पुस्तकालय का भविष्य उसके उत्तम संकलन पर ही निर्भर करता है। पुस्तकालय में उत्तम पुस्तक व्यवस्था, वर्गीकरण, सूचीकरण, आदान प्रदान विधियाँ अपनाई जाती है। किन्तु उत्तम एवं उपयोगी पुस्तकों का संकलन नहीं होने पर उपरोक्त प्रक्रियाओं का कोई महत्व नहीं रह जाता है। वे सभी निरर्थक हो जाती है। अतः यह कार्य जिसके आधार पर उत्तम पुस्तकों का चयन एवं संकलन किया जाता है, यह बहुत ही आवश्यक एवं महत्वपूर्ण कार्य है। अतः उत्तम पुस्तकों के चयन एवं क्रय हेतु पुस्तकालय में ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिए जिससे कम से कम मूल्य में अधिक से अधिक उपयोगी पुस्तकें क्रय की जा सकें। कुछ प्रमुख उद्देश्य जिनकी पूर्ति हेतु पुस्तकालय में पुस्तक चयन एवं अर्जन विभाग की स्थापना की जाती है, निम्नलिखित हैं-

1. यह विभाग अपनी संस्था की माँग और आवश्यकता को दृष्टि में रखते हुए उपयोगी पाठ्य सामग्री का चयन, क्रय एवं अर्जन करता है। उदाहरण - किसी विश्वविद्यालय पुस्तकालय को वह समस्त अध्ययन-सामग्री क्रय करनी चाहिए जो शोध छात्रों के लिए तथा उच्च शिक्षा के अध्ययनकर्ताओं के लिए उपयोगी हो।


HMDC-019

2. जिस सस्था का वह पुस्तकालय हैं उस संस्था की माँग की पूर्ति हेतु आधुनिकतम समाग्री एवं संकलन किया जाना चाहिए।

3. किसी भी पुस्तकालय में पुस्तक अर्जन विभाग निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखते हुए पुस्तक क्रय करनी चाहिए।

(अ) उन पुस्तकों का क्रय किया जाना चाहिए जो शिक्षा, सूचना, मनोरंजन आदि के क्षेत्र में उपयोगी हो सकें।

(ब) पुस्तक संकलन में वृद्धि हेतु दूरदर्शिता और योग्यता के साथ पुस्तकों का चयन एवं संकलन किया जाना चाहिए। पुस्तकों का पूर्णरूप से मूल्यांकन करने के पश्चात ही उपादेय पुस्तकों का चयन करना चाहिए।

## 7.6 पुस्तक चयन एवं अर्जन विभाग के कार्य

इस विभाग के प्रमुख कार्य निम्न प्रकार हैं -

(1) पुस्तकालय के प्रकार एवं स्तर के अनुसार पुस्तक प्राप्ति का कार्यक्रम सुनिश्चित करना।

(2) विभिन्न पाठकों, शोध छात्रों, संकायों तथा जिज्ञासुओं आदि से माँग पत्र प्राप्त करना कि उन्हें कौन कौन सी पुस्तकों एवं पत्र पत्रिकाओं की अत्यधिक आवश्यकता है।

(3) उपलब्ध धनराशि के सम्बन्ध में क्रय हेतु सही दृष्टिकोण अपनाना।

(4) विभिन्न प्रकार के पुस्तक चयन के उपकरणों के आधार पर बहुत ही कुशलता से पुस्तकों का चयन करना

(5) पुस्तकों की चयन सूची (Selection List) पर पुस्तकालय समिति के अध्यक्ष से अनुमोदन प्राप्त करना।

(6) चयनित पुस्तकों के क्रय हेतु पुस्तक विक्रेताओं अथवा प्रकाशकों को आदेश देना।

(7) पुस्तक विक्रेताओं द्वारा भेजी गयी पुस्तकों को प्राप्त करना।

(8) जो पुस्तकें प्राप्त की गयी हैं, उनका आदेश भेजने की प्रति से मिलान करना कि पुस्तक विक्रेता द्वारा वे ही पुस्तकें आपूर्तित है अथवा नहीं। कभी-कभी किसी की गलती से अथवा पुस्तक विक्रेता की चालाकी से ऐसी पुस्तकें भी आ जाती हैं जिनका क्रयादेश नहीं दिया गया था। इसलिए पुस्तकें प्राप्त करने पर उनका

क्रयादेश से मिलान अवश्य किया जाना चाहिये।

(9) प्राप्त की हुई पुस्तकों को परिग्रहण रजिस्टर (Accession Register)में उसी क्रम में प्रविष्ट करना जिस क्रम में वे क्रयादेश में प्राप्त हुई है तथा प्रत्येक पुस्तक पर उसकी तत्सम्बन्धी परिग्रहण संख्या का अंकन करना।

(10) यदि क्रयादेश भेजने के अनुसार ही पुस्तकं प्राप्त हुई हैं तथा उनमें कोई कमी नहीं है तो पुस्तकों के बिलों को लेखा विभाग में धन अदा करने के लिए भेजना।

(11) इसके बाद पुस्तकों को तकनीकी विभाग (Technical Section) में तकनीकी कार्य सम्पन्न करने के लिए भेजना।

(12) जो पुस्तकें अभी तक प्राप्त नहीं हुई हैं उन्हें प्राप्त करने के लिए स्मरण पत्र भेजना।

(13) यदि स्मरण पत्र (Reminder) के बाद भी पुस्तकें प्राप्त न हो तो पुस्तकालय समिति के अध्यक्ष से अनुमोदन लेकर क्रयादेश समाप्त कर देना।

## 7.7 पुस्तक चयन एवं अर्जन विभाग की महत्ता

पुस्तकालय का सबसे महत्वपूर्ण विभाग पुस्तक चयन एवं अर्जन विभाग होता है जहाँ पुस्तकों एवं अन्य पठनीय सामग्री का चयन एवं अर्जन किया जाता है। किसी भी पुस्तकालय की उपयोगिता पुस्तक एवं पाठ्य सामग्री के उत्तम संकलन पर ही निर्भर करती है क्योंकि पुस्तकें ही पुस्तकालय का आधार होती हैं। उपयोगी एवं सर्वोत्तम पाठ्य सामग्री संग्रहीत करना पुस्तकालय का प्रथम कर्तव्य होता है, इसके बिना किसी भी पुस्तकालय की कल्पना नहीं की जा सकती है। किसी भी पुस्तकालय की सफलता बहुत कुछ इसी विभाग पर निर्भर करती है क्योंकि पुस्तक चयन एवं अर्जन का कार्य बहुत ही आवश्यक एवं महत्पूर्ण कार्य होता है। इसलिए इस कार्य को करने वाले पुस्तक चयन एवं अर्जन विभाग का पुस्तकालयों में विशेष महत्व एवं भूमिका होती है। किसी विद्वान ने ठीक ही कहा है कि यदि उपयुक्त एवं उपयोगी पाठ्य सामग्री का चयन एवं अर्जन नहीं किया गया तो पुस्तकालय की स्थापना तथा अनुरक्षण पर किया गया सभी व्यय एवं श्रम व्यर्थ होता है। पुस्तकालय के लक्ष्यों को पूर्ण करने में इसी विभाग की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अतः यह आवश्यक है कि पुस्तकालय के अन्य विभागों के साथ इस विभाग का आन्तरिक रचनात्मक सम्बन्ध होना चाहिए तथा समुचित कर्मचारियों की व्यवस्था भी होनी चाहिए जो पुस्तकों के सम्बन्ध में उपयोगी सूचनाएं

एकत्रित करते रहें।

सही पुस्तक चयन द्वारा ही हम पाठकों में पढ़ने की रूचि पैदा कर सकते हैं। पुस्तक चयन किसी भी पुस्तकालय का महत्वपूर्ण तकनीकी कार्य है। पुस्तकालयों में वे सभी पुस्तक चयन स्रोत होने चाहिये जिनके द्वारा पुस्तकें चुनी जाती हैं । मेलवील डी.वी. ने कहा था कि पुस्तकालय का उद्देश्य कम कीमत में उत्तम से उत्तम साहित्य अधिक से अधिक लोगों को उपलब्ध करवाना (The best reading for the largest number at the least cost) है। उपर्युक्त शब्दों में कितनी सही बातें कही गयी हैं। इसमें तीन बिन्दु प्रमुख हैं। (1) उत्तम से उत्तम साहित्य, (2) कम कीमत पर, तथा (3) अधिक से अधिक लोगों को उपलब्ध करवाना ।

## 7.8 निष्कर्ष

पुस्तक क्रय में अब नई नई तकनीकों का उपयोग किया जाने लगा है, जैसे - आई.एस.बी.एन. का उपयोग। इसके द्वारा पुस्तकों के क्रय आदेश टेलीफोन, फैक्स तथा ई-मेल द्वारा अत्यन्त शीघ्रता से दिये जा सकते हैं। इन तकनीकों का उपयोग अब बढ़ने लगा है एवं आई.एस.बी.एन. का उपयोग इसे और भी त्वरित बनाने में सहायक है। पुस्तक चयन में पुस्तकालयाध्यक्ष को सावधानी रखनी चाहिए। अब पुस्तकें अधिक प्रकाशित हो रही हैं तथा उनमें से उपयोगी एवं उत्तम पुस्तकें चुनना असम्भव तो नहीं लेकिन कठिन कार्य अवश्य है, जिसके लिए विषय विशेषज्ञों तथा पुस्तकालयाध्यक्षों को मिलकर कार्य करना होगा। आपसी सहयोग की अति आवश्यकता है।

पुस्तक चयन क्रिया में पुस्तकालयाध्यक्ष का योगदान एक संयोजक के समान है। पुस्तक चयन प्रक्रिया में केवल पुस्तकालयाध्यक्ष की ही जिम्मेदारी नहीं हैं अपितु विषय विशेषज्ञों की एक कार्यपालिका प्राधिकरण भी उसमें सम्मिलित है। हालाँकि सैद्धान्तिक रूप से पुस्तक चयन की सारी जिम्मेदारी पुस्तकालयाध्यक्ष की है लेकिन व्यावहारिक रूप से ऐसा नहीं है। किन्तु पुस्तकालयाध्यक्ष की यह जिम्मेदारी बनती है कि समय-समय पर अन्य घटकों को भी सूचित करता रहे कि पाठक क्या चाहते हैं तथा कितना बजट उपलब्ध है, ताकि जो उपयुक्त पुस्तक हो उसके खरीदने हेतु उचित निर्णय लिया जा सके।

## 7.9 बोध प्रश्न

### दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. पुस्तक अर्जन प्रक्रिया पर विस्तृत लेख लिखें?


HMDC-019

2. परिग्रहण पंजिका का नमूना देते हुये उसकी उपयोगिता स्पष्ट करें?

3. आपूर्तिकर्ता द्वारा आदेशित पुस्तकों की आपूर्ति किये जाने के उपरान्त किन त्रुटियों की जाँच की जानी चाहिए?

4. तकनीकी प्रक्रियाकरण में कौन-कौन से कार्य सम्मिलित है? विस्तार पूर्वक चर्चा कीजिए।

5. पुस्तक चयन एवं अर्जन विभाग के क्या कार्य हैं।

## 7.10 सन्दर्भ एवं इतर पाठ्य सामग्री


1. Millal, R. L. Library Administration, Metropolitan, New Delhi,1978.
2. मिजा,, प्रसिद्ध कुमार एवं राकेश नैय, पुस्तकालय प्रवन्ध, रतज प्रकाशन नई दिल्ली, 2008।
3. सिंह, आर॰ के॰ एवं सेंगर सुनीता, पुस्तकालय प्रबन्ध, युनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2007।
4. शर्मा, प्रहलाद, पुस्तकालय प्रबन्ध, यूनिवर्सिटी पल्बिकेशन, नई दिल्ली, 2007
5. त्रिपाठी, एस॰ एस॰ et. al. ग्रन्थालय प्रबन्ध, वाई॰ के॰ पब्लिशर्स, आगरा.
6. सिंह, एम॰पी॰ पुस्तकालयों एवं सूचना केन्द्रों का प्रबन्ध, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2008
7. अंसारी एम॰ एम॰ पुस्तकालय संगठन एवं प्रबन्ध, कला प्रकाशन, वाराणसी 2001।
8. Library Book Selection By S. R. Ranganthan,Sarda, Ranganathan Endownment Series, Banglore, U.B.S.P.D., New Delhi.
9. The five laws of Library Science, By S.R. Ranganthan, Sarda, Ranganathan Endownment, Series, Bangalore, U.B.SD.P.D., New Delhi.
10. Library Administration, By S. R. Ranganathan, Sarda, Ranganathan Endownment Series, Bangalore, U.B.S.P.D., New Delhi.




NMDC-019

# इकाई -8 : सावधिक प्रकाशन : अर्जन, रखरखाव, नित्यकार्य

## इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 सावधिक प्रकाशन

 8.1.1 सावधिक प्रकाशनों की विशेषताएं

8.2 सावधिक प्रकाशनों का चयन

 8.2.1 चयन प्रक्रिया

8.3 सावधिक प्रकाशनों का अर्जन

 8.3.1 आदेशन प्रक्रिया

 8.3.2 सावधिक प्रकाशनों की प्राप्ति में सावधानियाँ

8.4 सावधिक प्रकाशनों का रख-रखाव एवं नित्यकार्य

 8.4.1 सावधिक प्रकाशनों के पंजीयन की विधियाँ

 8.4.2 सावधिक प्रकाशनों का प्रदर्शन तथा निधानन

 8.4.3 सावधिक प्रकाशनों का आदान प्रदान

 8.4.4 सावधिक प्रकाशनों की जिल्दबन्दी, परिग्रहण, वर्गीकरण तथा सूचीकरण

8.5 सारांश

8.6 अभ्यास हेतु प्रश्न

8.7 संदर्भ पाठ्य सामग्री

## 8.0 उद्देश्य

वर्तमान सूचना एवं संचार के युग में सावधिक प्रकाशनों का महत्वपूर्ण स्थान है। में प्राथमिक सूचना का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत है जो नित्य प्रति हो रहे शोध एवं विकास की गतिविधियों के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी उपलब्ध कराते हैं। इस इकाई के अध्ययनोपरान्त आप पुस्तकालय में सावधिक प्रकाशनों के अधिग्रहण से सम्बन्धित दैनन्दिन प्रक्रियाओं एवं कार्यों से परिचित हो सकेंगे। इस इकाई में आप—

(1) सावधिक प्रकाशनों एवं उनकी विशेषताओं से परिचित होंगे।



HMDC-019

(2) सावधिक प्रकाशनों के चयन एवं चयन प्रक्रिया से अवगत होंगे।

(3) इस तरह के प्रकाशनों के अर्जन, आदेशन एवं प्राप्ति में किस प्रकार की सावधानियाँ जाँय, के बारे में ज्ञानार्जन करेंगे।

(4) सावधिक प्रकाशनों के रखरखाव एवं नित्यकार्य सम्बन्धी प्रक्रियाओं की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

(5) सावधिक प्रकाशनों के पंजीयन करी विभिन्न विधियों से परिचित होंगे।

## 8.1 सावधिक प्रकाशन

सावधिक प्रकाशन से तात्पर्य ऐसे प्रकाशन से होता है जिसका प्रकाशन धारावाहिक रुप से होता है तथा उसका प्रत्येक अंक एक निश्चित अन्तराल से प्रकाशित होता है। कभी-कभी तथा किन्ही-किन्ही सामयिक प्रकाशनों के सम्बन्ध में यह अवधि अनिश्चित भी होती है। सामयिक प्रकाशन का प्रत्येक खण्ड विशिष्ट एवं स्वतंत्र अंश लेखों से समायुक्त होता है जो विशिष्ट विषयों से सम्बन्धित होते हैं। साधारणतया ऐसे प्रकाशन में लेखक अनेक होते हैं और क्रमिक खण्डों के विषय और लेखक भी भिन्न हुआ करते हैं। सभी विषय किसी एक ही ज्ञान क्षेत्र के होते हैं। इसका प्रकाशन एक पूर्ण खण्ड में नहीं होता है बल्कि कई अंकों में होता है। सावधिक प्रकाशनों को सामयिकी भी कहा जाता है।

अतः सामयिक प्रकाशन वे प्रकाशन कहलाते हैं जिनका प्रकाशन नियमित रूप से एक निश्चित अन्तराल के बाद होता है तथा जिन सामयिक प्रकाशनों का समय अन्तराल अनिश्चित होता है उन्हें धारावाहिक प्रकाशन (Serial) कहते हैं। सामयिक प्रकाशनों को पत्र-पत्रिकाएं भी कहते हैं। सार्वजनिक ग्रन्थालयों में दैनिक समाचार पत्र एवम् सामान्य पत्रिकाओं का तथा कलेज एवं विश्वविद्यालय तथा शोध ग्रन्थालयों में विद्वत पत्रिकाओं का चयन एवं अर्जन किया जाता है। शोध ग्रन्थालयों में तो विद्वत पत्रिकाओं के क्रय पर ग्रन्थों से भी अधिक धनराशि व्यय की जाती है।

ए॰ए॰सी॰आर॰-2 के अनुसार नियमित रूप से अथवा निर्धारित समय से प्रकाशित होने वाले अथवा अनिश्चित काल तक सामान्यतः वार्षिकी की अपेक्षा कम अवधि में प्रकाशित किये जाने वाले धारावाहिक प्रकाशनों को सामयिकी (Periodicals) कहते हैं। जिसके प्रत्येक अंक में पृथक निबन्ध, कथाएँ अथवा लेख समाविष्ट होते हैं।

जैसे— Indian Journal of Philosophy

Journal of Applied Mathematics

### 8.1.1 सावधिक प्रकाशनों की विशेषताएँ

सावधिक प्रकाशन में जिन्हें पत्रिकाएँ भी कहते हैं निम्न विशेषताएँ होती है-

(1) सावधिक प्रकाशन का प्रत्येक अंक एक निश्चित समय अन्तराल जैसे दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक, त्रैमासिक, अर्द्धवार्षिक तथा वार्षिक रूप में प्रकाशित होता है।

(2) सावधिक प्रकाशन का प्रत्येक अंक एक निश्चित समय अन्तराल जैसे दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक, त्रैमासिक अर्द्धवार्षिक तथा वार्षिक रूप में प्रकाशित होता है।

(3) प्रत्येक अंक में किसी एक मुख्य विषय की अनेक शाखाओं तथा उपशाखाओं से सम्बन्धित विभिन्न अंशकारों के अंशदान आलेख के रूप में संकलित रहते हैं।

(4) प्रत्येक अंक के मुख्य पृष्ठ पर खण्ड संख्या, अंक संख्या, तथा आवधिकता (Periodicity) अंकित रहती है।

(5) समस्त अंकों स मिलकर एक पूर्ण खण्ड (Volume) का निर्माण होता है सामान्यतः एक वर्ष में जिसकी वर्ष के अन्त में बॉइन्डिग करा कर सुरक्षित किया जाता है। डॉ॰ एस॰ आर॰ रंगनाथन ने पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशनों में निम्नलिखित पांच कमियाँ बताई हैं:

1. खण्ड संख्या में अनियमितता।
2. अंकों में प्रकाशन में अनियमितता।
3. नाम एवं प्रायोजित निकाय में परिवर्तन।
4. दो अथवा दो से अधिक पत्रिकाओं के एकीकरण से उत्पन्न समस्यायें।
5. एक ही पत्रिका का दो या अधिक पत्रिकाओं में विभक्त होना।

## 8.2 सावधिक प्रकाशनों का चयन

ग्रन्थालयों में सावधिक प्रकाशनों का चयन करना एक महत्वपूर्ण कार्य होता है। ग्रन्थालय के लिए पाठकों के उपयोगार्थ सावधिक प्रकाशन ग्रन्थों की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण होते हैं। शैक्षणिक पुस्तकालय में पाठ्य-सामग्री क्रय हेतु निश्चित धनराशि का

HMDC-019

एक बहुत बड़ा अंश इनके क्रय पर व्यय किया जाता है। इस व्यय के औचित्य को सिद्ध करने के लिए संस्था के उद्देश्यों, पाठकों की रूचियों तथा उनकी आवश्यकताओं की भी पूरी जानकारी होना आवश्यक होती है। सावधिक प्रकाशनों के चयन का कार्य विषय से सम्बन्धित शिक्षकों, शोधकर्ताओं के परामर्श के अनुसार किया जाता है। इनका चयन करते समय प्रकाशित समीक्षाओं पर भी ध्यान देना होता है। किसी भी नवीन प्रकाशन का चयन करते समय ग्रन्थालय के वित्तीय साधन तथा पूर्व में क्रय की जाने वाली पत्रिकाओं का भी ध्यान रखना आवश्यक होता है। अन्य ग्रन्थालयों द्वारा अर्जित की जाने वाली सामयिक प्रकाशनों की सूची भी इनके चयन करने में सहायक होती है। इस प्रकार सावधिक प्रकाशनों के चयन हेतु निम्न बातों पर अवश्य ध्यान दिया जाना चाहिए—

1. उपयोगकर्ता की आवश्यकता तथा माँग
2. ग्रन्थालय का प्रकार तथा क्षेत्र
3. ग्रन्थालय से आर्थिक संसाधन
4. ग्रन्थालय में पहले से ही अर्जित सामयिक प्रकाशन
5. अन्य ग्रन्थालयों में सामयिक प्रकाशनों की उपलब्धता

श्रेष्ठ तथा उपयोगी सावधिक प्रकाशनों के चयन के लिए गेबिल (J.H. Gable) ने निम्न बातों पर ध्यान देना आवश्यक बताया है।

1) सावधिक प्रकाशन एक दूसरे के पूरक के रूप में हों तो चयन किए जाने चाहिए न कि द्वैतीयकरण (Double) करने के लिए।
2) सभी की अभिरूचि के अनुसार श्रेष्ठ, उत्तम तथा उपयोगी सामयिक प्रकाशनों का चयन करना चाहिए।
3) नियमित एवं धारावाहिक रूप से प्रकाशित होने वाले प्रकाशनों का सर्वप्रथम चयन करना चाहिए।
4) वे प्रकाशन उपयुक्त रहते हैं जो परिसंरचरण तथा सन्दर्भ दोनों के लिए उपयोगी हों।
5) सावधिक प्रकाशनों का वर्तमान उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए चयन करना चाहिए। नवीन प्रकाशित सामयिक प्रकाशनों के चयन के सम्बन्ध में

जिन्हें अपना महत्व सिद्ध करने का अभी पर्याप्त समय नहीं मिलता है इनके क्रय के प्रति ग्रन्थालयी को उदार नहीं होना चाहिए।

6) किसी भी सावधिक प्रकाशन के सम्बन्ध में अध्ययन कक्ष उपयोग, सन्दर्भ उपयोग मनोरंजन के लिए पढ़ना आदि के लिए प्रदान करना चाहिए।

7) सावधिक प्रकाशन को केवल एक वर्ष ही मँगाकर बन्द नहीं कर देना चाहिए अपितु उसकी उपयोगिता को परखन कर उसे अगले वर्ष भी आदेशित करना चाहिए।

8) सावधिक प्रकाशन के चयन में सहकारिता के सिद्धान्त को भी लागू करना चाहिए अर्थात् यदि विभिन्न ग्रन्थालय सहयोग की नीति अपनाएँ तो मितव्ययिता के साथ-साथ उपयोगकर्ताओं की सेवा भी उत्तम ढंग से की जा सकती है।

सावधिक प्रकाशनों के चयन हेतु निम्नलिखित उपकरण प्रयोग में लाये जा सकते हैं जो उपयोगी सिद्ध होंगे।

i. Ulrich's International Periodicals Directory : a classified guide to a selected list of current periodicals foreign and domestic. Ed. 27; R. R. Bowker, New York, 1988.

ii. World list of Scientific Periodicals, New York.

iii. Directory of periodicals New York American trades press clippings Bureau.

iv. British National Bibliography (BNB). London (for' periodicals published in great Britain)

v. Indian National Bibliography (INB) (For periodicals published in India)

vi. Nifer guide to Indian periodical's Poona, National Infirmation service. 1955-56

vii. Directory of Periodicals Published in India compiled by Kaur. New Delhi, Sapra & Sapra 1988.

viii. Annual report of Registrar of News Papers of India. New Delhi,

Ministry of Information and Broadcasting.

ix. World list of National News Papers. A union list of News papers in Libraries in the British Isles. London, Butterworth.

x. Guide to selected Newspapers and periodicals in India. New Delhi, Manager of Publication, 1995.

xi. Indian Periodical. Edby N.N. Gidwani and K. Navlani (Only English Periodicals are included).

xii. Willing's Press guide U.K. Thomes skinner Directors R.A.C. House, Crydon.

## 8.1.2 चयन प्रक्रिया

सावधिक प्रकाशनों के चयन की प्रक्रिया में दो प्रकार की परिचालनात्मक गतिविधियाँ होती हैं :- एक तो वर्तमान में प्राप्त सावधिक प्रकाशनों के लिए तता दूसरी नवीन सावधिक प्रकाशनों के लिए।

### (अ) वर्तमान में प्राप्त सावधिक प्रकाशनों के लिए

प्रत्येक पुस्तकालय में सामयिक रूप से प्राप्त की जाने वालों सावधिक प्रकाशनों का एस सेट होता है। इन के वार्षिक शुल्क का नवीनीकरण प्रतिवर्ष किया जाता है। इनके नवीनीकरण में प्रयुक्त की रूपरेखा निम्नानुसार होती है:

- सावधिक प्रकाशनों की सूची का निर्माण
- सावधिक प्रकाशनों सूची की समीक्षा
- सहयोगी पुस्तकालयों से परामर्श
- वित्तीय स्थिति की समीक्षा
- आपूर्ति बंद कराने के लिए मदों का चयन
- विशेषज्ञों से परामर्श, तथा,
- संस्वीकृति प्राप्त करना।

वर्तमान में प्राप्त होने वाले सावधिक प्रकाशनों की संपूर्ण सूची निर्मित की जाती है जिसमें प्रत्येक सावधिक प्रकाशन के समक्ष भुगतान योग्य नवीन वार्षिक शुल्क भी अंकित होता है। तदुपरांत इस सूची के प्रत्येक मद का उसकी आपूर्ति जारी रखने के


HMDC-019

दृष्टिकोण से परीक्षण उसकी उपयोगिता के आधार पर किया जाना चाहिए। सूची की समीक्षा एवं संशोधन अनेक कारणों से अनिवार्य है। यथा सामयिकी विशेष की अनुपयोगिता, नवीन एवं अधिक सामयिकियों का प्रकाशन, पाठकों की आवश्यकताओं में परिवर्तन या अपर्याप्त वित्त। चूंकि एक बार माँगने के पश्चात् विलोपन या आपूर्ति बंद कराना अस्वस्थ परंपरा है, अतः विलोपन अपरिहार्य रूप से विशेष परिस्थितियों में ही किया जाता है। फिर भी यह याद रखना चाहिए कि सामयिकियों का स्थायी महत्व होता है। यदि किसी सामयिकी विशेष के महत्व में अस्थाई कमी पायी भी जाये तो उन्हें रद्द करने के स्थान पर बनाए रखना अधिक विवेक सम्मत होगा। सामयिकियों के संग्रह के निर्माण से संबंधित कार्य में पूर्वानुमान की आवश्कता होती है। सामयिक सूचियों में बार-बार विलोपन करना इस बात का द्योतक है कि मौलिक चयन में पूर्वानुमान की कमी रह गयी है। ऐसे अवसर भी आ सकते हैं कि पड़ोस का पुस्तकालय भी वही सावधिक प्रकाशन मँगाए। इस स्थिति में द्विरावृत्ति को रोकने के लिए दोनों पुस्तकालयों को समझौता करना चाहिए। इस व्यवस्था से प्रभावित विलोपित पत्रिका के स्थान पर नई सामयिकी को स्थान दिया जा सकता है। हर स्थिति में सूची को अंतिम रूप प्रदान करने से पूर्व विषय विशेषज्ञ से परामर्श करना अनिवार्य होता है। तत्पश्चात् सूची को स्वीकृति प्राप्त करने हेतु संस्वीकृति देने वाले प्राधिकारी के सम्मुख रखा जाता है। तब सूची आदेश के लिए तैयार हो जाती है।

**(ब) नवीन सावधिक प्रकाशनों के लिए**

नई सामयिकियों के चयन की प्रक्रिया का उल्लेख नीचे किया गया है।

- विशेषज्ञों के सुझाव
- आरंभिक जाँच
- स्रोतों से एकत्र विवरण
- प्रकाशकों से पूछताछ
- वित्त
- विशेषज्ञों से परामर्श, तथा
- संस्वीकृति प्राप्त करना।

पुस्तकालय को जैसे ही संभावित अभिरूचि की विशेष सामयिकी की जानकारी मिलती है वैसे ही सामयिकी का ब्यौरा लिख लिया जाता है। पुस्तकालय को इन सामयिकियों की जानकारी विज्ञप्तियों एवं विज्ञापनों, व्यापार विवरणी, राष्ट्रीय पुस्तकसूचियों

HMDC-019

की प्रविष्टियों पाठकों से प्राप्त सुझाव या विभागों के माँग पत्रों जैसे विभिन्न स्त्रोतों से प्राप्त होती है। बाद में इन मदों की प्राथमिक जाँच वर्तमान सामयिकियों की सूची से की जाती है तथा पहले ही उपलब्ध मदों को उसमें से हटा दिया जाता है। शेष बचे मदों का संपूर्ण विवरण सामयिकियों की निर्देशिकाओं या संघ प्रसूचियों से एकत्र किया जाता है। प्रत्येक स्थिति में कम से कम आवश्यक विवरण जैसे आख्या, प्रायोजक का नाम यदि कोई है, प्रकाशकों के नाम तथा पते, प्रकाशनावधि, तथा वार्षिक शुल्क की दरों इत्यादि को लिखा लिया जाता है। नव प्रकाशित सामयिकी के संदर्भ में ये विवरण प्रकाशित स्त्रोतों में प्राप्त नहीं भी हो सकते हैं। अतः इनकी जानकारी सीधे प्रकाशक से ली जाती है। सामयिकियों के नमूने की प्रतियाँ प्रकाशकों से निःशुल्क प्राप्त की जा सकती है। कुछ परिस्थितियों में नमूने की प्रतियाँ भुगतान के पश्चात् प्राप्त होती है या अवलोकन के पश्चात् वापस करने की शर्त पर प्राप्त होती है।

**( 1 ) उपहार द्वारा**

कुछ संस्थायें अपनी प्रसिद्धि (Popularity) के लिए कुछ निश्चित पुस्तकालयों में निःशुल्क सामयिकों न्यूजलेटर इत्यादि प्रकाशनों की है। इन संस्थाओं में प्रमुखतः विदेशी राजनयिक कम्पनियां, विभिन्न संगठन तथा अन्य संस्थायें होती है। कुछ प्रकाशक भी कुछ विशिष्ट व्यक्तियों एवं पुस्तकालयों को अपनी प्रसिद्धि के लिए अपने प्रकाशन भेजते हैं। उदाहरण के तौर पर एक नया समाचार पत्र 'देश भक्त' नियमित रूप से प्रत्येक महीने कई महीनों तक महत्वपूर्ण पुस्तकालयों में निःशुल्क भेजा जाता है। कुछ संगठन जिनमें पुस्तकालय भी शामिल है, उपहार के रूप में कुछ पत्रिकाओं की प्रतियाँ प्राप्त करते हैं। कई प्रकार से संगठन जैसे यूनेस्को, एसलीब आदि अपने प्रकाशनों की सूची महत्वपूर्ण पुस्तकालयों को डाक का शुल्क भेजने पर भेजती है।

**( 2 ) विनिमय द्वारा**

कुछ पुस्तकालयों में ऐसे प्रकाशन पड़े रहते हैं जिनका उपयोग नहीं हो पाता ऐसे प्रकाशनों को नष्ट ना करके, उनका किसी राष्ट्रीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों से प्रकाशनों का विनिमय कर लिया जाता है। यूनेस्को के द्वारा ऐसे प्रकाशनों का 'विनिमय' सूचियों के द्वारा प्रकाशनों का विनिमय किया जाता है।

**( 3 ) संस्थागत सदस्यता द्वारा**

कुछ पत्र-पत्रिकाओं तथा प्रकाशनों की प्राप्ति किसी संस्था की सदस्यता ग्रहण करके की जाती है और संस्थाओं की सदस्यता फीस जमा करके की जाती है। प्राप्त किये जा सकते हैं ये संस्थायें सामान्यतया एक बार प्रकाशित होने वाले प्रकाशन अथवा

निरन्तर जाती रहने वाले प्रकाशन जारी रखते हैं जिससे कि उनके सदस्य बनते रहते हैं और सम्बन्धित व्यवसायी उनकी गतिविधियों एवं कार्यक्रमों के द्वारा उनसे जुड़े रहते हैं। ये प्रकाशन सामान्यतया पुस्तकालय द्वारा बिना किसी अतिरिक्त राशि दिये प्राप्त किये जा सकते हैं।

### (4) निक्षेप के द्वारा

निक्षेप पद्धति में कुछ विशिष्ट निर्धारित पुस्तकालयों को सरकारी, राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय संगठनों इत्यादि द्वारा प्रकाशित प्रकाशनों की निःशुल्क प्रतियाँ प्राप्त करने का अधिकार प्रदान किया जाता है। अनेक विश्वविद्यालय एवं राजकीय केन्द्रीय पुस्तकालय इस पद्धति से लाभान्वित हो रहे हैं। राष्ट्रीय एवं राजकीय विधि द्वारा मान्य पुस्तकालय भी 1956 के कॉपीराइट ऐक्ट याद 'डिलिवरी ऑफ बुक्स एंड न्यूजपेपर्स (पब्लिक लाइब्रेरीज) ऐक्ट के अंतर्गत दिए गए प्रावधानों के अनुसार भारत में प्रकाशित प्रकाशनों की निःशुल्क प्रतियाँ प्राप्त करने के अधिकारी हैं। इन सभी अवस्थाओं में, प्रलेख प्राप्त करने वाले पुस्तकालयों को नवीन प्रकाशनों तथा उनकी समय पर प्राप्ति के लिए लगातार सतर्क रहना चाहिए।

## 8.3 सावधिक प्रकाशनों का अर्जन

पुस्तकालय में पुस्तकों की तरह ही सामयिकी प्रकाशनों के अर्जन के निम्नलिखित साधन है।

1. उपहार/दान
2. विनिमय के द्वारा
3. संस्थागत सदस्यता के द्वारा
4. निक्षेप के द्वारा
5. क्रय के द्वारा

### 5. क्रय के द्वारा –

क्रय के द्वारा सामयिकियों के अर्जन की दो विधियाँ अधिक प्रचलित है। ये विधियाँ निम्न है:

(अ) प्रत्यक्ष सशुल्क

(ब) एजेन्सी विधि


HMDC-019

पहली विधि में पुस्तकालय सामयिकियों के लिए आदेश सीधे उसके प्रकाशक को भेजते हैं और दूसरी विधि में पुस्तकालय सामयिकियों को सीधे प्रकाशक से ना मंगाकर आदेशय मध्यथ एजेन्टों को दिया जाता है। इनमें से प्रत्येक करे अपने अपने दोष गुण हैं। जिनकी चर्चा आगे की जा रही है।

**( अ ) प्रत्यक्ष सशुल्क विधि :** इस प्रक्रिया में सावधिक प्रकाशनों को किसी अभिकर्ता के माध्यम से ना प्राप्त करके प्रकाशक से सीधे क्रय करते हैं। सीधे प्रत्यक्ष रूप से प्रकाशकों के द्वारा सावधिक प्रकाशकों की प्राप्ति के निम्नलिखित लाभ एवं हानि हैं।

**लाभ**

1. अभिकर्ता के माध्यम से आदेश प्रदान करने की तुलना में यह द्रुतगामी होता।
2. यह एजेन्ट की तुलना में अधिक मितव्यी है। क्योंकि इसमें पुस्तकालयों को अभिकर्ताओं को सेवा शुल्क नहीं देना पड़ता है। कुछ परिस्थितियों में प्रकाशकों द्वारा पुस्तकालयों को प्रोत्साहन छूट दी जाती है। एजेन्टों द्वारा क्रय करने पर इस प्रकार के लाभ प्राप्त नहीं हो पाते हैं। ft
3. एजेंटों की तुलना में यह अधिक प्रभावशाली है क्योंकि पुस्तकालय को एजेन्टों की अपेक्षा प्रकाशकों द्वारा सामयिकियों की आपूर्ति तुरन्त की जाती है। यदि आपूर्ति में कोई गलती हो जाती है तो प्रकाशक को सूचित करने पर उसका तुरन्त समाधान भी हो जाता है।
4. एजेन्टों को अधिक भुगतान करने की अपेक्षा प्रकाशकों को वार्षिक शुल्क का अग्रिम भुगतान करना अधिक सुरक्षित होता है।
5. कुछ प्रकाशक एजेन्ट के माध्यम से कार्य करना पसन्द नहीं करते जब तक कि प्रकाशक के साथ एजेन्ट के व्यावसायिक सम्बन्ध न हों।
6. सरकारी एवं संस्थागत प्रकाशन केवल उपहार स्वरूप या विनिमय द्वारा ही उपलब्ध होते हैं। एजेन्ट इस प्रकार के प्रकाशनों का सौदा नहीं करते हैं।

**हानि**

उपरोक्त लाभों के विपरीत इस विधि की कुछ हानियाँ भी हैं जो निम्नलिखित है-

1. प्रत्येक कार्य के लिए विभिन्न प्रकाशकों का अलग-अलग आदेश, स्मरण पत्र आदि भेजने पड़ते हैं जिनमें आपूर्ति में गलती तथा लापता अंकों से सम्बन्धित कार्यो के लिए व्यक्तिगत रूप से पत्राचार करना पड़ता है।
2. विदेशी प्रकाशकों से पत्राचार करने में डाक व्यय में काफी अधिक व्यय होता

है।

3. पत्राचार करते समय बहुत से प्रशासनिक कार्य करने पड़ते हैं और इस कार्य के लिए अलग से लेखों को बनाना पड़ता है जिसमें वित्तीय लेखा, शुल्क रजिस्टर आदि आते हैं।

5. पत्राचार करने के बाद पुस्तकालय, प्रकाशकों को स्वीकृति का इन्तजार करते हैं जब स्वीकृति प्राप्त होती है उसके बाद आदेश प्रक्रिया शुरू होती है जिसमें काफी समय व्यर्थ होता है।

6. पत्राचार करने के बाद पुस्तकालय, प्रकाशकों की स्वीकृति का इन्तजार करते हैं। जब स्वीकृति प्राप्त होती है उसके बाद आदेश प्रक्रिया शुरू होती है जिसमें काफी समय व्यर्थ होता है।

अतः हम कह सकते हैं कि उपरोक्त दोषों तथा डाक व्यय के अतिरिक्त लागत के उपरांत भी यह विधि प्रभावशाली सेवा को सुनिश्चित करती है तथा सामयिक प्रकाशनों की प्राप्ति इस विधि के माध्यम से अधिक सुरक्षित होता है।

**( ब ) एजेन्सी विधि**

इस विधि में पुस्तकालय प्रत्यक्ष प्रकाशकों के सम्पर्क ना करके एजेट या किसी फर्म के माध्यम से सामयिकियों का अर्जन करते हैं। इसमे शुल्क लेने वाले एजेन्टों एक व्यक्ति या प्रतिष्ठान होता है जो पुस्तकालय और प्रकाशकों के मध्य सम्पर्क स्थापित करता है। ऐसे सजेंट को विक्रेता या व्यापारी भी कहते हैं।

एजेन्टों के माध्यम से सामयिकियों की प्राप्ति के निम्नलिखित लाभ हैं—

**लाभ**

1. इस विधि में पुस्तकालय द्वारा अधिक कार्यवाही से बचा जा सकता है क्योंकि जो आदेश दिये जाते हैं वह थोंक में प्रदान किये जाते हैं तथा भुगतान भी एजेन्ट के समेकित बिल के अनुसार किया जाता है।

2. पुस्तकालयों की अपेक्षा एजेन्ट व्यक्तिगत प्रकाशकों की विशेषताओं से भली-भाँति परिचित होते हैं तथा उसी के अनुरूप कार्य करते हैं।

3. एजेन्ट लगातार पुस्तकालयों को दस से पन्द्रह प्रतिशत की छूट प्रदान करता है जबकि प्रकाशक इस तरह की छूट अधिकांश कम ही प्रदान करते हैं।

4. पत्राचार तथा डाक व्यय कम होता है।

5. एजेन्ट पुस्तकालयों में प्राप्त नहीं होने वाले अंकों तथा लापता अंकों के लिए

प्रकाशकों से पुनः प्राप्ति तथा आनुपातिक धन को दिलाने को कार्य भी करता है।

**हानि**

1. इस विधि को अनुभव के आधार पर कुछ लोग तर्क देते हैं कि अनेक एजेन्ट उनके तथा पुस्तकालयों के मध्य हुए करारनामा (Mou) का सम्मान नहीं करते हैं।

2. पुस्तकालयों के लिए एजेन्टों के माध्यम से सामयिकियाँ मंगाना महँगा होता है क्योंकि वे सेवा शुल्क लेते हैं तथा पुस्तकालयों को रियायती मूल्यों का लाभ या प्रकाशकों द्वारा प्रदत्त छूट प्रदान नहीं करते हैं।

3. एजेन्टो के माध्यम से कारण किसी विशिष्ट अंक के पुस्तकालय में प्राप्त न होने की सूचना प्रकाशक को मिलने में देर हो सकती है। अतः सामयिक प्रकाशन का उक्त अंक अप्राप्य हो सकता है इस प्रकार आर्थिक हानि के साथ-साथ खण्ड भी पूर्ण नहीं हो पाता तथा अधूरा रह जाता है।

4. कोई अनुबंध या करारनामे को रद्द करने तथा नया अनुबंध तैयार करने में कुछ समय का अंतराल हो सकता है जिसके परिणामस्वरूप वार्षिक शुल्क का भुगतान समय पर नहीं हो पाता तथा पुस्तकालय को खंडित फाइलों का जोखिम उठाना पड़ता है।

5. कुछ एजेन्ट समय पर प्रकाशकों को वार्षिक शुल्क की राशि का भुगतान नहीं करते हैं यद्यपि वे पुस्तकालयों से राशि प्राप्त कर लेते हैं और प्रकाशक सामियिकियों की आपूर्ति केवल भुगतान के बाद ही करते हैं इससे भी खण्जो के अपूर्ण रहने का डर बना रहता है।

अतः हम कह सकते हैं कि उपरोक्त दोषों को किसी सीमा तक उनका हल किया जा सकता है। यदि एजेंट की नियुक्ति में उचित सावधानी बरती जाए। किसी एजेन्ट के चुनाव की प्रमुख नीति उसकी तत्परता नियमितता और विश्वसनीय सेवा होती है। कुछ ऐसे अच्छे प्रतिष्ठित एजेन्ट होते हैं तथा प्रकाशक इस प्रकार के एजेन्टों के साथ व्याप के करने में रूचि रखते हैं। इसलिए सामयिकियों की प्राप्ति की एजेन्सी विधि में एजेन्टों का चुनाव एक निर्णायक पहलू होता है।

## 8.3.1 आदेशन प्रक्रिया

ग्रन्थालयों में सामयिक प्रकाशनों का क्रय करने के लिए उनका ग्राहक बनकर


HMDC-019

संस्थाओं का सदस्य बनकर, विनिमय के द्वारा तथा उपहार स्वरूप अर्जन किया जा सकता है। मितव्ययिता की दृष्टि से तथा ग्रन्थालय धनराशि के उचित उपयोग के लिए आवश्यक है कि उपरोक्त विधियों का पूर्ण लाभ उठाया जाय तथा केवल उन्हीं सामयिक प्रकाशनों का ग्राहक बन जाय तो अन्य किसी प्रकार से सुलभ न हो सकें। सामयिक प्रकाशनों का चयन करने के पश्चात् उनके क्रय हेतु आदेश भेजना होता है। सामयिक प्रकाशनों का अर्जन करने के सम्बन्ध में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं याद रखने योग्य बात है कि उनका पूरे वर्ष भर का भुगतान अग्रिम रूप से करना पड़ता है। इसका कारण यह है कि प्रकाशक अपने सावधिक प्रकाशनों की उतनी ही प्रतियाँ मुद्रित करवाते हैं जितनी उनकी माँग होती है या जितनी के लिए अग्रिम धन आ चुका होता है। सावधिक प्रकाशनों के क्रय हेतु प्रत्यक्ष रूप से प्रकाशक को ही भेजा जा सकता है अथवा किसी एक अभिकर्ता को आदेश भेजकर विभिन्न प्रकाशकों के सावधिक प्रकाशन प्राप्त किये जा सकते हैं।

डा॰ रंगनाथन ने इस सम्बन्ध में कहा है कि - सावधिक प्रकाशनों को क्रय करने हेतु आदेश प्रत्यक्ष रूप से प्रकाशक को भेजना उचित है क्योंकि किसी माध्यम (एजेन्ट) के हस्तक्षेप के कारण किसी विशिष्ट अंक के ग्रन्थालय में प्राप्त न होने की सूचना प्रकाशक को मिलने में विलम्ब हो सकता है। अतः सावधिक प्रकाशन का उक्त अंक अप्राप्य हो सकता है। इस प्रकार आर्थिक हानि के साथ-साथ उक्त खण्ड पूर्ण नहीं हो पाता और अधूरा रह जाता है। यदि सावधिक प्रकाशन के अंक तत्काल ग्रन्थालय में न आयें तो पाठकों को असन्तोष होता है तथा उनमें वर्णित विचारों की उपयोगिता भी नष्ट हो जाती है। परन्तु व्यवहार में यही देखा जाता है कि अनेक ग्रन्थालय सावधिक प्रकाशनों का क्रयादेश एजेन्ट के माध्यम से ही भेजते हैं क्योंकि प्रत्येक सावधिक प्रकाशन का प्रत्यक्ष रूप से प्रकाशक को क्रयादेश भेजने से ग्रन्थालय का कार्यभार बढ़ जाता है तथा डाक व्यय आदि भी बढ़ जाता है। डा॰ रंगनाथन के अनुसार यह बढ़ा हुआ व्यय प्रकाशकों से छूट प्राप्त करके पूरा किया जा सकता है जबकि एजेन्ट मुद्रित मूल्य से ऊपर भी कुछ अतिरिक्त कमीशन की माँग करते हैं।

भारतीय ग्रन्थालयों में सामयिक प्रकाशनों के क्रये हेतु आदेश से सम्बन्धित निम्न सुझाव दिये जाते हैं—

(1) यदि देशी सामयिक प्रकाशन क्रय करने हैं तो प्रकाशकों से सीधे प्रत्यक्ष रूप से क्रय करना ही उत्तम रहता है। अतः क्रयादेश सीधे प्रकाशकों को भेज देना चाहिए तथा उनको ही धनराशि का भुगतान करना चाहिए तथा किसी अंक के प्राप्त न होने की स्थिति में उनको ही स्मरण पत्र भेजना चाहिए।


HMDC-019

(2) लोकप्रिय दैनिक, साप्ताहिक प्रकाशनों के लिए स्थानीय विक्रेता से ही क्रय करना उत्तम एवं लाभदायक रहता है अन्यथा अनेक अंकों के गुम होने, डाक व्यय आदि के कारण व्यय साध्य पड़ने तथा देर से आने की सम्भावना रहती है।

(3) विदेशी सामयिक प्रकाशनों को किसी अच्छे देशी एजेन्ट के माध्यम से मँगाना उचित रहता है। इससे ग्रन्थालय अनेक परेशानियों से बच जाता है। इस प्रक्रिया में यदि कोई अंक नहीं आ पाता है तो उसका स्मरण पत्र एजेन्ट को ही भेजा जाता है और यह एजेन्ट का ही कर्तव्य होता है कि वह प्रकाशक से अप्राप्य अंक भेजने के लिए आग्रह करें।

सामयिक प्रकाशनों की आदेश प्रक्रिया में निम्न कार्य सम्पन्न किये जाते हैं। सर्वप्रथम सक्षम अधिकारी द्वारा जिन पत्रिकाओं का क्रय करने की अनुमति मिल जाती है उनके आदेश देने की कार्यवाही की जाती है। इस समय इनकी दो सूचियाँ बनाई जाती है—

(1) उन सामयिक प्रकाशनों की जो पहले से ही ग्रन्थालय में क्रय एवं अर्जित की जा रह हैं तथा जिनके आदेश का नवीनीकरण होना है।

(2) उन सामयिक प्रकाशनों की जिनका आदेश पहली बार दिया जा रहा है।

इनसे सम्बन्धित समस्त जानकारियाँ सम्बन्धित पत्रकों पर लिख ली जाती हैं जिसकी आवश्यकता सामयिक प्रकाशन के अंक की प्राप्ति के समय पड़ती है। इन दो सूचियों के साथ वह सूची भी बना ली जाती है जिनको क्रय नहीं करना है अर्थात् जो पहले क्रय की जा रही थीं लेकिन अब बंद करनी हैं। इस प्रकार नई पत्रिकाओं का आदेश तथा पुनः क्रय नहीं की जाने वाली पत्रिकाओं को रद्द करने का कार्य किया जाता है। उक्त सूचना को पंजीकरण व्यवस्था एवं वित्तीय डायरी में लिख दिया जाता है ताकि पत्रिकाओं की सूचना अद्यतन रहें।

## 8.3.2 सावधिक प्रकाशनों की प्राप्ति में सावधानियाँ

किसी भी वितरक से सामयिकी प्राप्त किये जाते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना आवश्यक है—

1. प्रकाशक द्वारा प्रकाशित व सत्यापित मूल्य सूची प्रदान की जायेगी।

2. अग्रिम भुगतान 15 दिन के अन्दर प्रकाशक को प्रेषित कर दिया जायेगा तथा


NBPC-019

उसका प्रमाम पत्र भी दिया जायेगा।

3. किसी भी अप्राप्त अंक के लिए सभी प्रयास किये जायेंगे तता अप्राप्त रहने पर अनुपातिक अंकों का शुल्क पुस्तकालय को प्रदान किया जायेगा।

4. यदि आनलाइन उपलब्धता हो तो प्रकाशक पुस्तकायल को ऑनलाइन संस्करण भी उपलब्ध करायेगा।

5. सभी सामयिकी संस्थागत मूल्यों पर ही प्रदान किये जायेंगे तथा पुस्तकालयों से कोई अतिरिक्त शुल्क चार्ज नहीं किया जायेगा।

6. सभी भुगतान भारतीय मुद्रा में ही प्रदान किये जायेंगे।

7. विनिमय दर दो कि विदेश मुद्रा को भारतीय मुद्रा में परिवर्तित करने के लिए लागू होगी वह, Good Office Committee द्वारा निर्धारित या बैंक विनिमय दर के आधार पर लागू होगी तथा उसका उचित प्रमाण पत्र प्रदान किया जायेगा।

उपर्युक्त के अतिरिक्त सावधिक प्रकाशनों की नियमित उपलब्धता सुनिश्चित होनी चाहिए। भारतीय परिवेश में विदेशी सावधिक पर निर्भता काफी अधिक होती है किसी भी प्रकार के शोध कार्य में उनकी माँग व मूल्य सबसे अधिक होता है। इसके अनेक कारण हो सकते हैं। विदेशी सावधिक के संबंध में निम्न महत्वपूर्ण बातें दृष्टव्य है।

1. भारतीय पुस्तकालय विदेशी सावधिक पर निर्भर है तथा उनकी माँग अत्यधिक है।

2. विदेशी सावधिक अपने देश में प्रकाशन के तीन या चार माह बाद डाक द्वारा पहुँचते हैं।

3. अव्यवस्थित डाक व्यवस्था की कमियों के कारण कई अंक पहुँच ही नहीं पाते।

4. जो अप्राप्त अंक होते हैं उनकी क्षतिपूर्ति प्रकाशक व वितरक नहीं करते।

5. भारत में सावधिक का व्यवसाय पूर्ण रूप से अव्यवस्थित है।

6. किताबों की अपेक्षा सावधियों में अंक प्राप्त होने से पूर्व ही अग्रिम शुल्क देना पड़ता है जिससे प्रकाशकों व वितरकों पर निर्भर होना पड़ता है

7. कभी-कभी मूल्यों में परिवर्तन भी हो जाता है।

8. भारतीय सावधिक प्रकाशन अपनी अनियमितता एवं उपयोग के कारण प्रभावित नहीं कर पाता है।

9. सूचीकरण व सार संग्रह अधिकतर पूर्ण विवरण नहीं ते पाते।

## 8.5 सावधिक प्रकाशनों का रख-रखाव एवं नित्यकार्य

सामयिक प्रकाशनों के आदेशन एवं अग्रिम भुगतान कर दिये जाने के पश्चात् इस तरह के प्रकाशन पुस्तकालय में आने प्रारम्भ हो जाते हैं। इनके पुस्तकालय में प्राप्त होते ही इनके रख-रखाव एवं इनसे सम्बन्धित नियत कार्य प्रारम्भ हो जाते हैं। इससे सम्बन्धित पहला कार्य इनका पंजीयन है जिसकी अनेक विधियाँ प्रचलन में हैं।

### 8.3.1 सावधिक प्रकाशनों के पंजीयन की विधियाँ

सामाजिक प्रकाशनों के पंजीकरण के लिए पुस्तकालयों द्वारा अपनाई जाने वाली मुख्य प्रणालियाँ/विधियाँ निम्नवत् है–

1. पंजिका प्रणाली
2. बहीखाता प्रणाली
3. एक पत्रक प्रणाली
4. रंगनाथन की त्रिपत्रक प्रणाली
5. कार्डेक्स प्रणाली

**1. पंजिका प्रणाली** - इस प्रणाली में सावधिक प्रकाशन हेतु रजिस्टर का प्रयोग किया जाता है। यह सावधिक प्रकाशनों का पुस्तकालय में अभिलेख रखने की परम्परागत प्रणाली है। जिन पुस्तकालयों में अल्पसंख्या में सावधिक प्रकाशन क्रय किये जाते हैं। वहाँ यह प्रणाली अधिक उपयोगी है। रजिस्टर में सावधिकीयों की प्राप्ति, भुगतान तथा स्मरण पत्र आदि भेजने सम्बन्धी पूर्ण विवरण रखा जाता है। प्रारम्भ से पृष्ठ पर वर्णक्रम से सामयिक प्रकाशनों की सूची अंकित कर लेते हैं तथा प्रत्येक सामयिक प्रकाशन के नाम के आगे उसकी निर्धारित पृष्ठ संख्या अंकित कर देते हैं, ताकि संबंधित सामयिक प्रकाशन का विवरण ढूढने हेतु सम्बंधित पृष्ठ को आसानी से ढूंढ़ा जा सके।

साप्ताहिक तथा दैनिक पत्र-पत्रिकाओं के अभिलेख रखन हेतु पंजिका के प्रत्येक पृष्ठ का प्रारूप निम्न प्रकार होता है।

पुस्तकालय का नाम :........................................

सामयिक प्रकाशक का नाम ..................................

प्रकाशक .................................. विक्रेता ........................................

खण्ड तथा वर्ष ............................

आदेश सं॰ तथा दिनांक .........................देयक सं॰तथा दिनांक .................

| क्र.सं. | महीना | दिवस<br><br>1 2 3 4 5 6 7 8 9 10 11 12 13 14 15 16....31 | विशेष |
|---|---|---|---|
| | जनवरी | | |
| | फरवरी | | |
| | मार्च | | |
| | अप्रैल | | |
| | ......... | | |
| | दिसम्बर | | |

मासिक, त्रैमासिक तथा अर्द्धवार्षिक सामयिक प्रकाशनों के अभिलेख रखने हेतु पंजिका के प्रत्येक पृष्ठ का प्रारूप निम्न प्रकार का होता है।

पुस्तकालय का नाम ...............................

सामयिक प्रकाशन का नाम .......................

प्रकाशक .............................          विक्रेता .................................

वार्षिक मूल्य ..........................          भुगतान बिल संख्या तथा दिनाक ......

| खण्ड सं॰ तथा वर्ष | जनवरी 1 | फरवरी 2 | मार्च 3 | अप्रैल 4 | ....... | दिसम्बर 12 | आदेश सं॰ तथा दिनांक | विशेष |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | | | | | | | | |

**2. बहिखाता प्रणाली** - यह प्रणाली पंजिका प्रणाली की तरह ही होती है इसमें सावधिक प्रकाशनों के लिए बैंक की तरह प्रत्येक सावधिक के लिए एक स्थाई खाता बना दिया जाता है, जिसमें अनुवर्ग या अंकन के अनुसार कुछ पृष्ठ निश्चित कर दिये जाते हैं तथा एक अनुक्रमणिका तैयार कर दी जाती है, जिसमें सावधिक प्रकाशन का नाम और पृष्ठ संख्या अंकित की जाती है इससे अभिलेख रखते समय पृष्ठ आसानी से ढूंढने में सुविधा रहती है। इस प्रणाली में प्रत्येक पृष्ठ पर सूचनाएं निम्नलिखित सूचनाएं मुद्रित होती हैं जिसका प्रारूप निम्न प्रकार होता है।

HMDC-019

पुस्तकालय का नाम :.......................

सामयिक प्रकाशन का नाम .................

प्रकाशक ..................................... विक्रेता .................................

वार्षिक शुल्क ..............................

| खण्ड सं॰ तथा वर्ष | जनवरी 1 | फरवरी 2 | मार्च 3 | अप्रैल 4 | ....... | दिसम्बर 12 | आदेश सं॰ तथा दिनांक | विशेष |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | | | | | | | | |

**3. एक पत्रक प्रणाली -** एक पत्रक प्रणाली उन पुस्तकालयों के लिए ठीक है जहाँ पर अधिक संख्या में सामयिक क्रय किये जाते हैं। उपर्युक्त दोनों प्रणाली वहाँ उपयुक्त है जहां कम संख्या में सामयिक प्रकाशन क्रय किये जाते हैं लेकिन आधुनिक पुस्कालयों विशेषकर विश्वविद्यालय और शोध पुस्तकालयों में अधिक संख्या में सावधिक प्रकाशन क्रय किये जाते हैं यहाँ पर उपर्युक्त दोनों प्रणालियाँ अभिलिखित करने में असमर्थ हैं। इन पुस्तकालयों में एक पत्रक प्रणाली का प्रयोग किया जाता है। जिसमें प्रत्येक सामयिक प्रकाशन का लेखा एक पत्रक पर रखा जाता है। इस प्रणाली में 5'' × 3'' इंच पर आकार के छपे हुए पत्रकों का उपयोग किया जाता है जिन पर विभिन्न विवरण के साथ पत्रक मुद्रित करा लिया जाते हैं। पत्रक पर एक तरफ पुस्तकालय का नाम सामयिकी का नाम, आवधिकता, प्रकाशक, विक्रेता और उसके नीचे प्राप्ति से सम्बन्धित वर्ष, खण्ड, अंक आदि मुद्रित होते हैं तथा दूसरी तरफ सामयिकी प्रकाशन की आख्या, वर्ष, खण्ड, शुल्क, बिल संख्या तथा दिनांक, आदेश संख्या तथा दिनांक स्मरण पत्र भेजने सम्बन्धी विवरण व अन्य विवरण रहता है। पत्रक में भी वहीं विवरण किये जाते हैं जो प्रायः पंजिका प्रणाली में दिये जाते हैं। एक पत्रक का प्रारूप निम्न प्रकार का होता है।

पुस्तकालय का नाम :.......................

सामयिक प्रकाशन का नाम .................

प्रकाशक ..................................... विक्रेता .................................

वार्षिक शुल्क ..............................

| खण्ड सं॰ तथा वर्ष | जनवरी 1 | फरवरी 2 | मार्च 3 | अप्रैल 4 | ....... | दिसम्बर 12 | आदेश सं॰ तथा दिनांक | विशेष |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | | | | | | | | |

**पश्च पत्रक**

**आख्या**

| खण्ड सं॰ तथा वर्ष | बिल संख्या तथा दिनाक | वार्षिक शुल्क | वाउचर संख्या तथा दिनांक | स्मरण पत्र भेजने की तिथि | जिल्दबंद हेतु | विशेष |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | | | | | | |

**4. रंगनाथन की त्रिपत्रक प्रणाली -** पत्र-पत्रिकाओ के नियन्त्रण रखने एवं लेखा जोखा रखने के लिए डॉ॰ एस॰ आर॰ रंगनाथन ने मद्रास विश्वविद्यालय में 1930 में इस प्रणाली की रचना की। यह प्रणाली अन्य प्रणालियों की अपेक्षा अधिक उपयोगी सिद्ध हुई। इसके द्वारा पुस्तकालय में पत्र-पत्रिकाओं की संख्या चाहे कितनी भी हो, कार्य सरलता एवं सुगमतापूर्वक किया जा सकता है। इस प्रणाली में 5×3 सेमी के तीन पत्रक उपयोग में लाये जाते हैं और इसी कारण इसे त्रिपत्रक प्रणाली कहा जाता है, जो निम्नलिखित हैं:-

(i) पंजीयन पत्रक

(ii) जांच पत्रक

(iii) वर्गीकृत सूची पत्रक

**(i) पंजीयन पत्रक**

पंजीयन पत्रक का उपयोग क्रय की जाने वाली पत्र-पत्रिकाओं से सम्बन्धित समस्त जानकारी को लिखने हेतु किया जाता है। इसमें आख्या, प्रकाशक, अभिकर्ता, आवृत्ति, वार्षिक मूल्य भुगतान बिल व दिनांक, अंकों की प्राप्ति दिनांक आदि अंकित होता है। इसको देखने से यह जानकारी हो जाती है कि पुस्तकालय में कौन-कौन सी पत्र-पत्रिकायें क्रय की जा रही है। पंजीयन पत्रक को पत्र-पत्रिकाओं के आख्या अनुवर्णक्रम में दराजों में व्यवस्थित किया जाताहै। पंजीयन पत्रक का प्रारूप इस प्रकार का होता है।



HMDC-019

| आख्याः विक्रेता | | | भुगतान खण्ड वर्ष | वाऊचर क्रमांक और दिनांक | |
|---|---|---|---|---|---|
| क्रमांक अंक | | | वार्षिक अभिदान आवधिकता | आदेश क्रमांक एवं दिनांक | |
| खण्ड एवं अंक | प्रकाशन दिनांक | प्राप्ति दिनांक | खण्ड एवं अंक | प्रकाशन दिनांक | प्राप्ति दिनांक |
| | | | | | |

## ( ii ) जाँच पत्रक

यह पत्रक त्रिपत्रक प्रणाली का आधार पत्रक होता है क्योंकि इसी के माध्यम से किसी भी अंक की प्राप्ति पर नियन्त्रण रखा जाता है। इस कार्य की जाँच को इस पत्रक के माध्यम से बहुत सीमा तक स्वचालित कर दिया है और समय पर अप्राप्त अंकों हेतु स्मरण पत्र भेज दिया जाता है। इन पत्रकों की व्यवस्था दराजों में विशेष प्रकार से की जाती है। इस पत्रक द्वारा जाँच को स्वचालित करने हेतु पूरे वर्ष को 60 सप्ताह में विभक्त कर दिया जाता है एवं 60 निर्देश पत्रक तैयार कर लिये जाते हैं। यह कार्य अधिकतम शनिवार को आधार मानते हुये किया जाता है। इसके अनुसार प्रत्येक माह में पांच सप्ताह हो जाते हैं।

जनवरी माह के लिए पाँचों सप्ताह इस प्रकार प्रदर्शित किये जायेंगे 1.1, 1.2, 1.3, 1.4,1.5। जांच पत्रक प्रत्येक पत्र-पत्रिका के लिये जो पुस्तकालय में प्राप्त की जा रही है, निर्मित कर लेते हैं और जांच पत्रकों को दराजों में निर्देश पत्रक के पीछे वर्णक्रम में व्यवस्थित कर देते हैं। जांच पत्रक को उस सप्ताह के निर्देश पत्रक के पीछे निर्देशित कर देते हैं जो कि पत्र-पत्रिका का अगला प्राप्त होने वाला अंक है। जब पत्र-पत्रिका का अंक प्राप्त होता है तो उससे सम्बन्धित जांच पत्रक को बाहर निकाला जाता है और प्राप्ति की सूचना भरकर आने वाले समय के उस सप्ताह निर्देश पत्रक के पीछे व्यवस्थित कर दिया जाता है। जाँच पत्रक का प्रारूप इस प्रकार होता है।

| आख्या | | | | | आवधिकता |
|---|---|---|---|---|---|
| खण्ज एवं अंक | स्मरण पत्र दिनांक | हस्ताक्षर | खण्ड एवं अंक | स्मरण पत्र दिनांक | हस्ताक्षर |
| | | | | | |

## ( iii ) वर्गीकृत सूची पत्रक


NMDC-019

यह पत्रक हमें जानकारी देता है कि पुस्तकालय में किसी सावधिक प्रकाशन के विषय में अन्य सावधिक प्रकाशनों के कौन-कौन से खण्ड (पूरक अंक एवं अनुक्रमणिका अंक) उपलब्ध हैं। इन पत्रकों को अनुवर्ग क्रम में व्यवस्थित करते हैं ताकि एक विषय से सम्बन्धित सभी पत्र-पत्रिकाओं की जानकारी एक स्थान पर प्राप्त हो जाय। इस वर्गीकृत सूचीपत्रक का प्रारूप निम्न प्रकार का होता है :

क्रमांक अंक ..........................वार्षिक चन्दा

आख्या .................................

विक्रेता .................................

प्रकाशक ................................

उपलब्ध खण्ड ........................

अनुक्रमणिकायें ........................

पूरक इत्यादि............................

## 5. कार्डेक्स प्रणाली

ग्रन्थालयों में सामयिक प्रकाशनों का विधिवत अभिलेख रखने के लिए रेमिंगटन रेण्ड इंडिया ने एक उपकरण बनाया जिसे कम्पनी ने कार्डेक्स नाम दिया है। इस उपकरण का आकार केबिनेट की भाँति होता है और इसमें 16 संचिकाएं होती हैं तथा प्रत्येक संचिका में 64 सामयिक प्रकाशनों की भाँति होता है और इसमें 16 संचिकाएं होती हैं तथा प्रत्येक संचिका 64 सामयिक प्रकाशनों से सम्बन्धित अभिलेख रखा जा सकता है। इस प्रकार एक केबिनेट में लगभग 1000 सामयिकी प्रकाशनों का अभिलेख रखने की सुविधा होती है। प्रत्येक संचिका तथा केबिनेट को ताला भी लगाया जा सकता है। जिससे अभिलेख सुरक्षित रहते हैं।

इस विधि में प्रत्येक सामयिक प्रकाशन के लिए दो पत्रक बनाये जाते हैं। जिन्हें तल-पत्रक तथा शिखर-पत्रक कहते हैं। इन पत्रकों को मुद्रित करने का कार्य भी कम्पनी करती है। इन पत्रकों का आकार लगभग 15 सेमी × 10 सेमी॰ होता है जिनका प्रारूप निम्न प्रकार का होता है।

**तल-पत्रक**

| पत्रिका का नाम ........................................................................................................................ | | | | | | | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| वर्ष | खण्ड | जन. | फर. | मार्च | अप्रै. | मई | जून | जुला. | अग. | सित. | अक्टू. | नव. | दिस. | सूची/अनुक्रम |
| 1991 | | | | | | | | | | | | | | |
| 1992 | | | | | | | | | | | | | | |
| 1993 | | | | | | | | | | | | | | |
| 1994 | | | | | | | | | | | | | | |
| 1995 | | | | | | | | | | | | | | |
| 1996 | | | | | | | | | | | | | | |

आवृत्ति .......................................... चालू खण्ड ..............................................उपलब्ध
जिल्दबंदी का प्रकार ................................ग्रन्थालय में उपलब्ध..................................अनुपलब्ध

आख्या।

**शिखर पत्रक**

आख्या .......................................................क्रामक अंक ..................................................
प्रकाशक ..........................................................................................................................

| वर्ष | आवृति | खण्ड | अंक | दिनांक | प्राप्तिदिनांक | स्मरण-पत्र भेजने की तिथि |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | | | | | | |

किसी भी सामयिक प्रकाशन के आदेश देते समय प्रकाशन हेतु तल पत्रक तैयार कर लिया जाता है तथा उस पर सम्बन्धित आख्या एवं अन्य विवरण लिख दिया जाता है। भविष्य में जब-जब सामयिक प्रकाशन प्राप्त होते हैं। वैसे-वैसे अन्य सूचनाएँ इस पर अंकित कर दी जाती है। इस विधि में शिखर पत्रक का उपयोग सावधिक प्रकाशन के भुगतान करने तथा स्मरण-पत्रक भेजने के लिए किया जाता है तथा भुगतान एवं स्मरण-पत्र से सम्बन्धित विभिन्न अभिलेख इसमें रखे जाते हैं।

## 8.4.2 सावधिक प्रकाशनों का प्रदर्शन तथा निधानन

पुस्तकालयों में सामयिकी प्रकाशनों के प्रदर्शन तथा निधानन हेतु विशेष प्रकार के फर्नीचर की आवश्कता होती है छोटे पुस्तकालयों में जहाँ धन का अभाव होता है वहाँ पर सामयिक प्रकाशनों का प्रदर्शन अध्ययन मेजों अथवा प्लास्टिक के आवरणयुक्त एक कवर तैयार करा लिया जाता है और उन पर ही सामयिकी प्रकाशनों का प्रदर्शन किया जाता है। बड़े पुस्तकालयों में एक विशेष प्रकार के रैक वाला अलमीरा प्रयोग की जाती है। इसमें एक रैक में ऊपर की ओर एक ट्रे नुमा बोर्ड लगा रहता है तथा दूसरा सीधा होता है पहले पर नवीनतम अंक को आख्या के अनुसार आनुवर्णिक क्रम या विषय के

अनुसार आनुवर्णिक क्रम में प्रदर्शित किया जाता है। इस खण्ड का पीछे वाला अंक उसके नीचे जो सीधा रैक होता है, उस पर रखा जाता है। प्रत्येक सामयिक प्रकाशन हेतु निर्धारित स्थान पर नाम लिख देने से पत्रिका को खोजने तथा रखने में काफी सहायता मिलती है।

### 8.4.3 सावधिक प्रकाशनों का आदान प्रदान

पुस्तकालय पत्र-पत्रिकाओं के परिसंरचण में एक मत नहीं है। अधिकांशतः पुस्तकालय पत्र-पत्रिकाओं के आदान-प्रदान के पक्ष में नहीं है, क्योंकि यह काफी महंगे होते हैं एवं पुस्तकालयों में इनकी एक ही प्रति आती है। इन पत्र-पत्रिकाओं का आदान-प्रदान शुरू कर देने पर पुस्तकालय मे नियमित आने वाले पाठकों को यह समय पर नहीं मिल पायेंगे। विशिष्ट पुस्तकालयों में शोधकर्ताओं को पत्र-पत्रिकाओं का आदान-प्रदान अवश्य किया जाना चाहिए जिससे वैज्ञानिकों के अमूल्य समय को नष्ट होने से बचाया जा सकता है।

### 8.4.4 सावधिक प्रकाशनों की जिल्दबंदी परिग्रहण, वर्गीकरण तथा सूचीकरण

पुस्तकालयों में सामयिकी प्रकाशनों का आदेश करने के साथ ही यह निर्णय किया जाता है कौन से प्रकाशन क्रय करने हैं तथा उनके पुराने खण्ड क्रय किये जायें अथवा नहीं। क्योंकि सामयिकी प्रकाशन सीमित संख्या में प्रकाशित होते हैं। जब खण्ड पूर्ण हो जाता है तब उसकी जिल्दबंदी कराई जाती है। सामयिक जिल्दबंदी के बाद पुस्तकालय में पुस्तक की तरह हो जाते हैं तब इनका परिग्रहण पुस्तकों की तरह कर दिया जाता है तथा पुस्तकों की तरह ही इनका वर्गीकरण एवं सूचीकरण भी कर दिया जाता है।

## 8.5 सारांश

किसी भी पुस्तकालय में सावधिक प्रकाशनों का महत्वपूर्ण स्थान होता है किन्तु इनमें संग्रह के अन्य प्रलेखों के भिन्न अनेक विशिष्टताएँ होती हैं। अतः इसके अधिग्रहण में विशेष समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। इस कारण से बड़े पुस्तकलायों में सामयिकियों के अधिकग्रहण हेतु एक अलग विभाग होता है।

सावधिक विभाग में सावधिकियों का चयन, अर्जन और रजिस्ट्रेशन प्रमुख गतिविधियाँ होती हैं। इनमें से प्रत्येक गतिविधि के लिए सावधानीपूर्वक योजना बनाना एवं उनका सुनियोजित परिचालन करना आवश्यक होता है। इस इकाई में सावधिक प्रकाशन क्या है? और इनकी विशेषताएँ क्या हैं? इस पर प्रकाश डालते हुए इनकी चयन प्रक्रिया का वर्णन किया गया है। इसी इकाई में आपने इनके अर्जन एवं रख-रखाव सम्बन्धी सम्पूर्ण प्रक्रियाओं की जानकारी अर्जित की है। इस इकाई में आपने इनके अर्जन

HMDC-019

एवं रख-रखाव सम्बन्धी सम्पूर्ण प्रक्रियाओं की जानकारी अर्जित की है। इस इकाई के अध्ययनोपरान्त अब आपको सावधिक प्रकाशनों के पुस्तकालयों में प्रबन्ध सम्बन्धी समस्त गतिविधियों की जानकारी हो गयी है।

## 8.6 अभ्यास हेतु प्रश्न

1. सावधिक प्रकाशन किसे कहते हैं और इनकी क्या विशेषताएँ हैं?
2. सावधिक प्रकाशनों की चयन प्रक्रिया पर प्रकाश डालिए।
3. सावधिक प्रकाशनों के अर्जन की विधियों की चर्चा कीजिए।
4. रंगनाथन की त्रिपत्रक प्रणाली का वर्णन कीजिए।
5. कार्डेक्स प्रणाली कैसे कार्य करती है।

## 8.7 संदर्भ पाठ्य सामग्री


1. Mittal, R. L. Libirary Administration, Mteropolitian, New Delhi, 197.
2. मिश्रा, प्रसिद्ध कुमार एवं राकेश नैम, पुस्तकालय प्रबन्ध, रजत प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008
3. सिंह, आर॰ के॰ एवं सेंगर सुनीता, पुस्तकालय प्रबन्धन, युनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2007।
4. शर्मा, प्रहलाद, पुस्तकालय प्रबन्ध, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, जयपुर
5. त्रिपाठी, एस. एस. ग्रन्थालय प्रबन्ध, वाई. के. पब्लिसर्स, आगरा
6. सिंह, एम. पी. पुस्तकालयों एवं सूचना केन्द्रों का प्रबन्ध, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2008
7. अंसारी, एम. एम. पुस्तकालय संगठन एवं प्रबन्धन, कला प्रकाशन, वाराणसी, 2001।

|| सरस्वती नः सुभगा मयस्करत् ||

उत्तर प्रदेश

राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

प्रयागराज

# BLIS-102

# पुस्तकालय प्रबन्धन

खण्ड

# 3

# पुस्तकालय का उपयोग एवं रख-रखाव


इकाई -9

निर्गम-आगम कार्य 197

इकाई -10

पुस्तक एवं सूचना स्त्रोतों का परिरक्षण एवं संरक्षण 212

इकाई -11

पुस्तकालय के प्रमुख अभिलेख तथा वार्षिक प्रतिवेदन 218

इकाई -12

वार्षिक सत्यापन : पुस्तकालय संग्रह का भौतिक सत्यापन 231

## विशेषज्ञ समिति - पाठ्यक्रम अभिकल्पन

| | |
|---|---|
| **डॉ0 पाण्डेय एस0 के0 शर्मा** | अवकाश प्राप्त मुख्य ग्रंथालयी, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली, |
| **डॉ0 ए0 पी0 गक्खर** | विश्वविद्यालय ग्रंथालयी, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इला0 |
| **डॉ0 यू0 सी0 शर्मा** | एसोसियेट प्रो0 एवं विभागाध्यक्ष, बी0आर0 अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा |
| **डॉ0 सोनल सिंह** | एसोसिएट प्रोफेसर, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन |
| **डॉ0 ए0 पी0 सिंह** | एसोसिएट प्रोफेसर, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी |
| **डॉ0संजीव सर्राफ** | उपपुस्तकालयाध्यक्ष, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी |
| **डॉ0 टी0एन0 दुबे** (सदस्य सचिव) | विश्वविद्यालय ग्रंथालयी, उ0प्र0रा0ट0 मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद |

## सम्पादक मण्डल

| | |
|---|---|
| **डॉ0 टी0 एन0 दुबे** | विश्वविद्यालय ग्रंथालयी, उ0 प्र0 रा0ट0 मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद |
| **श्री आर0 जे0 मौर्य** | सहायक ग्रन्थालयी, उ0 प्र0 रा0ट0 मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद |
| **श्री राजेश गौतम** | प्रवक्ता, पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान विभाग, उ0 प्र0 रा0ट0 मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद |

## लेखक

| | |
|---|---|
| **डॉ0 एच0 के0 चक्रवर्ती** | एसोसिएट प्रोफेसर, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी |

## परिमापक

| | |
|---|---|
| **डॉ0 वेदानन्द त्रिपाठी** | ग्रन्थालयी, नारायण पी0 जी0 कालेज, शिकोहाबाद, (उ0प्र0) |

प्रस्तुत पाठ्य सामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के स्वयं के हैं।

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, **प्रयागराज**

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य-सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

# खण्ड परिचय : पुस्तकालय का उपयोग एवं रख-रखाव

प्राचीन काल में पाठ्य सामग्रियाँ हस्तलिखित होती थी, जो संख्या में बहुत कम होने के कारण अत्यन्त दुर्लभ एवं संरक्षण के लिए हुआ करती थी, तथा व्यक्ति विशेष को ही उपयोग का अधिकार प्राप्त था। परन्तु युग परिवर्तन के साथ प्रिन्टिंग प्रेस के प्रार्दुभाव से बहुतायत में पाठ्य सामग्रियाँ उपलब्ध होने लगी, जिससे पुस्तकालय में पाठ्य सामग्रियों के अधिकतम उपयोगिता का विचार उत्पन्न होने लगा। पुस्तकालयों में पाठ्य सामग्रियों की उपयोगिता में वृद्धि करने हेतु निर्गम-आगम पद्धतियों का प्रार्दुभाव हुआ। पाठक को पुस्तकालय से सामग्रियाँ बाहर ले जाने की अनुमति प्रदान करने की प्रक्रिया को निर्गम तथा वापस लौटाने की प्रक्रिया को आगम कहा जाता है। इस प्रक्रिया को संचालित करने के लिए विभिन्न प्रकार की पद्धतियों का उपयोग किया जाता है। जिसमें ब्राउने निर्गम आगम पद्धति एवं न्यूआर्क निर्मम-आगम पद्धति प्रमुख है। खण्ड में इन पद्धतियों द्वारा पाठकों को पाठ्य सामग्रियाँ उपयोगार्थ उपलब्ध कराने की प्रक्रियाओं का विस्तृत में उल्लेख करते हुए उनसे होने वाले लाभ-हानि को अभिव्यक्त किया गया है तथा साथ ही उन प्रक्रियाओं में प्रयुक्त उपकरणों तथा कार्यरत कर्मचारियों की योग्यता का भी उल्लेख किया गया है।

पुस्तकालय में संग्रहित पाठ्य सामग्रियों के अधिकाधिक उपयोग से उसका क्षरण भी अवश्यम्भावी है। धूल, पानी, हवा, कीड़े-मकोड़े आदि भी संग्रहों को हानि पहुँचाते हैं। अतः इसके बचाव के लिए परिरक्षण तथा संरक्षण हेतु समय-समय पर साफ-सफाई तथा विभिन्न रासायनिक पदार्थों का निरन्तर उपयोग किया जाता है। कम्प्यूटर युग में हस्तलिखित पाठ्य सामग्रियों को डिजिटल फार्म में संरक्षित करने के लिए कम्प्यूटर डिजिटल कैमरा तथा स्कैनर आदि का भी प्रयोग किया जाता है।

खण्ड में पुस्तकालय को सुचारू रूप से व्यवस्थित तथा संचालित करने के लिए उपयोग में आने वाले प्रमुख अभिलेखों तथा उपकरणों जैसे- परिग्रहण पंजी, प्रसूचियाँ, प्राविधिक अभिलेख, सेवा अभिलेख, निर्गम-आगम अभिलेख, पाठकों का अभिलेख, आगन्तुकों का अभिलेख, प्रशासनिक अभिलेख, डिस्पैच रजिस्टर, जिल्दसाजी अभिलेख, स्टेशनरी अभिलेख, पुस्तकालय नीतियों का अभिलेख एवं प्रत्याहरण का अभिलेख तथा पुस्तकालय हस्तपुस्तिका आदि के बारे में विस्तृत जानकारी प्रदान की गई है। साथ ही

NMDC-019

पुस्तकालय के वार्षिक प्रतिवेदन की व्याख्या करते हुए उसके तत्वों को उल्लिखित किया गया है।

पुस्तकालय के पाठ्य संग्रहों का निरन्तर उपयोग होने से उनके भौतिक सत्यापन की भी आवश्यकता होती है। इससे उसके जीर्ण-शीर्ण या गुम हो जाने के बारे में पता लगाया जा सकता है। सत्यापन से पुस्तकालय कर्मचारी पाठ्य संग्रहों की स्थिति से भली-भाँति अवगत रहते हैं तथा उनके उपयोगिता की भी जानकारी होती है। इस कार्य के लिए खण्ड में विभिन्न प्रचलित विधियों का उल्लेख किया गया है तथा सत्यापन के उपरान्त रिपोर्ट तैयार करने एवं कार्यवाही की जानकारी प्रदान की गई है।

उक्त खण्ड को चार इकाइयों में विभक्त कर उपरोक्त के बारे में विस्तृत सूचनाएं उपलब्ध कराई गई हैं जो छात्रों के पाठ्य सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सहायक सिद्ध होंगी। अभ्यास प्रश्नों के माध्यम से परीक्षा तैयारी में सुविधा मिलेगी तथा पाठ्य सामग्रियों से सम्बन्धित दिये गये ग्रन्थों के अध्ययन से ज्ञानवर्धन भी होगा।

# इकाई -9 : निर्गम-आगम कार्य (Circulation work)

## इकाई की रूपरेखा

9.1 प्रस्तावना

9.2 निर्गम-आगम विभाग के कार्य

9.3 निर्गम-आगम विभाग के कर्मचारियों की योग्यता

9.4 आदर्श निर्गम-आगम प्रणाली के गुण

9.5 आधुनिक निर्गम एवं आगम की विधियाँ

9.5.1 रजिस्टर विधि

9.5.2 ब्राउन निर्गम विधि

9.5.3 न्यूआर्क निर्गम विधि

9.5.4 कम्प्यूटरीकृत आगम-निर्गम प्रक्रिया

9.6 निर्गम-आगम विभाग का महत्व

9.7 निर्गम पद्धति और सामान्य शर्तें

9.8 पाठकों के कर्तव्य

9.9 सारांश

9.10 अभ्यास कार्य

9.11 उपयोगी पुस्तकें

## 9.1 प्रस्तावना

ग्रन्थालयों में पाठ्य सामग्रियों का संकलन उपयोग के लिये किया जाता है। प्राचीन काल में पुस्तकों /ग्रन्थों को पुस्तकालय में ही अध्ययन के लिए सीमित व्यक्तियों हेतु ही उपलब्ध कराया जाता था लेकिन आधुनिक समय में पुस्तकालयीन सेवाएँ सभी के लिए उपलब्ध कराई जा रही हैं। इसलिए आदान-प्रदान विभाग अर्थात निर्गम-आगम विभाग की आवश्यकता महसूस की गई।

पुस्तकालय की उपयोगिता पुस्तकों के आदान-प्रदान पर निर्भर करती है। कोई भी पुस्तकालय समस्त पाठकों के बैठने की व्यवस्था नहीं कर सकता है और न ही पाठकों के पास समय होता है कि वह पुस्तकों का अध्ययन पुस्तकालयीन समय में वहीं बैठकर करें। इसलिए प्रत्येक पुस्तकालय में एक आदान-प्रदान विभाग होता है जिसका कार्य



HMDC-019

पाठकों के लिए उनकी सुविधानुसार अध्ययन हेतु पठन सामग्री निर्गत करना होता है।

पुस्तक प्रदान करने की प्रक्रिया को निर्गम अथवा आदान करना कहते हैं और पुस्तकों को लौटाने की प्रक्रिया आगम अथवा प्रदान कहते हैं। इस आगम-निर्गम प्रक्रिया के लिए अलग-अलग पुस्तकालयों में विभिन्न प्रकार की विधियाँ प्रयोग में लायी जाती हैं जिनका वर्णन आगे है।

## 9.2 निर्गम-आगम विभाग के कार्य

अध्ययन सामग्री के उचित उपयोग न होने पर सभी प्रक्रियाएं अर्थहीन हो जाती हैं। ऐसी स्थिति में वह पुस्तकालय न होकर पुस्तकों का शोरूम अथवा स्टोर मात्र ही रह जायेगा। वास्तव में संग्रहीत सामग्री के अधिक उपयोग पर ही पुस्तकालय की सफलता और लोकप्रियता निर्भर करती है। यही कारण है कि इस विभाग में कार्यरत कर्मचारी को कर्तव्यनिष्ठ, सद्चरित्र, व्यवहार कुशल और मृदुभाषी होना परमावश्यक है। डॉ. रंगानाथन के शब्दों में - इस विभाग को यह ज्ञात होना चाहिए कि बिना दुखी हुए किस प्रकार दृढ़ हुआ जा सकता है तथा बिना बकवादी हुए किस प्रकार मित्रवत हुआ जा सकता है।

सामान्यतः इस विभाग में कार्यरत कर्मचारियों को निम्नलिखित कार्य करने पड़ते हैं -

1. पाठक का पंजीयन करना।
2. पाठकों को पाठक कार्ड प्रदान करना तथा खोये हुए पाठक कार्डों के स्थान पर नये पाठक कार्ड देना।
3. पुस्तक प्रदान करना अथवा निर्गम कार्य करना।
4. पुस्तकालय में प्रवेश और उसके बाहर जाने पर पाठक का निरीक्षण करना।
5. पुस्तक आगम कार्य करना।
6. विलम्ब दण्ड प्राप्त कर पुस्तकालय कोष में जमा करना तथा उसका समस्त लेखा रखना।
7. क्षतिग्रस्त एवं खोयी हुई पुस्तकों सम्बन्धी कार्य करना।
8. निर्गत पुस्तक का नवीनीकरण करना।


NMDC-019

9. देय तिथि पर पुस्तक वापस न आने पर उनके लिए स्मरण पत्र तैयार कर भेजना।

10. पुस्तकों का आरक्षण करना।

11. अन्तः पुस्तकालीय ऋण प्रदान (इन्टर लाइब्रेरी लोन) करना।

12. पुस्तकों के लिए पाठकों की मांग की जानकारी प्राप्त करना।

13. नई पुस्तकों के चयन हेतु पाठकों से सुझाव प्राप्त करना।

14. निर्गम-आगम सम्बन्धी आंकड़े तैयार करना।

15. पुस्तकों की उपयोगिता मालूम करना।

16. क्षतिग्रस्त (कटी हुई) पुस्तकों को जिल्द बंधवाने के लिए छाँटना और उन्हें जिल्द बंधवाने के लिए भेजना।

## 9.3 निर्गम-आगम विभाग के कर्मचारियों की योग्यता

पुस्तकालय में निर्गम-आगम विभाग बहुत ही महत्वपूर्ण है। अतः इस विभाग में कार्य करने वाले कर्मचारी ऐसे होने चाहिये जो पाठकों को पूर्ण रूप से सन्तुष्ट कर सकें। उनमें सेवाभाव होना आवश्यक है न कि वह स्वयं को अधिकारी समझे। उनमें कार्य करने की लगन (जिज्ञासा) का होना आवश्यक है। पाठकों कें प्रति सद्‌भाव और मधुर व्यवहार का होना भी आवश्यक है। विभाग में कार्य करने के लिए पर्याप्त संख्या में कर्मचारी होने चाहिए।

निर्गम-आगम विभाग में कार्य करने वाले कर्मचारियों में निम्नलिखित योग्यताएँ होना आवश्यक है -

1. पुस्तकालय के इस विभाग में कार्य करने वाले कर्मचारी में मननशक्ति तथा आत्म संयम होना चाहिये।

2. आवश्यकता पड़ने पर विवेक से काम करना चाहिए।

3. व्यवहार कुशल होना चाहिए।

4. पुस्तक जगत की अधिक से अधिक जानकारी होनी चाहिए। उनके लेखकों के नामों की जानकारी होने पर ही पाठकों की मांग को पूरा करने में समर्थ होगा तथा "प्रत्येक पुस्तक को उसका पाठक" सूत्र का पालन हो सकेगा।

5. यह विभाग पुस्तकालय का स्नायु केन्द्र होने के कारण विभागीय कर्मचारी पाठकों के सम्पर्क में आते हैं। अतः पूर्ण शैक्षणिक एवं व्यावसायिक योग्यता वाले कर्मचारी ही इस विभाग में कार्यरत होने चाहिए।

6. विभागीय कर्मचारियों में समय - समय पर उत्पन्न समस्याओं का समाधान अनुभव के आधार पर करने की क्षमता होनी चाहिए।

7. सद्भाव, स्नेह, मृदुभाषी आदि गुणों से युक्त कर्मचारी होने चाहिए।

8. ईमानदार और चरित्रवान कर्मचारी होने चाहिए।

## 9.4 आदर्श निर्गम-आगम प्रणाली के गुण

पुस्तकालय का उद्देश्य समस्त अध्ययन सामग्री का संग्रहण एवं संरक्षण ही नहीं अपितु अध्ययन सामग्री को अधिक से अधिक सरलता और सुगमतापूर्वक द्रुतगति से अपने पाठकों को उपलब्ध कराना होता है। साथ ही सही दशा में पुनः पुस्तकालय में वापस लेना भी होता है। पुस्तकालयों को अनेक निर्गम-आगम पद्धतियों में से किसी एक का चयन आवश्यक रूप से करना पड़ता है जिसे स्थानीय जरूरतों के अनुरूप आवश्यकतानुसार संशोधित एवं परिवर्तित कर अपनाया जाता है। आदर्श निर्गम-आगम प्रणाली में निम्नलिखित गुणों का होना आवश्यक है।

1. प्रणाली द्रुतगामी होनी चाहिये।
2. प्रणाली सरल होनी चाहिये।
3. प्रणाली मितव्ययी होनी चाहिए।
4. प्रणाली टिकाऊ होनी चाहिये।
5. प्रणाली स्थानीय आवश्यकता के अनुरूप होनी चाहिए अतः लचीली प्रणाली होनी चाहिए।
6. प्रणाली वैज्ञानिक होनी चाहिए।

आदर्श निर्गम-आगम प्रणाली वही है जिसमें कम समय में कार्य सम्पन्न हो जाये तथा आवश्यकता पड़ने पर वाँछित जानकारी भी प्रदान की जा सके। अतः पुस्तकालय में निर्गम-आगम प्रणाली को चुनते समय उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखकर निर्णय लेना चाहिये।


HMDC-019

## 9.5 आधुनिक निर्गम एवं आगम की विधियाँ

कौन सी प्रणाली किस ग्रन्थालय के लिए उपयुक्त एवं सुविधाजनक हो सकती हैं। यह ग्रन्थालय की प्रकृति, स्तर तथा परिस्थितियों एवं ग्रन्थालयी की सुविधा आदि पर निर्भर करता है। निर्गम-आगम की प्रचलित प्रमुख विधियाँ निम्न हैं -

(1) रजिस्टर विधि (Register System)

(2) पत्रक विधियाँ (Card System)

### 9.5.1 रजिस्टर विधि

छोटे तथा मध्यम श्रेणी के पुस्तकालयों में पुस्तकों के आदान प्रदान हेतु रजिस्टर विधि अपनाई जाती है। इसमें एक पृष्ठों की संख्या सहित एक रजिस्टर होता है जिसमें तिथि (date), परिग्रहण संख्या, (accession Number), पुस्तक के लेखकों का नाम (Author), पुस्तकों की आख्या (Title of the Book),पाठक का हस्ताक्षर (Signature of Borrower), प्राप्ति की तिथि तथा प्राप्त करने वाले सहायक के हस्ताक्षर के खाने होते हैं। प्रत्येक पाठक के लिए कुछ निश्चित पृष्ठ निर्धारित कर दिये जाते है। पाठकों के पृष्ठों के संकेत के लिए एक अनुक्रमणी तैयार कर ली जाती है। कार्य की शिथिलता के कारण अब इसका प्रचलन कम हो गया है।

**पत्रक विधियाँ**

इस विधि में प्रत्येक पुस्तक के लिए बुक कार्ड बनाते हैं तथा पाठक को भी उनकी योग्यतानुसार पुस्तकें निर्गत करने की संख्या के अनुरूप कार्ड उपलब्ध कराए जाते हैं। कार्ड सिस्टम की अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर ब्राउन निर्गम प्रणाली तथा न्यूयार्क निर्गम प्रणाली प्रचलित है जिन्हें भारत के अनेक विश्वविद्यालयीय पुस्तकालयों में आगम-निर्गम हेतु उपयोग किया जा रहा है। इस विधि में निम्नांकित विधियाँ प्रचलित है।

(अ) ब्राउन निर्गम प्रणाली (Browne's Issue System)

(ब) न्यूआर्क निर्गम प्रणाली (Newark Charging System)

### 9.5.2 ब्राउन निर्गम विधि

इस विधि का अविष्कार अमेरिका के बोस्टन नगर के लाइब्रेरी ब्यूरो के लाइब्रेरियन नीना ई. ब्राऊन ने किया था। अतः उन्हीं के नाम पर इस विधि को ब्राऊन



HMDC-019

निर्गम विधि कहा जाता है। इसका उपयोग भारत के अनेक विश्वविद्यालयीय पुस्तकालयों में किया जा रहा है। इस विधि के उपयोग हेतु सर्वप्रथम पुस्तकालयों में पाठकों का पंजीकरण किया जाता है और पाठकों को पुस्तकालय के नियमानुसार निश्चित संख्या में पाठक टिकट (रीडर्स टिकट) उपलब्ध करा दिये जाते हैं जो कि पाकेटनुमा होते हैं और इन टिकटों पर भी पाठक की गृहीता संख्या, नाम आदि की जानकारी रहती है।

**प्रयुक्त सामग्री (Material used)** - ब्राऊन निर्गम प्रणाली में गृहीता (Borrower) को एक या दो या कुछ निशिचत संख्या में पाठक टिकट (Reader's Ticket) प्रदान किये जाते हैं। जो आकार में पत्रक (Card) की अपेक्षा लिफाफे अथवा पाकेट की भाँति होते हैं जिसके ऊपर पाठक का विवरण, ग्रन्थालय का नाम, टिकट की संख्या, पाठक का नाम, अवधि-तिथि (Date of Expiry), पाठक का पता तथा ग्रन्थालयी के हस्ताक्षर आदि मुद्रित होते हैं। जो पाठक के लिए परिचय पत्र का कार्य करते हैं टिकट के पीछे कुछ नियमावली भी मुद्रित होती है, जो पुस्तकों के निर्गम तथा आगम से सम्बन्धित होती हैं।

पाठक ग्रहीता पत्रक (Reader's Ticket)(पॉकेटनुमा)

परिग्रहण संख्या

सत्र 2010-11

नाम ......................

कक्षा .....................

पता ......................

............................

केन्द्रीय ग्रन्थालय, वाराणसी

अहस्तांतरणीय

(Non Transferable)

**पुस्तक पत्रक (Book card)** - प्रत्येक पुस्तक का एक पुस्तक पत्रक होता है। जिसमें ग्रन्थालय का नाम, पुस्तक की आख्या, लेखक का नाम, क्रामक संख्या (Call

Number), परिग्रहण संख्या (accession number), तथा नीचे की तरफ तिथि के खाने मुद्रित होते हैं। इन पत्रकों को पुस्तक के अन्त में चिपकाये गये पुस्तक पाकेट में रखा जाता है। किन्हीं-किन्हीं ग्रन्थालयों में ग्रन्थ पाकेट तथा तिथि चिट पुस्तक के अन्त में अथवा पुस्तक के आमुख पृष्ठ के पहले चिपकाया जाता है। पुस्तक के पाकेट पर कुछ नियमावली संकेत वापस करने तथा पुस्तकों को रखने से सम्बन्धित मुद्रित होते हैं जो पाठकों के निर्देश के लिए होते हैं।

पुस्तक पत्रक (Book Card)

| | |
|---|---|
| परिग्रहण संख्या | 12345 |
| कॉल नं० | 2 : 55 NSS |
| लेखक का नाम | शर्मा, विवेक कुमार |
| पुस्तक आख्या | पुस्तकालय सूचीकरण |

**पाठक पंजीकरण विधि (Registration Method of Reader)**- सार्वजनिक अथवा शैक्षिक ग्रन्थालयों में, जो व्यक्ति पाठक के रूप में सदस्य बनना चाहता है उसे सदस्यता पत्र भरकर पंजीकरण के लिए आवेदन करना पड़ता है। जिसमें पाठक का पूरा विवरण पते के साथ होता है। पंजीकरण करने के पश्चात उसे नियमानुसार पाठक टिकट (Reader's Ticket) जितने पुस्तकों को प्राप्त करने का नियम होता, उतने टिकट, जो पाकेटनुमा होता है, प्रदान कर दिया जाता है। जिसके आधार पर उसे पुस्तक प्रदान की जाती है। इस टिकट को गृहीता पत्रक (Borrower's card)भी कहते हैं।

**पुस्तकों के निर्गम प्रक्रिया** - जिन ग्रन्थालयों में मुक्त प्रवेश (Open Access) व्यवस्था है, वहाँ पाठक स्वयं ग्रन्थागार (Stacks) में जाकर अपनी आवश्यकता और अभिरूचि की पुस्तकें निकाल लेते हैं और निर्गम काउन्टर (Issue Counter)पर जाकर अपने पाठक टिकट के साथ निर्गम सहायक (Circulation or Counter Assistant) को प्रस्तुत करते हैं और निर्गम सहायक उनकी पहचान कर लेने के बाद पुस्तक उन्हें प्रदान कर देता है और उनका पाठक टिकट ले लेता है। पुस्तक को लौटाने की तिथि

HMDC-019

पुस्तक में लगी 'ड्यूडेट स्लिप' (Due date slip) पर अंकित कर देता है। जिससे पाठक को वापसी की तिथि याद रहे। पुस्तक प्रदान करने के पश्चात पाठक टिकट को पुस्तक पत्रक के साथ निर्गम पात्रक (Tray) में पुस्तक के परिग्रहण संख्या अथवा क्रामक संख्या (Call Number) के क्रमानुसार आकलित कर लेते हैं। कहीं कहीं पर सभी प्रदान की गयी पुस्तकों को एक साथ मिलाकर इनमें से किसी अनुक्रमानुसार तिथि के क्रम अथवा लौटाई जाने वाली तिथि के अनुसार आकलित करने की प्रथा प्रचलित है।

**आगम प्रक्रिया (Discharging Procedure)** - जब पुस्तक रखने की अवधि समाप्त हो जाती है अथवा जब पाठक को पुस्तक लौटाना होता है तो वह आगम काउन्टर पर जाकर पुस्तक को लौटाने के लिए प्रस्तुत करता है और काउन्टर सहायक पुस्तक के प्रदान करने की तिथि अथवा उसकी क्रामक संख्या (Call Number) अथवा परिग्रहण संख्या (Accession number) जिसके अनुसार निर्गम पत्रक में पाठक टिकट के साथ लगे हुए पुस्तक पत्र व्यवस्थित रखा गया है, को निकाल लेता है। पुस्तक पत्र को पुस्तक पाकेट में रख देता है और पाठक टिकट को गृहीता (Borrower) को लौटा देता है। पुस्तक के तिथि पत्र (Due date slip) पर लौटाने की तिथि अंकित कर देता है। गृहीता को उसका पाठक टिकट मिल जाना, इसका सूचक है कि उस पर उस पुस्तक के लौटाने का अब कोई दायित्व नहीं है। कहीं-कहीं पर पुस्तकों के निर्गम तथा आगम के लिए पृथक-पृथक काउन्टर होते हैं और कहीं-कहीं पर एक ही काउन्टर होता है। यह पाठकों की संख्या तथा ग्रन्थालय के स्टाफ व्यवस्था पर निर्भर करता है। विलम्ब से पुस्तकों को लौटाने पर उसका दण्ड शुल्क तुरन्त लिख लिया जाता है अथवा उसे पाठक से तुरन्त वहीं वसूल कर लिया जाता है।

### 9.5.2.1 ब्राउन निर्गम विधि की विशेषताएँ

इस विधि का अनुसरण करने से निम्नांकित सुविधाएँ होती हैं -

1. पुस्तकों का निर्गम एवं आगम इतना सरल है कि इसे कोई भी सम्पन्न कर सकता है, तथा इसमें कम से कम समय लगता है क्योंकि प्रदत्त पुस्तक के विवरण का कोई अभिलेख अलग से नहीं रखना पड़ता है।

2. तिथि चिट पर केवल एक ही तिथि डालनी पड़ती है अतः पुस्तकों को शीघ्रतापूर्वक प्रदान किया जा सकता है। इस विधि से लगभग 300 पुस्तकें प्रति घण्टे में निर्गप की जा सकती है।


HMDC-019

3. बड़ी ही आसानी से कौन सी पुस्तक किसको प्रदान की गयी है और उसके लौटाने की कौन सी तिथि है, को निश्चित किया जा सकता है। आवश्यकता पड़ने पर पुस्तकों को वापस मंगवाने में सरलता होती है।

4. पुस्तकों का आरक्षण सरलतापूर्वक किया जा सकता है।

5. किसी पाठक के गृहीता पत्रक (Borrower's card) का ग्रन्थालय में होना, यह स्वतः संकेत करता है कि वह पुस्तक विशेष उस पाठक के पास है जिसका दायित्व उस पाठक का है।

6. पाठक का हस्ताक्षर कहीं भी नहीं लिया जाता है। केवल पाठक का टिकट होना ही पुस्तक के प्रदान किये जाने का प्रमाण होता है।

7. विलम्ब से लौटायी जाने वाली पुस्तक का शुल्क आसानी से निश्चित किया जा सकता है।

8. विषयानुसार प्रदत्त पुस्तकों का सांख्यिकीय विवरण सरलतापूर्वक कम से कम समय में तैयार किया जा सकता है और प्रतिदिन कितनी पुस्तकें, किस विषय की पुस्तकें अधिक प्रदान की जाती है, की गणना आसानी से की जा सकती है।

## 9.5.2.2 ब्राउन विधि की कमियाँ

1. कभी-कभी टिकट को पुस्तक पत्रक के साथ किसी प्रकार की भूल के कारण पात्रक (Tray) में गलत स्थान पर लगा देने से उसे खोजने में कठिनाई उत्पन्न होने लगती है। कभी-कभी किसी दूसरी पुस्तक का पत्रक भूल से किसी अन्य पाठक टिकट के साथ लगा देने से भी कठिनाई उत्पन्न हो जाती है।

2. किसी पाठक विशेष ने कितनी पुस्तकों का उपयोग किया है, निश्चित करना कठिन हो जाता हैं ।

3. निर्गम पात्रक (Charging Tray) में स्थानाभाव के कारण स्थान की समस्या उत्पन्न होने लगती है। क्योंकि पात्रक के लिए अधिक स्थान की आवश्यकता पड़ती है। अतः इससे भी कठिनाई उत्पन्न होने लगती है।

4. पाठक को तब तक दूसरी पुस्तक प्रदान नहीं की जा सकती जब तक कि वे प्रदत्त पुस्तकों को नहीं लौटाते।

## 9.5.3 न्यूआर्क निर्गम विधि

इस प्रणाली का आविष्कार 1900 में अमेरिका के न्यू जर्सी (New Jersey) राज्य के न्यूआर्क सार्वजनिक ग्रन्थालय (Newark Public Library) में तत्कालीन

HMDC-019

ग्रन्थालयी जान काटन डैना (John Cotton Dana) के कार्यकाल में किया गया था। इस विधि का प्रचलन ब्रिटिश एवं अमेरिकन ग्रन्थालयों में अधिक है। कुछ परिवर्तन के साथ इसका प्रयोंग भारत के कुछ कालेज ग्रन्थालयों में भी किया जाता है। इस विधि में दो तरह के पत्रक होते हैं (1) गृहीता पत्रक (2) पुस्तक पत्रक। गृहीता पत्रक में पाठक से सम्बन्धित जानकारी जैसे- नाम, पता, कक्षा इत्यादि दी जाती है। पुस्तक पत्रक में दी जाने वाली जानकारी अगले पैराग्राफ में है।

**पुस्तक पत्रक (Book Card)-** पुस्तक पत्रक में क्रामक संख्या (Call number), परिग्रहण संख्या (Accession number), लेखक का नाम, पुस्तक की आख्या का उल्लेख होता है। पाठक पंजीकरण संख्या का उल्लेख पुस्तक पत्रक में किया जाता है जिससे किस पाठक के पास, पुस्तक है। उसे ज्ञात किया जा सकता है।

**निर्गम विधि (Charging Procedure)-** मुक्त प्रवेश (Open Access) प्रणाली की स्थिति में पाठक स्वयं इच्छित पुस्तक का चयन ग्रन्थागार (Stacks) से करके अपने गृहीता पत्रक (Borrower's card) के साथ पुस्तक को परिचालन काउण्टर (Circulation Counter or Issue Counter) पर निर्गम सहायक को प्रस्तुत करते हैं। अगम्य प्रवेश (Closed Access)की स्थिति में पुस्तक को जब निकालकर दिया जाता है तब अपना गृहीत पत्रक प्रस्तुत करते हैं। पुस्तक को प्रदान करने के पूर्व, निर्गम सहायक पुस्तक को निर्गम अथवा आगम की तिथि गृहीता पत्रक, तथा तिथि पर्णी (Date Slip) पर डाल देता है। पुस्तक पत्रक पर इस प्रणाली के प्रयोग में तिथि के सामने पाठक की पंजीकृत संख्या (Registration Number) का उल्लेख कर दिया जाता है। इसके पश्चात पुस्तक तथा गृहीता पत्रक पाठक को दे दिए जाते हैं। इस प्रकार से पुस्तक के निर्गम (Issue or Charging) की प्रक्रिया समाप्त हो जाती है। पुस्तक पत्रक को पात्रक (Tray)में तिथि संकेत या पुस्तकों की क्रामक संख्या, अथवा परिग्रहण संख्या अथवा लेखक के अनुवर्णिक क्रमानुसार आकलित कर दिया जाता है।

## 9.5.3.1 न्यूआर्क विधि की विशेषताएँ तथा कमियाँ

इस विधि में कुछ सुविधाएं तथा कमियाँ दृष्टिगोचर होती हैं जों निम्नलिखित हैं -

**(अ) विशेषताएं अथवा लाभ**

1. ब्राउन विधि की अपेक्षा इस विधि में पुस्तकों का एक स्थायी लेखा - किस प्रकार

की पुस्तकें प्रदान की गयी प्रत्येक पाठक को कितनी और कौन सी पुस्तकें प्रदान की गयी आदि उपलब्ध रहता है।

2. किसको पुस्तक प्रदान की गयी है और कब उसके लौटाने की तिथि है, को आसानी से निशिचत किया जा सकता है जिससे आवश्यकता पड़ने पर पुस्तक को वापस मंगवाने आदि की सूचना दी जा सकती है।

3. पुस्तकों का आरक्षण सरलतापूर्वक किया जा सकता है।

4. किस पुस्तक की लोकप्रियता अथवा अधिक माँग है उसे निश्चित किया जा सकता है क्योंकि सम्बन्धित पुस्तक पत्रक से यह निर्गम के आधार पर स्वतः ज्ञात हो जाता है।

5. पुस्तक पत्रक गायब किये जाने अथवा निकाल लिए जाने की स्थिति में दूसरा रिकार्ड भी उपलब्ध होता हैं ।

**(ब) कमियाँ**

1. इसमें अधिक समय लगता है।

2. गृहीता पत्रक को भूल जाने की स्थिति में पुस्तकों का आदान प्रदान करने में असुविधा होती है।

## 9.5.4 कम्प्यूटरीकृत आगम-निर्गम प्रक्रिया

आधुनिक समय में जिन पुस्तकालयों में कम्प्यूटरीकरण हो गया है वहाँ आगम-निर्गम प्रक्रिया भी पुस्तकालय के लिये उपयोग किये गये सॉफ्टवेयर के माध्यम से होती है।

कम्प्यूटरीकृत पुस्तकालय में तकनीकी प्रक्रिया के समय ही पुस्तक की विस्तृत जानकारी कम्प्यूटर में डाल दी जाती है तथा पुस्तक में बारकोड लेबिल लगा दिये जाते हैं। जिनका उपयोग पुस्तकों के व्यवस्थापन एवं आगम प्रक्रिया में किया जाता है। रजिस्ट्रेशन के समय पाठकों की जानकारी कम्प्यूटर में डाल दी जाती है तथा बारकोड युक्त 'रीडर्स टिकट' पाठक को दे दिया जाता है।

पुस्तक लेने के लिये जब पाठक आगम-निर्गम विभाग में आता है। तब 'लाइब्रेरी आटोमेशन सॉफ्टवेयर' तथा 'बारकोड रीडर' के माध्यम से पुस्तकों का आदान प्रदान किया जाता है।



HMDC-019

पुस्तकालय में लगे बारकोड पर जब लेजरबीम पड़ती है तब उस पुस्तक की विस्तृत जानकारी कम्प्यूटर स्क्रीनपर आ जाती है। साथ ही जब बारकोड युक्त रीडर्स कार्ड पर लेजर बीम डाली जाती है तो पाठक से सम्बन्धित समस्त जानकारी स्क्रीन पर आ जाती है। दोनों जानकारियों को देखकर पुस्तकालय स्टॉफ निर्गत कुंजी (Key) दबाकर पुस्तक निर्गत कर देता है। पाठक की जानकारी के लिये 'ड्यू डेट स्लिप' पर वापसी की तिथि अंकित कर दी जाती है एवं पुस्तकालय की जानकारी के लिये बुक कार्ड निकालकर चार्जिंग ट्रे में रख लिया जाता है। इस तरह निर्गम की प्रक्रिया पूर्ण हो जाती है। आगम के समय कम्प्यूटर द्वारा ही पुस्तक वापसी की प्रक्रिया को सम्पन्न किया जाता है जिसमें पुस्तक पर लगे बारकोड से पुस्तक का विवरण तथा जिस व्यक्ति के नाम से निर्गत थी, उसका वर्णन आ जाता है। अब 'रिटर्न की' दबाकर पुस्तक आगम की प्रक्रिया पूरी कर ली जाती है तथा पुस्तक में बुक कार्ड लगा दिया जाता है।

यह विधि आसान व तेज है। समय की बचत करती है तथा गलतियाँ होने की सम्भावना नगण्य होती हैं। कम्प्यूटरीकृत आदान-प्रदान व्यवस्था में बड़ी ही आसानी से यह जानकारी प्राप्त की जा सकती है कि कौन सी पुस्तक किस व्यक्ति को निर्गत है। पुस्तकालय में कब वापस आने की संभावना है। यदि पुस्तकालय को किसी पुस्तक को शीघ्र मंगवाना है तो e-mail से reminder भी भेजा जा सकता है।

जिन पुस्तकालय में बारकोड सिस्टम लागू नहीं किया गया है वहाँ पर कम्प्यूटर में पुस्तक की परिग्रहण संख्या (Accession Number) तथा पाठक की सदस्य संख्या को डालकर पुस्तकों का आदान प्रदान किया जाता है।

आधुनिकतम कम्प्यूटरीकृत पुस्तकालय में बारकोउ की जगह इसके उन्नतरूप अर्थात आर एफ आई डी (रेडियो फ्रेक्वेंसी आइडेंटीफिकेशन) तकनीकी का उपयोग पुस्तकों के आदान प्रदान में किया जाता है। इसके अलावा यह पुस्तकालय की सुरक्षा तथा अव्यवस्थित पुस्तकों (Misplaced Books) को खोजने तथा भौतिक सत्यापन में सहायक है। आरएफआईडी तकनीकी का उपयोग करने के लिए प्रत्येक पुस्तक में आरएफआईडी टैग लगा दिया जाता है तथा पाठकों को भी आरएफआईडी युक्त पुस्तकालय सदस्यता कार्ड उपलब्ध कराया जाता है।

इस तकनीकी में पाठक स्वयं भी पुस्तकों का निर्गम-आगम कर सकता है। इस प्रक्रिया में पुस्तकालय कर्मियों की आवश्यकता नहीं होती है। यह विधि भारत में नेसडॉक लाइब्रेरी, नई दिल्ली, जयकर लाइब्रेरी, पूना वि.वि. पूना आदि अनेक प्रमुख

पुस्तकालयों में उपयोग की जा रही है।



## 9.6 निर्गम-आगम विभाग का महत्व

यह पुस्तकालय का महत्वपूर्ण विभाग है जो कि पुस्तकालय की पाठ्य सामग्री के अधिकतम उपयोग में सहायक है। इससे पाठकों को अपनी सुविधानुसार पढ़ने की स्वतंत्रता मिल जाती है तथा एक निश्चित अवधि तक पाठक पुस्तक को अपने पास रख सकता है।

पुस्तकालय विज्ञान के नियमों के अनुरूप - "पुस्तकें उपयोग के लिये हैं" तथा पुस्तकालय एवं पाठक के समय की बचत हो, इस बात को ध्यान में रखकर आदर्श आदान-प्रदान प्रणाली पुस्तकालय में उपयोग में लायी जाती है।

## 9.7 निर्गम पद्धति और सामान्य शर्तें

निर्गम-आगम से सम्बन्धित पुस्तकालयों में पाठकों के लिये कुछ सामान्य नियम होते हैं जिनका पालन उपयोगकर्ताओं को करना होता है जैसे

1. सदस्यता पत्रक अथवा परिचय पत्र न लाने पर पुस्तकों का निर्गम नहीं किया जायेगा।

2. गृहीता पत्रक अहस्तान्तरणीय होते हैं। जिस पाठक को जो ग्रहीता पत्रक दिये गये हैं उनका उपयोग वह स्वयं करेगा।

3. **अदेय पुस्तकें** - पुस्तकालय से कुछ विशिष्ट ग्रन्थ निर्गत नहीं किये जाते हैं। लेकिन विशेष परिस्थितियों में ग्रन्थालयी की अनुमति से रात भर के लिये अथवा अवकाश के दिनों के लिये निर्गम किये जाते हैं। अदेय पुस्तकों में - संदर्भ ग्रन्थ, हस्तलिखित ग्रन्थ, दुर्लभ ग्रन्थ, शोध प्रबंध, सामायिक प्रकाशन आदि आते हैं।

4. **पुनःनिर्गम** - अन्य पाठकों द्वारा माँग न किये जाने की स्थिति में पुस्तकों को पुनः निर्गम कराया जा सकता है। इससे पाठक अतिदेय दण्ड से बच जाते हैं।

5. **अतिदेय दण्ड** - यदि पुस्तक समय से वापस नहीं लौटाई जाती है तो पुस्तकालय के नियमानुसार अतिदेय दण्ड (ओवरड्यू चार्ज) देना होता हैं ।

6. **क्षति अथवा खोना** - पुस्तकालय का ग्रन्थ खो जाने पर पाठक उसका वर्तमान मूल्य अथवा ग्रन्थ की नयी प्रति वापिस कर मुक्त हो सकते हैं। ग्रन्थालयी चाहे तो दण्ड स्वरूप कुछ अधिक शुल्क भी ले सकता है। बहुखण्डात्मक ग्रन्थ तथा पत्रिकाओं के अंक

खो जानेपर पूरा सेट अथवा खण्ड का मूल्य देय होगा।

7. **आरक्षण** - पुस्तकालय अधिक माँग वाली पुस्तकों के लिए आरक्षण की सुविधा भी प्रदान करते हैं।

8. **अदेय प्रमाण पत्र** - परीक्षा के समय या सत्र की समाप्ति पर सभी पुस्तकें पुस्तकालय को वापिस करने के बाद छात्र पुस्तकालय से अदेय प्रमाण पत्र ले लेता है।

## 9.8 पाठकों के कर्त्तव्य

पाठकों का भी कर्तव्य है कि ग्रन्थालय के नियमों का पालन करें जिससे ग्रन्थालय के संसाधनों का उचित उपयोग हो तथा प्रत्येक पाठक को उसकी अभीष्ट पुस्तक मिल सके। पाठकों को समय से पुस्तकें वापस करनी चाहिये जिससे उनका उपयोग दूसरे पाठक भी कर सकें। पाठकों को उतनी ही पुस्तकें लेना चाहिए जिनके वे अधिकारी हैं। पुस्तकालय का अधिक से अधिक उपयोग करें तथा पुस्तकों को इधर उधर न छिपायें और न ही पुस्तकों को क्षति पहुँचायें।

पुस्तकालय पाठकों की सेवा के लिए होता है अतः उन्हें कर्मचारियों के साथ सहयोगात्मक रूख अपनाकर एक-दूसरे की सहायता करनी चाहिए। तभी "प्रत्येक पाठक को पुस्तक"और "प्रत्येक पुस्तक को उसका पाठक" मिल सकेगा।

## 9.9 सारांश

पुस्तकालय की उपयोगिता पाठकों की सूचना आवश्यकताओं की पूर्ति में निहित है। पुस्तकालय में निर्वाद्ध प्रवेश प्रणाली (Open Access System)अपनाना चाहिये जिससे पाठक पुस्तक संग्रह विभाग में जाकर स्वयं पुस्तक चयन कर सकें। इस तरह पाठकों को अधिक से अधिक पुस्तकें देखने का अवसर मिल जाता है। पुस्तकालय में आदर्श आगम-निर्गम प्रणाली अपनाकर पाठकों को नियमानुसार पाठ्य सामग्री उपलब्ध करायी जाती है। यह पुस्तकालय के प्रभावी संचालन में सहायक होती है।

सूचना तकनीकी के वर्तमान युग में मशीनीकृत आगम-निर्गम प्रक्रिया अपनाना चाहिये। जो कि समय की बचत करे तथा जिसमें गलतियों की सम्भावना नगण्य हो। जागरूक पाठक तथा सहयोगी स्टाफ मिलकर पुस्तकालय के उद्देश्यों की पूर्ति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं जिससे दोनों को लाभ होता है।

## 9.10 अभ्यास कार्य



HMDC-019

1. आदर्श आगम-निर्गम प्रणाली में क्या गुण होना चाहिये?

2. न्यूआर्क निर्गम प्रणाली की विशेषताएँ क्या हैं?

3. ब्राउन निर्गम प्रणाली के गुण-दोष बताएं ?

4. आधुनिक सूचना तकनीकी का प्रयोग आगम-निर्गम प्रणाली में करने से क्या लाभ है?

## 9.11 उपयोगी पुस्तकें


1. मुखर्जी, सुबोध कुमार (1988) : पुस्तकालय विज्ञान : भारतीय परिवेश। लखनऊ : अपाला प्रकाशन।

2. गुप्त, अवधेश चन्द्र (1986) : पुस्तकालय निर्गम- आगम प्रणालियाँ। गाजियाबाद : कैलाश प्रकाशन।

3. सक्सेना, एल.एस. (1989) : पुस्तकालय संगठन तथा व्यवस्थापन। भोपालः मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।

4. सुन्देश्वरन के.एस. (1988) : ग्रन्थालय एवं समाज। नई दिल्ली : एस.एस. पब्लिकेशन।

5. सुन्देशवरन के.एस. (1991) : शैक्षणिक पुस्तकालय : संगठन तथा प्रबंध। नई दिल्ली : एस.एस. पब्लिकेशन ।

6. शर्मा, पाण्डेय एस.के. (1995) : पुस्तकालय और समाज । नई दिल्ली : ग्रन्थ अकादमी।

7. अग्रवाल, श्याम सुन्दर (1994) : ग्रन्थालय तथा समाज । जयपुर : आर.बी.एस.ए. पब्लिशर्स ।


NMDC-019

# इकाई - 10 : पुस्तक एवं सूचना स्त्रोतों का परिरक्षण एवं संरक्षण

इकाई की रूपरेखा


10.1 [illegible]

10.2 [illegible] जाने [illegible]

10.3 [illegible]

10.4 [illegible]

10.5 पुस्तक [illegible]

10.6 [illegible] संरक्षण

10.7 [illegible]

10.8 [illegible]

10.9 [illegible] पुस्तकें


## 10.1 प्रस्तावना

पुस्तकालयों [illegible] उपलब्ध [illegible] जायेगा [illegible] भी [illegible] लिये [illegible] पुनरूद्धार जरूरी है।

[illegible] वैज्ञानिक [illegible] देश [illegible] खतरे [illegible] चूहे, [illegible] अनेक [illegible] जरूरी [illegible] की [illegible] और [illegible] हवा [illegible]

[illegible] को [illegible] जैसे पेज [illegible] पुस्तकों [illegible] उपयोग [illegible] केन्द्र [illegible] केन्द्र [illegible] थोड़ी [illegible]

संरक्षण प्रदान किया जा सकता है।

हमारे देश में पुस्तकों के संरक्षण के लिए प्राचीन काल से हो अनेक उपाय किये जाते रहे है जिसमें पुस्तकों के अंदर नीम की पत्तियाँ, तम्बाकू के पत्ते, लाल खेड़ा के दाने, मंगरैला, साँप के केंचुल आदि रखे जाते थे जिससे कीड़े मकोड़े दूर रहते थे।

पुस्तकों को कीड़े मकोड़ों से बचाने के लिये कुछ रासायनिक पदार्थ जैसे कार्बन डाई आक्साइड, फोर्म एलडिहाइड, एथिलिन डाइफ्लोराइड और थाइमल, कार्बन टेट्राक्लोराइड आदि का उपयोग किया जाता है। पुस्तकालयों में पुस्तक क्रय करते समय ही अच्छी जिल्दसाजी वाली पुस्तकें क्रय करना चाहिए। यदि आवश्यक हुआ तो पुनः जिल्दसाजी करवाना चाहिए। वर्तमान समय में उच्चकोटि की मशीन द्वारा जिल्दसाजी की जा रही है तथा उसमें इस तरह के रसायनिक द्रव्य उपयोग किये जा रहे है। जिससे उनमें कीड़े आदि नहीं लगते तथा उन्हें चूहे भी नहीं काटते।

## 10.2 पुस्तकालय में पाये जाने वाले प्रमुख सूचना स्रोत

पुस्तकालयों में विभिन्न प्रकार की सूचना सामग्री पायी जाती है जिसके उपयोग के कारण, समय के साथ उनका क्षरण होना स्वाभाविक है। अतः उसे लम्बे समय तक सुरक्षित रखने के लिए परिरक्षण तथा संरक्षण आवश्यक है। पुस्तकालय में पाये जाने वाले प्रमुख सूचना स्रोत निम्न प्रकार हैं -

1. **हस्तलिखित ग्रन्थ** - प्राचीन समय में जब प्रिन्टिंग की सुविधा उपलब्ध नहीं थी उस समय लोगों-ने ज्ञान को संरक्षित करने के लिए उन्हें ताड़पत्र, भोजपत्र, चमड़ा, वस्त्र, हाथ से निर्मित कागज आदि पर लेखन कार्य किया गया। वही सामग्री आज हमारी सांस्कृतिक धरोहर है। इसकी रक्षा हमारा परम कर्तव्य है।

2. **प्रिंटिन्ग पुस्तकें एवं पत्रिकाएं** - आधुनिक समय में छपी हुई पुस्तकें तथा पत्रिकायें पुस्तकालय में पायी जाती हैं जो कि पाठकों के लिए सूचना के प्रमुख स्रोत है। इसका उपयोग पाठक अध्ययन के लिये करते हैं।

3. **इलेक्ट्रानिक पुस्तकें व पत्रिकाएँ** - आज का युग ई-बुक्स तथा ई-जर्नल्स का है। सूचना तकनीकी के प्रभाव से आजकल पुस्तकें एवं पत्रिकाएं इलेक्ट्रानिक फार्म में प्रकाशित हो रही हैं जो कि सीडी या आनलाइन उपलब्ध रहती हैं। इलेक्ट्रानिक उपकरणों तथा सीडी आदि की सुरक्षा भी पुस्तकालयाध्यक्ष के दायित्व में शामिल हो गया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि एक पुस्तकालय में हस्तलिखित, मुद्रित तथा


NMDC-019

डिजिटल तीनों प्रकार के सूचना स्रोत पाये जा सकते हैं जिनके अन्तर्गत, विषय ग्रन्थ, संदर्भ ग्रन्थ, पाठ्य पुस्तकें, पत्र पत्रिकायें आदि शामिल हैं।

## 10.3 पुस्तक क्षरण के प्रमुख कारक

पुस्तकों के क्षरण में प्रमुख भूमिका निभाने वाले कारक निम्न हैं -

1. **पर्यावरणीय कारक** - (अ) प्रकाश (ब) ऊष्मा (स) आद्रता (नमी) (द) धूल एवं गंदगी।
2. **जैविक कारक** - (अ) सूक्ष्म जीवाणु, फफूँद आदि (ब) कीड़े-मकोड़े (सिल्वर फिश, कॉकरोच, बुकवर्म, दीमक) (स) चूहे, आदि।
3. **रासायनिक कारक** - (अ) अम्ल (ब) क्षार (स) पानी
4. **मानवीय कारक** - (अ) युद्ध (ब) आतंकवाद (स) चोरी (द) अज्ञानता एवं उचित प्रशिक्षण का अभाव आदि।
5. **प्राकृतिक आपदाएँ** - (अ) भूकंप (ब) बाढ़ (स) तूफान (द) बिजली (इ) ओलावृष्टि आदि।

## 10.4 संरक्षण में सहायक संस्थान

प्राचीन पुस्तकें, पाण्डुलिपियाँ हमारी संस्कृति की अमूल्य धरोहर है। उनकी प्राकृतिक एवं जैविक आपदाओं से सुरक्षा करना तथा भावी पीढ़ी के लिये सुरक्षित रखना हमारा नैतिक कर्तव्य है।

प्राचीन ग्रन्थों के संरक्षण में अनेक राष्ट्रीय संस्थायें सहयोग प्रदान कर रहीं हैं उनमें कुछ प्रमुख संस्थायें निम्न हैं -

1. नेशनल मिशन आफ मेनुस्क्रिप्ट्स (NMM), नई दिल्ली।
2. इंदिरागाँधी नेशनल सेन्टर फॉर आर्ट्स (IGNCA), नई दिल्ली।
3. इण्डियन काउंसिल ऑफ कंजर्वेशन इन्स्टीट्यूट, लखनऊ ।
4. इंटेक (INTACH)
5. राष्ट्रीय अभिलेखागार (National Archives), नई दिल्ली।
6. राष्ट्रीय मेनुस्क्रिप्ट्स संस्थान (National Manuscripts Institute), नई

दिल्ली।

7. भण्डारकर ओरियन्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पुणे।

8. खुदाबख्श ओरियन्टल पब्लिक लाइब्रेरी, पटना।

9. रामपुर रजा लाइब्रेरी, रामपुर।

10. तंजाबुर महाराजा सरफोजी सरस्वती महल लाइब्रेरी, तंजाबुर।

इसके अलावा अनेक स्वयंसेवी संस्थान भी संरक्षण की दिशा में कार्य कर रहे हैं जिनमें श्रुत संवर्धन संस्थान मेरठ, प्राच्य श्रमण भारती, मुजफ्फरनगर, अनेकान्त पाण्डुलिपि संरक्षण केन्द्र, बीना संस्कृति संरक्षण संस्थान, नई दिल्ली आदि प्रमुख हैं।

## 10.5 पुस्तक संरक्षण के उपाय

पुस्तकालयों में प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों, पुस्तकों एवं अन्य सूचना श्रोतों की सुरक्षा हेतु निम्न आवश्यक उपाय अपनाना चाहिये -

1. ग्रन्थों को उच्च स्थान पर रखें जहाँ सीलन न हो।

2. ग्रन्थों की नियमित साफ सफाई हो।

3. यदि संभव हो तो ताप नियंत्रित (Air Conditioned) लगाये जायें।

4. काष्ठ की अलमारियों की जगह लोहे की अलमारियों का प्रयोग करना चाहिये।

5. ग्रन्थों को कीड़े-मकोड़े, दीमक आदि से बचाने हेतु रासायनिक उपचार करना चाहिये। समय-समय पर कीटनाशक दवाइयों का छिड़काव किया जाना चाहिये।

6. ग्रन्थालय भण्डार में खाने पीने की वस्तुओं का उपयोग नहीं करना चाहिये।

7. प्राचीन ग्रन्थों का उपयोग सावधानी पूर्वक करना चाहिये।

8. अच्छी मजबूत जिल्दसाजी करवायें। जिल्दसाजी में ऐसी सामग्री उपयोग की जाये जिसमें कीड़े नहीं लगते हों तथा चूहे भी नहीं काटें।

9. आधुनिक सूचना तकनीकी का प्रयोग करके प्राचीन ग्रन्थों का संरक्षण किया जाना चाहिये। जिसमें डिजिटाइजेशन विधि प्रमुख है।

10. सूचना श्रोतों को भावी पीढ़ी के लिए संरक्षित किया जाये।

HMDC-019

## 10.6 सूचना तकनीकी और संरक्षण

आज के कम्प्यूटर युग में सूचना तकनीकी का उपयोग करके प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों को डिजिटल फार्म में संरक्षित किया जा रहा है। इसके लिये कम्प्यूटर, डिजिटल कैमरा, स्कैनर, आदि का प्रयोग किया जा रहा है जिनके माध्यम से जीर्ण-शीर्ण हालत वाले ग्रन्थ भी डिजिटल रूप में परिवर्तित हो जाते हैं जिनको इण्टरनेट पर उपलब्ध करा दिया जाता है जिससे वह सभी के लिये उपयोगी तथा सर्वसुलभ हो जाते हैं। सूचना तकनीकी का प्रभाव प्रत्येक जगह दिखाई दे रहा है। इसी के परिणाम स्वरूप आज अनेक 'डिजिटल लाइब्रेरी' बन गई है। यह तकनीकी पुस्तकालयों में प्राचीन ग्रन्थों के संरक्षण में उपयोग में लायी जा रही है।

**पुस्तकालयाध्यक्ष का दायित्व है कि -**

1. सूचना श्रोतों को क्षरण होने से बचाया जाये।
2. जो सामग्री नष्ट हो गयी है उसे मूल अवस्था में लाने की कोशिश की जाये। और वह आगे नष्ट न हो इसलिये संरक्षित की जाये।
3. प्राचीन सांस्कृतिक धरोहर व ज्ञान को समाज के सामने लाये।
4. प्राचीन ग्रन्थों का सूचीकरण किया जाये।
5. प्राचीन ग्रन्थों को पुनः प्रकाशित किया जाये।
6. प्राचीन ग्रन्थों को सुरक्षित रखकर उनकी डिजिटल कापी उपयोग में लायी जाये।
7. सांस्कृतिक सम्पदा को भावी पीढ़ियों के लिये सुरक्षित रखा जाये।
8. इण्टरनेट तथा सूचना तकनीकी का उपयोग करके संचित ज्ञान को सार्वजनिक किया जाये।
9. राष्ट्रीय संस्थाओं/समाजसेवी संस्थाओं/संग्रहालयों से सम्पर्क करके पुस्तकालय में उपलब्ध प्राचीन ग्रन्थों को नष्ट होने से बचाये।
10. प्रशिक्षित पुरातत्वविदों, संरक्षकों, पुरालेखविदों, विज्ञानिकों का सहयोग लेकर प्राचीन सांस्कृतिक धरोहर को बचाने का प्रयास करें।

## 10.7 सारांश

प्राचीन सांस्कृतिक धरोहर के रूप में प्राप्त पाण्डुलिपियाँ, पुस्तकों एवं अन्य सूचना श्रोतों को उपयोग करते हुये भावी पीढ़ी के लिये सुरक्षित रखने का दायित्व वर्तमान

पीढ़ी पर है। आज कम्प्यूटर तथा सूचना तकनीकी के उपयोग से दुर्लभ सामग्री को डिजिटल रूप में संरक्षित किया जा रहा है और इण्टरनेट के माध्यम से सर्वसुलभ कराया जा रहा है जिसमें अनेक राष्ट्रीय संस्थाओं व स्वयंसेवी संस्थाओं का सराहनीय योगदान है। हमें भी सूचना स्रोतों की उपयोगिता को ध्यान में रखकर संरक्षण की दिशा में सहयोग करना चाहिये।

## 10.8 अभ्यास प्रश्न

1. पुस्तक क्षरण के प्रमुख कारण क्या हैं?
2. पुस्तक संरक्षण के उपाय बतायें। इस दिशा में कार्यरत प्रमुख संस्थाओं के नाम बतायें।
3. पुस्तक संरक्षण में सूचना तकनीकी किस तरह से उपयोगी है?
4. पुस्तकों को क्षरण से बचाने के लिये पुस्तकालयाध्यक्ष के क्या कर्तव्य हैं?

## 10.9 उपयोगी पुस्तकें

1. मुखर्जी, सुबोध कुमार (1988) : पुस्तकालय विज्ञान : भारतीय परिवेश। लखनऊ : अपाला प्रकाशन।
2. सक्सेना, एल.एस. (1988) : पुस्तकालय संगठन तथा व्यवस्थापन। भोपालः मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
3. जैन, अनुपम, सम्पादक (2005) : जैन संस्कृति : संरक्षण व संबर्द्धन। मुजफ्फरनगर, प्राच्य श्रमण भारती।
4. Conference Proceedings (2005) National seminar on Digital Preservation of Manuscripts and Rare materials, Central Library, Banaras Hindu University, Varanasi.
5. National Mission for Manuscripts, Guidelines for digilization of Manuscripts.
6. अग्रवाल, ओ.पी. तथा तिवारी, राजेन्द्र प्रसाद (1999) : पुस्तकालय सामग्री और कला वस्तुओं का परिरक्षण। नई दिल्ली, नेशनल बुक ट्रस्ट ।
7. सुन्देश्वरन के.एस. (1988) : ग्रन्थालय एवं समाज। नई दिल्ली : एस.एस. पब्लिकेशन।

# इकाई - 11 : पुस्तकालय के प्रमुख अभिलेख तथा वार्षिक प्रतिवेदन

## इकाई की रूपरेखा


11.1 उद्देश्य

11.2 प्रमुख अभिलेख

- 11.2.1 परिग्रहण रजिस्टर
- 11.2.2 प्रसूचियाँ
- 11.2.3 प्रावधिक अभिलेख
- 11.2.4 सेवा अभिलेख
- 11.2.5 पुस्तकों का आगम निर्गम अभिलेख
- 11.2.6 पाठकों का अभिलेख
- 11.2.7 आगन्तुकों का अभिलेख
- 11.2.8 प्रशासनिक अभिलेख
- 11.2.9 डिस्पैच रजिस्टर
- 11.2.10 जिल्दसाजी का अभिलेख
- 11.2.11 स्टेशनरी रजिस्टर
- 11.2.12 पुस्तकालय की नीतियों का अभिलेख
- 11.2.13 प्रत्याहरण रजिस्टर
- 11.2.14 पुस्तकालय हस्तपुस्तिका

11.3 पुस्तकालय का वार्षिक प्रतिवेदन

11.4 वार्षिक प्रतिवेदन के प्रमुख तत्व

11.5 सारांश

11.6 अभ्यास प्रश्न

11.7 उपयोगी पुस्तकें


## 11.1 उद्देश्य

किसी भी संस्था अथवा संस्थान के संगठनात्मक व्यवस्था के अन्तर्गत उनके प्रत्येक कार्यक्रम तथा अन्य आवश्यक वस्तुओं का सूचनात्मक विवरण लिखित अवस्था

में रखना आवश्यक है जिससे आवश्यक सूचनाएँ तथा उनकी अन्य सामग्रियों आदि का पूरा विवरण ज्ञात किया जा सके। पुस्तकालय सार्वजनिक है अतः उन्हें भी अनेक प्रकार की सेवाओं, सामग्रियों एवं विभिन्न प्रकार के क्रियाकलापों के समुचित एवं विश्वसनीय अभिलेख प्रस्तुत करना आवश्यक है जिससे आवश्यक विवरण ज्ञात करने में सुविधा हो सके। टाबे एवं विल्सन (Maurice F. Taube and L.R. Wilson) ने इस तथ्य पर जोर दिया है कि किसी भी ग्रन्थावली के लिए उसकी संस्था के कार्यक्रम, क्रियाकलाप तथा प्रमुख उपलब्धियों का मूल्यांकन करने के लिए, ग्रन्थालय के साधनों तथा सेवाओं का स्थायी तथा पूर्ण अभिलेख (records) रखना परमावश्यक है। इस प्रकार के अभिलेखों से ग्रन्थालय के कार्य, सेवाओं का मूल्य तथा संस्था की त्रुटियों का अनुमान लगाने में सुविधा होती है।

अभिलेख (record) का तात्पर्य ही होता है कि तथ्यों का उल्लेख इस ढंग से किया जाय जिससे वह स्थायी ढंग से उपलब्ध की जा सकें और उसका महत्व भी चिरस्थायी हो सके। अतः ग्रन्थालय के अभिलेखों को उत्तम ढंग से प्रस्तुत करना तथा उन्हें सुरक्षापूर्वक रखना बड़ा ही आवश्यक है।

## 11.2 प्रमुख अभिलेख

पुस्तकालयों में निम्न अभिलेख मुख्य रूप से पाये जाते हैं -

(1) परिग्रहण रजिस्टर (Accession Register): पुस्तकों तथा गैर पुस्तकीय सामग्रियों का अभिलेख जो क्रय अथवा उपहार के रूप में ग्रन्थालय में प्राप्त की जाती है।

(2) प्रसूचियां (Catalogues)

(3) निधानी सूची (Shelf list cards)

(4) प्रावधिक अभिलेख (Technical records)

(5) सेवा अभिलेख (Service records)

(6) पुस्तकों का निर्गमन तथा आगमन अभिलेख (Record of Charging and Discharging of Books)

(7) पाठकों का अभिलेख (Reader's Record)

(8) आगन्तुकों का अभिलेख (Visitor's Records)

(9) प्रशासनिक अभिलेख - ग्रन्थालय समिति की कार्यवाही (Minutes of Library Committee), उपस्थिति रजिस्टर (Daily Attendance Register),



HMDC-019

कार्य विभाजन चार्ट (Daily work Allocation Chart), वेतन रजिस्टर (Salary Register), लेखा तथा बिल्स अभिलेख (Accounts Books and Bill Files), विलम्ब शुल्क रजिस्टर (Overdue Fine Record) इत्यादि।

(10) वार्षिक प्रतिवेदन तथा सांख्यिकी (Annual Reports and Statistics)

(11) पत्र पत्रिकाओं के प्राप्ति का अभिलेख (Receipt of Periodicals Record)

(12) डिस्पैच रजिस्टर (Dispatch Register)

(13) पुस्तकों की जिल्दसाजी का अभिलेख (Records of Book Binding)

(14) स्टेशनरी आदि का अभिलेख (Stationery Record)

(15) स्टाफ काउन्सिल द्वारा निश्चित नीतियों का अभिलेख (Records of Policy decisions of Staff Council)

(16) प्रत्याहरण रजिस्टर (Withdrawal Register)

उपरोक्त अभिलेखों के प्रस्तुतीकरण, महत्व तथा विशेषताओं का वर्णन निम्नानुसार है -

## 11.2.1 परिग्रहण रजिस्टर (Accession Register)

ग्रन्थालय के अन्तर्गत जितनी भी पुस्तकें क्रय अथवा अन्य किसी माध्यम से प्राप्त होती है उनका विवरण जिस स्टाक रजिस्टर (Stock Register) में उल्लिखित होता है उसे परिग्रहण रजिस्टर कहते हैं। यह ग्रन्थालय का सबसे अधिक महत्वपूर्ण अभिलेख होता है। इसके अन्तर्गत पुस्तकों की संख्या के क्रमानुसार (Serial number) ज्यों ज्यों पुस्तकें आती हैं, उल्लेख किया जाता है। मानक रजिस्टर कम से कम 2500 तथा अधिक से अधिक 5000 के पुस्तकों का रजिस्टर होता है जो 1 से प्रारम्भ होता है। पुस्तकालय में ज्यों ज्यों पुस्तकें आती हैं उनका विवरण उन स्थानों में उल्लेख करने के पश्चात जो परिग्रहण संख्या होती है उसे पुस्तकों में ग्रन्थालय के सील के अन्तर्गत तिथि के साथ लिख दिया जाता है। परिग्रहण संख्या आमुख पृष्ठ (Title page) के पीछे तथा पुस्तक के प्रत्येक 101वें, 51वें पृष्ठ पर कहीं-कहीं लिखने की प्रथा है। जिसे पुस्तकालय का सीक्रेट पेज कहा जाता है। इससे पुस्तकें आसानी से गायब करके छिपाकर रखना उतना सरल नहीं होता। परिग्रहण रजिस्टर पाठकों के प्रयोग के लिए नहीं होता हैं परिग्रहण रजिस्टर किसी पुस्तक के सम्पूर्ण इतिहास को बताता है कि


HMDC-019

पुस्तक किस दिन ग्रन्थालय में आयी और किस दिन इसका प्रत्याहरण (withdrawal) किया गया । साथ ही पुस्तक के अभिज्ञान (Identification) का पूर्ण विवरण परिग्रहण रजिस्टर से हो जाता है। जब तक ग्रन्थालय कायम रहता है तब तक यह रजिस्टर भी रहेगा और सम्पूर्ण संकलन की संख्या क्या है उसका ज्ञान इसी से प्राप्त किया जाता है। इसमें पुस्तकों को विषयानुसार उल्लेख करने की अपेक्षा परिग्रहण संख्या के क्रमानुसार उल्लेख किया जाता है।

प्रसूची तथा निधानी सूची (Catalogue and Shelf list) के नष्ट हो जाने पर परिग्रहण रजिस्टर की सहायता से इन दोनों अभिलेखों को पुनः प्रस्तुत किया जा सकता है।

परिग्रहण रजिस्टर में मशीन से परिग्रहण संख्या डलवाने अथवा हाथ से लिखने पर उसकी जाँच अवश्य होनी चाहिए जिससे संख्या में कोई त्रुटि न रह जाय। लेखक के नाम तथा आख्या को उसी ढंग से उल्लेख किया जाता है जैसे प्रसूची में होता है। स्रोत (source) के खाने में, यदि पुस्तक क्रय की गयी है तो जिससे क्रय किया है, उस विक्रेता का नाम, यदि किसी ने दान के रूप में दिया है तो उसके नाम का उल्लेख किया जाता है। रिमार्क (remark) के खाने में जब पुस्तक का प्रत्याहरण किया जाता है तो उसका उल्लेख किया जाता है। किसी कारणवश यदि कोई भूल अथवा गलती हो जाती है तो उस परिग्रहण संख्या को रद्द कर दिया जाता है। कुछ ग्रन्थावली परिग्रहण रजिस्टर के स्थान पर परिग्रहण पत्रकों (Accession Cards) का प्रयोग करने पर जोर देते हैं जिन्हें निधानी सूची (Shelf list) की भाँति पेटिका में परिग्रहण संख्या के क्रमानुसार आकलित करके रखा जा सकता है। इसमें समय की बचत का लक्ष्य निहित है।

गैर पुस्तकीय सामग्रियों का अभिलेख (Records of Non-Book Materials) - ग्रन्थालयों में पुस्तकों तथा अन्य पुस्तकों की भाँति सामग्रियों के अतिरिक्त उन गैर पुस्तकीय सामग्रियों का संकलन किया जाता है जो ज्ञान के आवश्यक साधन माने जाते हैं। उनका भी संकलन आवश्यक माना गया है इन सामग्रियों में प्रधानतः फिल्में (Films), माइक्रो-फिल्म (Micro film), माइक्रो कार्ड (Micro card), मानचित्र (Maps), भूचित्रावली (Atlases), ग्रामोफोन रिकार्ड (Gramophone records), आदि सम्मिलित है। इनका समुचित विवरण स्थायी ढंग से प्रस्तुत करने का अभिलेख परिग्रहण रजिस्टर की भाँति रखना आवश्यक है, जिसमें कुछ विशिष्ट खानों (column) का होना आवश्यक है - जैसे- लिपि (Script), स्वरूप (Format), आकार (size)



HMDC-019

तथा अन्य बाह्य विशेषताएं (Physical features)आदि।

### 11.2.2 प्रसूचियाँ (Catalogues)

ग्रन्थालय की प्रसूचियाँ भी उसके बहुमूल्य अभिलेख होते हैं जो सार्वजनिक प्रयोग के लिए होते हैं। इनकी उपयोगिता तथा निर्माण विधि का वर्णन किया जा चुका है। प्रसूचियों का बाह्य आकार (Physical forms) अनेक प्रकार का हो सकता है। पुस्तकों के विवरण तथा ग्रन्थालय में उनके स्थान तथा पुस्तकों के अभिज्ञान के लिए प्रसूची से उत्तम अन्य कोई उपकरण नहीं होता है। जिनके माध्यम से अनेक विधियाँ तथा अनुक्रमों के अनुसार पुस्तकों की जानकारी सुलभ हो सकती है। परिग्रहण रजिस्टर तथा निधानी सूची के नष्ट हो जाने पर प्रसूचियों की सहायता से उनको पुनः प्रस्तुत किया जा सकता है। प्रसूची पत्रक पुस्तकों की उपयोगिता बढ़ाते हैं तथा पुस्तकालय का दर्पण होते हैं। जिससे पुस्तकालय में उपलब्ध सभी सूचना श्रोतों की विस्तृत जानकारी मिल जाती है। इसे वर्गीकरण पद्धति से तथा वर्णानुक्रम पद्धति से रखा जाता है। इसी का सुरक्षित रिकार्ड सेल्फ लिस्ट के रूप में जाना जाता है। जिसका उपयोग वार्षिक सत्यापन में किया जाता है।

निधानी सूची को प्रसूची पत्रकों (Catalogue Card) पर प्रस्तुत किया जाता है और पुस्तकों के संलेख के सभी सूचना तत्वों (Entry Element of Data) का उल्लेख इसमें किया जाता है। सूची में पुस्तक की कीमत का भी उल्लेख किया गया होता है। निधानी सूची में संलेख पत्रकों को पत्रक प्रसूची (Card Catalogue)की अनुक्रमणिका की भाँति पेटिका के अन्तर्गत पात्रकों (Tray or Drawer)में क्रामक संख्या (Call Number) के अनुक्रम में आकलित करके रखा जाता है जो हमेशा प्रमुख ग्रन्थालयी की देख रेख में सुरक्षित ढंग से रखा जाता है। इसके पत्रकों का अनुक्रम वही होता है जिस अनुक्रम में पुस्तकें निधानियों (Shelves or Racks)पर आकलित होती हैं।

ज्यों ज्यों पुस्तकें ग्रन्थालय में संकलित की जाती हैं तो उनके प्रसूचीकरण के साथ ही एक पत्रक जो मुख्य संलेख (Main Entry) की भाँति बिना अतिरिक्त संलेख संकेत के होता है उसे निधानी सूची के लिए तैयार कर लिया जाता है। इस पत्रक को क्रामक संख्या के अनुसार निधानी सूची के अन्य पत्रकों को उसमें समुचित स्थान पर व्यवस्थित कर दिया जाता है। क्योंकि इसके सभी संलेख पत्रकों पर होते हैं। अतः अनुक्रमानुसार पत्रकों को संस्थापित करने में कोई कठिनाई नहीं होती जैसे वर्गीकृत

पुस्तकों में किसी नवीन पुस्तक को उनके साथ आकलित करने में कोई कठिनाई नहीं होती है।

निधानी सूची का मुख्य कार्य पुस्तकों का वार्षिक सत्यापन करने के लिए होता है जिससे यह कार्य सरलतापूर्वक कम से कम समय में सम्पन्न हो जाता है। निधानियों पर पुस्तकें अपेक्षाकृत परिग्रहण संख्या अथवा अन्य किसी अनुक्रम की अपेक्षा क्रामक संख्या के अनुक्रम में आकलित होती है जो आकलन व्यवस्था निधानी सूची के पत्रकों की होती है। अतः एक स्थान पर उनका सत्यापन समुचित ढंग से कम समय में हो जाता है। अतः इस कार्य की दृष्टि से निधानी सूची बड़ी ही महत्वपूर्ण एवं आवश्यक अभिलेख है।

निधानी सूची के आधार पर अनुवर्ग प्रसूची (Classified Catalogue) को बड़े आसानी से तैयार किया जा सकता है। प्रसूची तथा परिग्रहण रजिस्टर के नष्ट हो जाने की स्थिति में निधानी सूची की सहायता से उन्हें पुनः तैयार किया जा सकता है। जब पुस्तक का प्रत्याहरण (withdrawn) हो जाता है तो निधानी सूची से उस पुस्तक की निधानी सूची पत्रक को निकाल दिया जाता है जिससे सत्यापन में कोई असुविधा अथवा भ्रम की स्थिति उत्पन्न नहीं होती है।

### 11.2.3 प्राविधिक अभिलेख (Technical Record)

सुविधा की दृष्टि से ग्रन्थालय के विभागों में कुछ संशोधित तथा परिवर्धित वर्गीकरण प्रक्रियाएं एवं प्रसूचीकरण में विषय शीर्षक (Subject heading), पुस्तकों की प्रकृति एवं उपयोगिता के अनुसार सरलीकृत, चयनात्मक, विश्लेषणात्मक, प्रसूचीकरण एवं प्रसूची संलेखों की संख्या तथा ग्रन्थात्मक विवरण (Bibliographical description) आदि के लिए कुछ नीतियाँ अपनाई जाती हैं। अतः इनका अभिलेख स्थायी रूप से रखा जाता है। जिससे सूचीकरण तथा वर्गीकरण उन्हीं नीतियों के अनुसार प्राविधिक प्रक्रियाओं का अनुसरण करे जिससे इन कार्यों में साम्यता तथा सुसंगति (Uniformity and Consistency) बनी रहें। स्टाफ में परिवर्तन होने पर नये स्टाफ के लिए इससे सहायता तथा मार्गदर्शन मिलता है।

### 11.2.4 सेवा अभिलेख (Service Record)

ग्रन्थालय के उन विभागों जिसका प्रत्यक्ष रूप से पाठकों अथवा अन्य लोगों से


HMDC-019

सम्बन्ध होता है का अभिलेख आवश्यक है। किस विभाग में क्या कार्य हो रहा है तथा उसके लिए कौन जिम्मेदार है इन सभी बातों का वर्णन इसमें रहता है। छात्रों के लिये पुस्तकालय में क्या सेवा उपलब्ध है? उन सेवाओं की निर्धारित शुल्क क्या है? उन सेवाओं का लाभ कौन-कौन व्यक्ति उठा सकते हैं? इस तरह का विवरण सेवा अभिलेख में संभव है।

## 11.2.5 पुस्तकों के निर्गम तथा आगमन का अभिलेख (Record of charging and discharging of Books)

पुस्तकालय में आगम निर्गम विभाग एक महत्वपूर्ण विभाग है जो पुस्तकालय के पाठकों का सम्पूर्ण विवरण तथा उनके द्वारा उपयोग की गयी सामग्री की जानकारी रखता है। इसी के आधार पर अधिक मांग की जाने वाली पुस्तकों को निश्चित किया जाता है। और प्रतिदिन तथा पूरे वर्ष में सम्पूर्ण प्रदत्त पुस्तकों तथा विषयानुसार प्रदत्त पुस्तकों को ज्ञात किया जा सकता है। कौन सी पुस्तक किस पाठक को प्रदान की गयी हैं, कितनी अवधि के लिए प्रदान की गयी है, यह जानकारी इसी अभिलेख से प्राप्त होती है।

## 11.2.6 पाठकों का अभिलेख (Reader's Record)

ग्रन्थालय में कितने पाठकों को किन-किन श्रेणियों में पंजीकृत किया गया है, इसके अभिलेख को पाठक अभिलेख कहते हैं। कुछ ग्रन्थालयों में पंजीकरण का विवरण पाठक का नाम, पता, व्यवसाय, किस श्रेणी का पाठक है, आदि का विवरण रजिस्टर में प्रस्तुत किया जाता है। परन्तु अधिकांश ग्रन्थालयों में पंजीकरण पत्रक (Registration card)को अनुवर्णिक अथवा वर्गीकृत क्रम में आकलित करके रखा जाता है। शिक्षण संस्थाओं के ग्रन्थालयों में पंजीकृत पाठकों का विवरण नाम कक्षा एवं वर्ग, अध्ययन के विषय, स्थायी पता, स्थानीय पता, उनका हस्ताक्षर आवश्यक रूप से उल्लिखित किया जाता है।

पाठक अभिलेख की ही सहायता से कितने पाठक पंजीकृत किए गये, कितनों ने सदस्यता वापस ले ली, आदि का विवरण ज्ञात किया जाता है। पाठकों की संख्या भी ग्रन्थालय की लोकप्रियता तथा उपयोगिता का एक प्रमाण माना जाता है।

## 11.2.7 आगन्तुक अभिलेख (Visitor's Record)

ग्रन्थालय में प्रायः स्थानीय तथा अन्य प्रकार के आगन्तुक आते रहते है।


HMDC-019

ग्रन्थालय की सेवा एवं व्यवस्था तथा उपयोगिता के विषय में ग्रन्थालय का अवलोकन करने के पश्चात उनकी क्या धारणा बनती है, उसका उल्लेख करने के लिए जिस अभिलेख को ग्रन्थालय में रखा जाता है, उसे आगन्तुक अभिलेख अथवा विजिटर्स बुक (Visitor's Book or Record) कहते हैं। आगन्तुकों की संक्षिप्त धारणा को इसमें लिखा जाता है। इससे स्थानीय लोगों को ग्रन्थालय कितना उपयोगी सिद्ध हो रहा है, आदि का एक विवरण उपलब्ध हो जाता है और किस किस कोटि के लोग ग्रन्थालय में आते हैं, उनका भी विवरण मालूम हो जाता है। अतः इस दृष्टि से यह अभिलेख आवश्यक एवं महत्वपूर्ण है।

## 11.2.8 प्रशासनिक अभिलेख (Administrative Record)

ग्रन्थालय के प्रशासनिक अभिलेखों में स्टाफ के दैनिक उपस्थिति रजिस्टर (Daily attendance Register), कार्य विभाजन चार्ट (Duty allocation chart), अवकाश रजिस्टर, वेतन रजिस्टर, आदि को नियमित रूप से रखना आवश्यक है। जिससे कौन-कौन लोग नियमित रूप से समयानुसार आते हैं कितना अवकाश लेते हैं किस प्रकार के अवकाश के अधिकारी हैं, किसको कितना वेतन मिलता है, आदि की जानकारी प्रशासनिक दृष्टि से आवश्यक है। अतः इनका स्थायी अभिलेख आवश्यक है। पुस्तकों तथा अन्य क्रय की गयी वस्तुओं के भुगतान के लेखा-जोखा का अभिलेख भी ग्रन्थालयों में रखा जाता है। जिससे किसी प्रकार का विवाद होने पर उसकी पूर्ण जानकारी प्राप्त हो सके और किस मद में क्या व्यय किया गया, उसका विवरण इसी अभिलेख से प्राप्त होता है।

प्रायः ग्रन्थालयों में विलम्ब से पुस्तकें लौटाने पर विलम्ब शुल्क (overdue fine) लिया जाने का नियम होता है। अतः किस पाठक ने किस दिन पुस्तक प्राप्ति की और किस दिन लौटाई और कितना विलम्ब शुल्क हुआ, इसका स्थायी अभिलेख आवश्यक है। जिससे यह अन्दाज लगाया जा सके कि कितनी धनराशि इस माध्यम से ग्रन्थालय को प्राप्त हुई।

## 11.2.9 डिस्पैच रजिस्टर (Despatch Register)

ग्रन्थालय में जितने पत्र व्यवहार होते हैं उनके लिए जो अभिलेख प्रस्तुत किया गया होता है उसको डिस्पैच रजिस्टर कहते हैं। इसमें पत्र की संख्या तथा तिथि, पत्र किसको भेजा गया उसका नाम, पता, पत्र भेजनेका उद्देश्य या विषय तथा डाक टिकट



HMDC-019

का खर्च का उल्लेख किया जाता है। इससे यह ज्ञात होता है कि वर्ष में कितने पत्र व्यवहार हुये तथा उन पर वार्षिक व्यय क्या हुआ। पत्रों का विवरण जानने के लिए यह अभिलेख अति आवश्यक होता हैं ।

### 11.2.10 जिल्दसाजी का अभिलेख (Binding Records)

ग्रन्थालयों में पड़ी पुरानी पुस्तकों की जिल्दसाजी आवश्यक होती है। ग्रन्थालय में जितना ही पुस्तक का परिसंचालन (circulation)होता है उतनी ही पुस्तकों के फटने तथा उनकी जिल्दों को नष्ट होने की सम्भावना रहती है। पुस्तकों तथा पत्र पत्रिकाओं की जिल्दसाजी का कार्य सभी ग्रन्थालयों में होता है। किन्हीं-किन्हीं ग्रन्थालयों में यह कार्य ठेके पर करवाया जाता है और कहीं-कहीं पर ग्रन्थालय में जिल्दसाजी विभाग (Binding Department)होता है। जिसके लिए जिल्दसाज नियुक्त होते हैं और इनके कार्य की देख रेख करने के लिए एक प्रभारी भी होता है।

### 11.2.11 स्टेशनरी रजिस्टर (stationery Register)

यह अभिलेख उन सामग्रियों का, वस्तुतः स्टाक रजिस्टर होता है जिसमें कार्यालय सम्बन्धी सभी सामग्रियाँ, जो क्रय की जाती हैं उनका लेखा-जोखा होता है।कागज, पेन्सिल, पेन, स्याही, पिन तथा अन्य सामग्रियाँ क्रय की गयी, किनको किस कार्य के लिए प्रदान की गयीं आदि का विवरण रखा जाता है। इससे इस प्रकार की सामग्रियों के उपयोग का विवरण उपलब्ध होता है और भावी वर्ष में कितना व्यय होने की सम्भावना है। उसका अनुमान लगाया जा सकता है। जिन सामग्रियों की छपाई करवायी जाती है - जैसे, पाठक पत्रक (Reader's Ticket), सदस्यता पत्रक, आदेश पत्र, लेटर पेड (letter pad), तथा अन्य सामग्रियों का भी विवरण दर्ज होता है। इससे इन सामग्रियों का विवरण जानने में सुविधा होती है, अतः इसको समुचित ढंग से रखना आवश्यक है।

### 11.2.12 पुस्तकालय की नीतियों का अभिलेख (Record of Library Policy)।

ग्रन्थालय के स्टाफ की एक परिषद अवश्य होनी चाहिए जो पुस्तकालय की नीतियाँ निर्धारित करें। इस परिषद की सामयिक बैठकें होनी चाहिए जिसमें ग्रन्थालय की अनेक प्रकार की समस्याओं तथा उनके निदान पर विचार करना चाहिए। इस परिषद की नीतियों, निर्णयों तथा सुझावों का एक अभिलेख अवश्य रखना चाहिये, जिससे उसके अनसार भावी कार्यक्रम निर्धारित किए जा सकें।



HMDC-019

### 11.2.13 प्रत्याहरण रजिस्टर (Withdrawal Register)

ग्रन्थालय से प्रायः सर्वत्र प्रतिवर्ष कुछ पुस्तकों का प्रत्याहरण कुछ कारणवश जैसे गायब हो जाने, बिलकुल प्रयोगहीन होने, अनावश्यक रूप से स्थान घेरने आदि के कारण (write off), कर दिया जाता है, अर्थात परिग्रहण रजिस्टर से उन्हें काट दिया जाता है। इस रजिस्टर के रिमार्क (remark) के खाने में रिटेन आफ/विडेड आउट का उल्लेख कर दिया जाता है जिसका तात्पर्य होता है कि वह पुस्तक ग्रन्थालय में नहीं है। उसका पत्रक प्रसूची से तथा निधानी सूची से निकाल दिया जाता है जिससे किसी प्रकार का भ्रम न उत्पन्न होने पावे।

प्रत्याहरण के लिए ग्रन्थालय की कार्यकारिणी परिषद अथवा उसके उच्च अधिकारी का आदेश आवश्यक है जो ग्रन्थालयी द्वारा प्रस्तुत प्रतिवेदन पर विचार करने के पश्चात निर्णय दिया जाता है। प्रत्याहरण की गयी पुस्तकों का एक अभिलेख जिसे प्रत्याहरण रजिस्टर कहते हैं, रखना आवश्यक है। प्रायः सभी ग्रन्थालयों में इसका एक रजिस्टर होता है जिसमें पुस्तक का सम्पूर्ण ग्रन्थालय विवरण तथा प्रत्याहरण का आदेश तथा उसकी तिथि का उल्लेख किया जाता है। ऐसी पुस्तकों का विवरण ज्ञात करने तथा प्रतिवर्ष प्रत्याहरित पुस्तकों की संख्या जानने के लिए यह अभिलेख पर्याप्त उपयोगी एवं महत्वपूर्ण हैं।

### 11.2.14 पुस्तकालय हस्तपुस्तिका (Library Hand Book)

पाठकों को पुस्तकालय का पूर्ण परिचय देने के लिये पुस्तकालय हस्तपुस्तिका का प्रकाशन करता है जिसमें पुस्तकालय के उद्देश्य, अधिकारियों के नाम पते, विभिन्न विभागों के नाम और उनकी सेवाओं की जानकारी दी जाती है। नये पाठकों को इससे बहुत लाभ होता है। उन्हें एक ही बार में पुस्तकालय और उसकी सेवाओं की जानकारी प्राप्त हो जाती है।

## 11.3 पुस्तकालय का वार्षिक प्रतिवेदन (Annual Report of the Library)

वार्षिक प्रतिवेदन ग्रन्थालय के चालू सत्र के पूर्व सत्र के सभी प्रकार के क्रियाकलापों का लेखा जोखा होता है जिसका उद्देश्य ग्रन्थालय के अधिकारियों, पाठकों विशिष्ट व्यक्तियों तथा सर्वधारण लोगों को ग्रन्थालय की प्रगति, उपलब्धियों तथा उसकी



NMDC-019

उपयोगिता से अवगत करना होता है। अतः यह भी ग्रन्थालय का एक उपयोगी अभिलेख है।

वार्षिक प्रतिवेदन में विगत वर्ष में आय व्यय का विवरण, नयी सामग्री (पुस्तकें/ पत्रिकायें) जो भी पुस्तकालय में आयी हैं उन सबका तथ्यात्मक विवरण दिया जाता है। इस वार्षिक प्रतिवेदन को देखने से पुस्तकालय की सम्पूर्ण छवि सामने आ जाती है। सभी आँकड़े पुस्तकालय की वर्तमान स्थिति को एक साथ बतला देते हैं । यह वास्तव में पुस्तकालय की प्रगति का वर्णन है।

किसी भी संस्था तथा प्रशासनिक विभाग एवं संगठन का वार्षिक प्रतिवेदन उसके गत वर्ष की सभी गतिविधियों तथा उपलब्धियों एवं कठिनाइयों का एक सर्वेक्षण तथा लेखा जोखा होता है। इस प्रतिवेदन,बजट (Budget) तथा वार्षिक वित्तीय विवरण (Annual Financial Statement) में अन्तर होता है क्योंकि बजट गत वर्ष एवं भावी वर्ष के आय व्यय का अनुमानित विवरण, तथा वित्तीय विवरण केवल आर्थिक पहलुओं का विवरण प्रस्तुत करते हैं जबकि प्रतिवेदन गत वर्ष के अनेक उपलब्धियों तथा अवरोधों एवं वित्तीय पहलुओं आदि का अवलोकन करने का एक साधन है। प्रतिवेदन एक लिखित प्रलेख होता है जो किसी संस्था के उच्च अधिकारियों अथवा ट्रस्टी (Board of Trustee) परिषद एवं प्रबन्धकों को उसके कार्य विधियों से पूर्वतः अवगत कराना होता है। साथ ही सार्वजनिक हित के लिए भी इसे प्रस्तुत किया जाता है।

ग्रन्थालय वार्षिक प्रतिवेदन का उद्देश्य उसके अधिकारी अथवा प्रबन्धकों को उसकी गत वर्ष की कार्यविधियों, उपलब्धियों, आर्थिक स्थिति तथा कमियों से अवगत कराने के अतिरिक्त सार्वजनिक सूचनार्थ भी प्रस्तुत करना होता है जिससे ग्रन्थालय का प्रयोग करने के लिए अधिक से अधिक लोग इसकी तरफ आकर्षित किये जा सकें। ग्रन्थालयी इसे अनेक प्रकार से इस उद्देश्य से प्रस्तुत करते है जिससे अधिक से अधिक संख्या में ग्रन्थालय की उपयोगिता से परिचित हो सके।

## 11.4 वार्षिक प्रतिवेदन के प्रमुख तत्व (Main Elements of Annual report)

वार्षिक प्रतिवेदन के अन्तर्गत निम्नांकित विवरण का उल्लेख करना आवश्यक है जो प्रतिवेदन के मुख्य आधार होते हैं -

1. **पाठकों की संख्या या उपभोक्ता** - पुस्तकालय में कितने पंजीकृत पाठक हैं तथा कितने बाहरी पाठक पुस्तकालय के उपयोग हेतु आये।

2. **पाठ्य सामग्रियों की संख्या** - (अ) इसके अन्तर्गत पुस्तकों की पूर्ववत संख्या (ब) नयी खरीदी गयी पुस्तकों की संख्या, (स) दान में प्राप्त पाठ्य सामग्री, तथा (द) सामयिक पत्रिकाओं की संख्या, की जानकारी दी जाती है।

3. आगत और निर्गत ग्रन्थों के आँकड़े।

4. **सार्वजनिक सेवा**- पुस्तकालय द्वारा पाठकों के लिये जो भी नयी सेवायें प्रारम्भ की गई हैं, उनका वर्णन दिया जाता है।

5. **आर्थिक स्थिति** - पुस्तकालय में इस वर्ष विभिन्न श्रोतों से कितनी आय हुई तथा किस किस मद में उन्हें व्यय किया गया, इसका विस्तृत वर्णन किया जाता है। इसमें अनुदान, दान और उपहार शुल्क और दण्ड से प्राप्त राशि आदि शामिल किये जाते हैं।

6. **अन्य विवरण** - पुस्तकालय की विशिष्ट उपलब्धियों का इसमें वर्णन होता है। इस वर्ष किये गये विकास कार्यों, नये निर्माण कार्य, नयी योजनाओं, नये स्टाफ तथा उनकी उपलब्धियों आदि को शामिल किया जाता है।

## 11.5 सारांश

आज के सूचना प्रधान युग में प्रत्येक जानकारी को लिखित रूप में लाना, तथा उसे सभी के लिये सार्वजनिक कराना, पुस्तकालयाध्यक्ष का प्रमुख कर्तव्य है। पुस्तकालय का वार्षिक प्रतिवेदन इसी दिशा में एक प्रमुख अभिलेख है जिसके माध्यम से पुस्तकालय के अधिकारियों, पाठकों व समाज के प्रतिष्ठित विद्वत वर्ग को जानकारी उपलब्ध करायी जाती है। यदि पुस्तकालय के सभी कार्यकलाप तथा उनके विवरण लिखित रूप में उपलब्ध हैं तो यह सामग्री पुस्तकालय के कुशल संचालन में सहायक होती है।

## 11.6 अभ्यास प्रश्न

1. वार्षिक प्रतिवेदन से क्या समझते हैं? पुस्तकालय में वार्षिक प्रतिवेदन का क्या महत्व है?

2. पुस्तकालय के प्रशासनिक अभिलेखों का वर्णन करें।

3. पुस्तकालय की सेवाओं से सम्बन्धित अभिलेखों का वर्णन करें।



NMDC-019

## 11.7 उपयोगी पुस्तकें


1. सुन्देश्वरन, के.एस. (1991): शैक्षणिक पुस्तकालय : संगठन तथा प्रबन्ध। नई दिल्ली : एस.एस. पब्लिकेशन।
2. त्रिपाठी, एस. एम. (1983) : आधुनिक ग्रन्थालय : व्यवस्था एवं संचालन के मूल तत्व। दिल्ली : अजन्ता पब्लिकेशन्स।
3. मुखर्जी, सुबोध कुमार (1988) : पुस्तकालय विज्ञान। लखनऊ : अपाला प्रकाशन।

# इकाई -12: वार्षिक सत्यापन : पुस्तकालय संग्रह का भौतिक सत्यापन

## इकाई की रूपरेखा


12.1 प्रस्तावना

12.2 वार्षिक सत्यापन की आवश्यकता

12.3 पाठकों की मनोवृत्ति

12.4 वार्षिक सत्यापन से लाभ एवं हानियाँ

12.5 सत्यापन की प्रचलित विधियाँ

- 12.5.1 संख्या को गिनकर
- 12.5.2 पत्रकों पर संख्या मुद्रित अथवा लिखकर
- 12.5.3 परिग्रहण पंजी के द्वारा
- 12.5.4 पृथक पृथक पंजी पृष्ठों पर परिग्रहण संख्या के द्वारा
- 12.5.5 फलक सूची के द्वारा
- 12.5.6 बारकोड स्कैनर द्वारा

12.6 वार्षिक सत्यापन की रिपोर्ट तथा कार्यवाही

12.7 सारांश

12.8 अभ्यास प्रश्न

12.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें


## 12.1 प्रस्तावना

वार्षिक सत्यापन (Annual Verification) का तात्पर्य प्रत्येक प्रकार की उन वस्तुओं का वास्तविक सत्यापन अथवा जाँच (Physical checking)करना जिनका उल्लेख आवश्यक अभिलेखों में किया गया है। वार्षिक सत्यापन सरकारी विभागों, संस्थाओं तथा औद्योगिक संगठनों में प्रचलित हैं। पुस्तकालय भी उनमें से एक हैं ।

पुस्तकालय संग्रह का भौतिक सत्यापन पुस्तकालय प्रक्रिया का अनिवार्य अंग है। पुस्तकालय को भारत सरकार तथा राज्यों की सरकार ने स्टोर माना है तथा यह अनिवार्य कर दिया है कि प्रतिवर्ष पुस्तकालय संग्रह का भौतिक सत्यापन किया जाय एवं जो पुस्तकें उपलब्ध न हों उनको संग्रह से खारिज करने तथा यदि सामग्री पुस्तकालय के लिए अत्यन्त उपयोगी हो तो पुनः उपलब्ध कराने सम्बन्धी कार्यवाही की जाये।

## 12.2 वार्षिक सत्यापन की आवश्यकता

पुस्तकालयाध्यक्ष तथा कर्मचारियों के लिए भारत सरकार तथा राज्य सरकारों के नियमों के अन्तर्गत वार्षिक लेखा परीक्षण अनिवार्य कर दिया गया है। वित्तीय अधिकारों के अन्तर्गत अधिकारियों को एक निश्चित सीमा तक संग्रह से सामग्री को खारिज करने का अधिकार होता है। किन्तु यदि क्षति अधिक है तो यह सर्वमान्य सत्य है कि या तो सुरक्षा व्यवस्था सुदृढ़ नहीं है, अथवा कर्मचारी सचेत नहीं रहते। ऐसी स्थिति में वार्षिक क्षति दिखाते हुए, सुरक्षा व्यवस्था सुदृढ़ करने अथवा कर्मचारियों के विरूद्ध दायित्व निर्धारित करने सम्बन्धी कार्यवाही की जानी चाहिये।

पुस्तकालय अधिकारी सामग्री की बहुत बड़ी क्षति के लिए पुस्तकालय कर्मचारियों को उत्तरदायी ठहराकर कार्यवाही करने से विवश हुए बिना नहीं रहता। यह भी उल्लेख करना आवश्यक है कि सत्ता विकेन्द्रीकरण के इस युग में जिस अधिकारी के प्रति पुस्तकालयाध्यक्ष उत्तरदायी होता है, को इतने अधिकार नहीं होते कि वह अधिक मात्रा में खोई हुई सामग्री को निरस्त करने हेतु आदेश दे सके। पुस्तकालयाध्यक्ष जब तक पूर्णतः सहमत न हो, कि क्षति किसी कर्मचारी की उत्तरदायित्वहीनता के कारण नहीं हुई, वह सक्षम अधिकारी से निरस्तीकरण की अनुशंसा भी नहीं कर पाता। ये समस्याएं इसलिए प्रकट होती है, क्योंकि कई वर्षों की क्षति को एक वर्ष की क्षति मान लिया जाता है।ऐसी स्थिति में पुस्तकालयाध्यक्ष के पास कोई औचित्य विगत वर्षों में संग्रह परीक्षण न करने के सम्बन्ध में नहीं होता तथा उसे अनिवार्य रूप से उत्तरदायित्वहीनता मान लिया जाता है। अतः प्रत्येक वर्ष भौतिक सत्यापन कराना चाहिये।

संग्रह परीक्षण की आवश्यकता इसलिए भी है, कि उसके द्वारा अनेक अव्यवस्थित पुस्तकें मिल जाती हैं तथा उन्हें सही क्रम पर नियोजित किया जा सकता है। कई बार ऐसा लगने लगता है कि कोई पुस्तक खो गयी है, जबकि वह गलत क्रम पर जमी होती है। ऐसा इसलिए भी होता है कि कई पुस्तकों के बाहरी लेबिल निकल जाते हैं। संग्रह परीक्षण के उपरान्त ऐसी पुस्तकों पर नये सिरे से लेबिल लगाकर सही क्रम पर रखा जा सकता है। एक कारण यह भी है कि प्रति वर्ष संग्रह परीक्षण से पुस्तकालय कर्मचारियों को पुस्तकालय में उपलब्ध सामग्री की पूर्ण जानकारी हो जाती हैं

उपयुर्क्त अनिवार्यताओं के बावजूद पर्याप्त कर्मचारी उपलब्ध न होने, संग्रह परीक्षण पर होने वाले व्यय, संग्रह के भौतिक सत्यापन की जटिलताओं, पुस्तकालय को

संग्रह परीक्षण के दौरान आवश्यक रूप से बन्द करने की अनुमति अधिकारियों से प्राप्त न होने के कारण संग्रह परीक्षण नहीं हो पाता। किन्तु किसी भी प्रकार इन अवरोधों की परवाह न करते हुए संग्रह परीक्षण की अनिवार्यता को टालना नहीं चाहिये।

## 12.3 पाठकों की मनोवृत्ति

पुस्तकालय में वार्षिक सत्यापन की आवश्यकता पुस्तकों को अपने वास्तविक स्थान से अनुपयुक्त स्थान पर भूलवश अथवा किसी अन्य कारण से चले जाने के कारण होती है। इसमें भण्डारण कक्ष में पाठकों का मुक्त प्रवेश (Open access) मुख्य रूप से जिम्मेदार हैं पुस्तको के बारे में पाठकों की निम्न प्रकार की मनोवृत्ति होती है -

1. ऐसे पाठक भी होते हैं कि पुस्तकों की चोरी करने के लिए पर्याप्त सुविधा, सुअवसर तथा स्थिति होने पर भी कीमती से कीमती तथा आवश्यक एवं मनमोहक पुस्तकों की चोरी किसी भी स्थिति में नहीं करेंगे।

2. ऐसे पाठक होते हैं जो पुस्तकों को गायब करने में बड़े ही कलाकार होते हैं, वे असुविधा की स्थिति में, अवसर न मिलने, तथा पर्याप्त सतर्कता की स्थिति में भी पुस्तकों की चोरी करने में नहीं चूकेंगे।

3. जिनकी मनोवृत्ति चोरी करने की नहीं होती है परन्तु अवसर पाने पर चोरी करने की भावना उनके मन में जागृत हो जाती हैं ।

4. पुस्तकों की कमी तथा उपयोग का अवसर न मिलने के कारण भी कुछ पाठक चोरी करने के लिए तत्पर हो जाते हैं।

5. कुछ लोगों में कुछ मानसिक रोग होता है जिसे बिब्लियोमनिया (Bibliomania) कहते हैं। ऐसे लोगों को पुस्तक चुराने की या उड़ा देने का लालच होता है। अवसर मिलने पर ऐसे लोग इस मानसिक रोग से ग्रस्त होने के कारण पुस्तकें चुराते हैं।

## 12.4 वार्षिक सत्यापन से लाभ/हानियाँ

वार्षिक सत्यापन से पुस्तकालय को निम्न लाभ होते हैं -

1. संकलन का निरीक्षण एवं सत्यापन करने से कितनी पुस्तकें वस्तुतः चोरी चली गयी हैं, उनका विवरण एवं संख्या ज्ञात हो जाता है।

2. सत्यापन के पश्चात जिन पुस्तकों की अधिक माँग होती है अथवा जो आवश्यक

HMDC-019

एवं अधिक उपयोगी होती है उनको पुनः क्रय करके सुलभ कर दिया जाता है।

3. पुस्तकों के बाहुल्य तथा आकलन की असावधानी के कारण प्रायः पुस्तकें अपने उपयुक्त स्थान से विचलित हो जाती है और अनुपयुक्त स्थान पर रख दी जाती है। ऐसी पुस्तकों को ढूँढ़ निकालना सरल नहीं होता और पाठक भटकते फिरते हैं। अतः सत्यापन के दौरान उनको पुनः सही स्थान पर रख देते हैं।

4. ग्रन्थालय कर्मचारी को पुस्तकों का पूर्ण ज्ञान सत्यापन करने से हो जाता है। अतः पाठकों को संदर्भ सेवा प्रदान करने में सुविधा होती है।

5. सत्यापन से उन पुस्तकों का सर्वेक्षण करने का अवसर मिल जाता है, जो किसी कारण वश नष्ट हो रही हैं अथवा जिनकी जिल्द कमजोर हो गयी हैं अथवा जिनके पत्रे निकल रहे हैं।

6. समय-समय पर सत्यापन एवं परीक्षण करने से पुस्तकों की सफाई भी हो जाती है जिससे पुस्तकों को नष्ट करने वाले कीड़ों तथा धूल की जमावट से क्षति पहुँचने से रोका जा सकता है।

7. इससे यह निश्चित करने का अवसर मिलता है कि पुस्तकों के खोने के लिए कहाँ तक कर्मचारी की असावधानी रही अथवा उनकी किन कठिनाइयों के कारण पुस्तकें गायब होती हैं, जिससे उसे रोकने के लिए समुचित व्यवस्था की जा सके।

8. पुस्तकों की अनेक अशुद्धियों तथा लेबिलों (Lables) आदि की कमियों को पूरा करने का अवसर मिल जाता है।

**हानियाँ**

1. इससे ग्रन्थालय के नियमित सेवा कार्य में रूकावट पैदा होने लगती है।

2. पुस्तकों की संख्या जिन ग्रन्थालयों में अधिक होती है, उनका सत्यापन करना सरल कार्य नहीं होता क्योंकि इस कार्य में अधिक समय तथा कर्मचारियों की आवश्यकता पड़ती है।

3. कर्मचारियों का अधिकांश समय सत्यापन में बीत जाता है, जिससे पुस्तकालयीय सेवायें बाधित होती हैं और सही नतीजा प्राप्त नहीं होता।

## 12.5 सत्यापन की प्रचलित विधियाँ

निम्नलिखित विधियों का प्रयोग सत्यापन के लिए किया जाता है -

1. परिग्रहण रजिस्टर के द्वारा

2. परिग्रहण संख्याओं को वर्गांकों के अनुसार पृथक पृथक रजिस्टर के सीटों द्वारा
3. संख्या को गिनकर
4. निधानी सूची के द्वारा
5. पत्रकों पर संख्या छपवाकर या लिखकर
6. कम्प्यूटरीकृत सत्यापन

उपरोक्त विधियों का विस्तृत वर्णन निम्नानुसार है।

## 12.5.1 संख्या को गिनकर

जिन पुस्तकालयों में पुस्तकों तथा अन्य सूचना सामग्री की संख्या बहुत सीमित होती है, वहाँ पर उस सामग्री की सामान्य गिनती करके भी भण्डार सत्यापन किया जा सकता है। यदि पुस्तकों की संख्या उतनी ही पायी जाती है, जितनी संख्या परिग्रहण रजिस्टर में है, तब कोई समस्या पैदा नहीं होती। लेकिन यदि कुछ संख्या कम पायी जाती है, तब इस विधि में यह जान पाना मुश्किल होता है कि कौन सी पुस्तक या पाठ्य सामग्री अनुपस्थित है। ऐसी स्थिति में पुनः एक एक पुस्तक को आगे वर्णित विधियों से सत्यापन करना होगा।

## 12.5.2 पत्रकों पर संख्या मुद्रित अथवा लिखकर

सत्यापन के बड़े बड़े पत्रकों (cards) पर हजार संख्या के परिग्रहण संख्या को छपवा कर, पुस्तकों के परिग्रहण संख्या से मिलान करके, उनकी संख्या को काट दिया जाता है। यदि किसी ग्रन्थालय विशेष में 50 हजार पुस्तकें है तो 50 पत्रकों पर उनकी संख्या छपा ली जाती है। इसके पश्चात प्रत्येक फलक (shelf) पर जाकर पुस्तकों के परिग्रहण संख्या (Accession number) से मिलान करके उन संख्याओं को काट देते हैं या टिक (Tick) कर देते हैं। इसी प्रकार निर्गम की गयी पुस्तकों अथवा जिल्दसाजी के लिए दी गयी पुस्तकों के अभिलेख से मिलान करने के पश्चात जितनी भी पुस्तकें अन्य स्थानों पर हैं, उनका मिलान करते हैं। इसके पश्चात उन संख्याओं को अलग से किसी कागज पर उतार कर खोई हुई पुस्तकों की सूची (list), उनके परिग्रहण संख्या, क्रामक संख्या, आख्या, लेखक आदि का विवरण के साथ तैयार करके उन्हें पुनः खोजते है। अन्त में जो पुस्तकें नहीं मिलती है, उनको खोया मान लिया जाता है।

इस विधि से पुस्तकों का सत्यापन करने से उतना ही अधिक समय लगता है, जितना परिग्रहण पंजी से सत्यापन करने में लगता है। परन्तु पृथक-पृथक पत्रकों के कारण अनेक लोग इस कार्य को एक साथ कर सकते हैं। इसमें पुस्तकों की संख्या उनकी



NMDC-019

क्रामक संख्या के अनुसार फलकों पर आकलित न होने के कारण अनेक पत्रकों से जगह जगह पर जाकर परिग्रहण संख्या से मिलान करने पर ही सत्यापन का कार्य सम्भव होता है। अतः इसमें अधिक समय एवं श्रम लगता है।

### 12.5.3 परिग्रहण पंजी के द्वारा सत्यापन

यह विधि सबसे सरल विधि है। परिग्रहण पंजी को फलकों तक ले जाकर प्रत्येक पुस्तक का उसके परिग्रहण संख्या से मिलाकर पंजी (Register) की संख्या पर निशान लगा देते हैं। इस प्रकार परिग्रहण पंजी (accession Register) से सभी फलकों की पुस्तकों तथा निर्गमन आदि के अभिलेख से पुस्तकों का मिलान करने के पश्चात जिन किताबों की संख्या टिक (Tick) नहीं हो पाती है, उनका पूरा विवरण उतारकर खोई हुई पुस्तकों की एक सूची तैयार कर लेते हैं। इस सूची की सहायता से उन्हें पुनः ढूँढते हैं और इस प्रकार जो पुस्तकें नहीं मिल पाती हैं, उन्हें खोई हुई मान लेते हैं।

प्रत्यक्ष रूप से यह विधि बड़ी ही सुगम एवं सरल प्रतीत होती हैं परन्तु इसमें अधिक समय और श्रम लगता है। क्योंकि फलकों (Shelves) पर पुस्तकें, वर्गीकृत क्रम में क्रामक संख्या (Call number) के क्रम में व्यवस्थित होती है और परिग्रहण पंजी में पुस्तकों की प्रविष्टियाँ संख्या के अनुक्रम में होती है। अतः फलकों पर वर्गीकृत अवस्था में होने के कारण वे दूर दूर होती हैं, जिससे उनके सत्यापन में देरी होती है। अतः फलकों पर वर्गीकृत अवस्था में होने के कारण वे दूर दूर होती हैं, जिससे उनके सत्यापन में समय समय एवं श्रम अधिक लगता है। कोई पुस्तक जो किसी फलक पर होती है, उसकी परिग्रहण संख्या किसी अन्य परिग्रहण पंजी में होती है। अतः बार-बार अनेक परिग्रहण पंजी (Accession Register) के पन्ने टटोलने पड़ते हैं। इसमें समय अधिक लगता है। पंजी (Register) में बार-बार टिक लगाने तथा पन्ने उलटने से पंजी (Register) गन्दे हो जाते हैं और उनके पन्ने भी फटने लगते हैं। पुस्तकों का संकलन जिस ग्रन्थालय में अधिक होता है, उसमें इस विधि से सत्यापन करना कठिन कार्य हो जाता है। केवल छोटे संकलन के ग्रन्थालयों में इनकी सहायता से सत्यापन आसानी से किया जा सकता है।

### 12.5.4 पृथक-पृथक पंजी (Register) पृष्ठों पर परिग्रहण संख्या के द्वारा सत्यापन करना

परिग्रहण पंजी (Accession Register) से सत्यापन करने की कठिनाइयों तथा पंजी (Register) को क्षतिग्रस्त एवं भद्दापन होने से बचने की दृष्टि से दूसरी विधि को अपनाया जाता है। इस विधि में पृथक-पृथक पंजी (Register)के पृष्ठों पर



NMDC-019

परिग्रहण संख्या को उतार कर उसी प्रकार से सत्यापन किया जाता है जैसे परिग्रहण पंजी (Accession Register) से किया जाता है। अन्तर केवल इतना होता है कि इसमें केवल परिग्रहण संख्या से ही पुस्तकों का मिलान किया जाता है। अन्य विवरण जैसे लेखक, आख्या आदि इसमें सम्भव नहीं होता है। इसमें सुविधा यह होती है कि पंजी (Register) के पृष्ठों को ले जाने, मोड़ने आदि में सुविधा होती है और नष्ट होने पर दूसरी शीट (Sheet) सरलतापूर्वक सस्ते में तैयार की जा सकती है। इसमें संख्याओं को नम्बरिंग मशीन (Numbering Machine) से आसानी से छपवाया जा सकता है। इस विधि में वही त्रुटियाँ हैं जो परिग्रहण पंजी (Accession Register) से सत्यापन करने में होती है। परिग्रहण संख्या के बोलने और सुनने में प्रायः भूल हुआ करती है। अतः इसमें भी वही त्रुटि हो जाती है, जो परिग्रहण पंजी में होती है। यदि एक ही व्यक्ति परिग्रहण संख्या का मिलान करके संख्याओं को पृष्ठों से काटने का कार्य करते हैं तो समय अधिक लगता है और कभी-कभी संख्या को देखने और काटने का कार्य एक ही व्यक्ति द्वारा करने से समय अधिक लगता है और कभी-कभी संख्या को देखने और काटने में भूल हो जाती है। संख्या कुछ और है और दूसरी संख्या पर टिक लग जाता है।

इसमें भी पुस्तकें परिग्रहण संख्या की अपेक्षा फलकों पर क्रामक संख्या के अनुसार होती है। परिग्रहण संख्या के अनुसार न होने से टिक करने अथवा काटने में और पृष्ठों के पलटने में अधिक समय लगता है।

इस विधि को और सरल तथा समय कम लगाने की दृष्टि से परिग्रहण संख्या को क्रमानुसार वर्गांकों अथवा वर्गीकरण के मुख्य वर्गों के अनुसार पृथक-पृथक रजिस्टर शीटों (Sheets) पर उतांर लेते हैं।

इस विधि में भी जिन पुस्तकों की संख्या को टिक नहीं किया गया होता है, उनके परिग्रहण संख्या को उतार लिया जाता है और उनकी एक सूची पूर्ण विवरण सहित तैयार करके पुनः खोजा जाता है। अन्त में जो पुस्तकें नहीं मिलती हैं, उन्हें खोया मान लिया जाता है तथा आगे की कार्यवाही हेतु प्रस्तुत कर दिया जाता है।

## 12.5.5 फलक सूची के द्वारा सत्यापन विधि

सबसे सरल, उपयोगी एवं वास्तविक विधि फलक सूची (shelf list cards) की सहायता से सत्यापन करना होता है। इस फलक सूची के लिए पुस्तकों का प्रसूचीकरण (Cataloguing) करते समय एक पृथक पत्रक मुख्य संलेख (Main entry)की भाँति तैयार कर लिया जाता है।फलक सूची के पत्रकों को कार्ड इन्डेक्स कैबिनेट (Card Index Cabinet) की भाँति एक पृथक पेटिका में क्रम संख्या के





HMDC-019

अनुक्रम में व्यवस्थित किया जाता है। यह पेटिका सुरक्षित ढंग से ग्रन्थालयी के कक्ष में रखी जाती है, जिससे कोई उन पत्रकों को गायब न कर सके। फलक सूची के पत्रकों का आकलन क्रम वही होता है, जिस अनुक्रम में पुस्तकें फलकों (Shelves) पर व्यवस्थित की गयी होती हैं। ज्यों ज्यों पुस्तकें ग्रन्थालय में आती है। और उनका प्रसूचीकरण और वर्गीकरण होता है, उसी के साथ ही साथ प्रत्येक पुस्तक की एक फलक सूची पत्रक भी तैयार कर ली जाती है, जिसे नित्य प्रति प्रसूची पत्रकों (Catalogue Card) को पत्रक पेटिका (Card Cabinet) में आकलित करते हैं। उसी प्रकार फलक सूची पेटिका में क्रामक संख्या के अनुक्रम में उन्हें व्यवस्थित कर दिया जाता है। अतः फलक सूची हमेशा अद्यतन (Up to date) रहती है। पत्रकों से निर्मित किए जाने से इसमें वर्धनशीलता बनी रहती हैं। अतः पत्रकों को किसी भी समय किसी स्थान पर फलक सूची में समायोजित कर सकते हैं।

सत्यापन करते समय फलक सूची के पात्रक (Trawer or Tray) को फलकों के पास ले जाकर एक व्यक्ति पुस्तकों को बोलता जाता है, दूसरा उसे फलक सूचीके पत्रकों से मिलान करता रहता है। जो पुस्तकें नहीं मिलती हैं, उन्हें या तो पात्रक में खड़ा कर दिया जाता है अथवा अलग निकाल दिया जाता है। ऐसे पत्रकों को पुस्तकों के निर्गमन तथा जिल्दसाजी आदि के अभिलेखों से सत्यापन करने के पश्चात, जो पुस्तकें नहीं मिलती हैं, उनकी एक पृथक सूची तैयार करके खोजते हैं। खोजने के बाद जितनी पुस्तकें नहीं मिलती हैं, उन्हें खोया हुआ मान लेते हैं।

सत्यापन की यह प्रणाली अत्यन्त सरल और कम समय लेने वाली होती हैं और पुस्तकों का पूर्ण सत्यापन इससे हो जाता है। इसमें संख्याओं के अनुसार सत्यापन करने में जो भूल होती है, उसकी सम्भावना कम होती है। आवश्यकता पड़ने पर अधिक से अधिक व्यक्ति एक ही साथ सत्यापन का कार्य कर सकते हैं क्योंकि पत्रकों के पात्रक अनेक होते हैं और अलग अलग फलकों का सत्यापन इनके द्वारा करना सरल हो जाता है। इससे सत्यापन का कार्य भी शीघ्र खत्म किया जा सकता है। इसकी विशेषता यह कि फलक सूची पूर्ण होती है। अतः सत्यापन के लिए अन्य किसी साधन की आवश्यकता नहीं होती है।

### 12.5.6 बारकोड स्कैनर द्वारा

कम्प्यूटराइज्ड पुस्तकालयों में लाइब्रेरी ऑटोमेशन सॉफ्टवेयर के माध्यम से भी पुस्तकों का भौतिक सत्यापन किया जाता है। सर्वप्रथम कम्प्यूटर में उपलब्ध डाटाबेस से पुस्तकालय में उपलब्ध समस्त पुस्तकों की संख्या तथा निर्गत पुस्तकों की संख्या की

जानकारी प्राप्त हो जाती है। इसके बाद बारकोर्ड स्केनर के माध्यम से या आर एफ आई डी रीडर से स्टैक में उपलब्ध पुस्तकों की जानकारी प्राप्त कर ली जाती हैं। अन्त में एक रिपोर्ट तैयार की जाती है, जिससे खोयी हुई (missing/misplaced)पुस्तकों की जानकारी रहती है, जिसे आगे की कार्यवाही हेतु सक्षम अधिकारियों को प्रस्तुत किया जाता है।

## 12.6 वार्षिक सत्यापन

वार्षिक सत्यापन की रिपोर्ट आ जाने के बाद आगे क्या कार्यवाही की जाये, यह एक बड़ी समस्या होती है। सर्वप्रथम अपने स्थान से अन्यत्र पायी जाने वाली पुस्तकों को नियत स्थान पर रखा जाये। फटी हुई अवस्था में पायी गयी पुस्तकों को बाइन्डिंग के लिये भेजा जाये। पाठकों के पास बहुत समय से लंबित पुस्तकों को पुस्तकालय में वापिस बुलाने के लिये स्मरण पत्र भेजा जाये। तद्पश्चात अनुपस्थित पायी गयी पुस्तकों को उच्च अधिकारियों या पुस्तकालय समिति के समक्ष क्षति मानकर प्रत्याहरण की (Written off)आगे की कार्यवाही हेतु प्रस्तुत किया जाता है।

1959में भारत सरकार द्वारा गठित ग्रन्थालय परामर्श समिति (Advisory Committee for Library) ने इस प्रथा को अनुचित ठहराया है। इसके अनुसार जब तक ग्रन्थालयी अथवा उसके कर्मचारियों का सहयोग पुस्तकों को गायब करने में सिद्ध नहीं होता है, उस स्थिति में इसके लिए उन्हें किसी प्रकार का दण्ड देना अनुचित बताया है। विदेशों में ग्रन्थालय स्टाफ को कभी भी किसी प्रकार से दण्डित नहीं किया जाता। भारत सरकार के शिक्षा मन्त्रालय के माडल पब्लिक लाइब्रेरी बिल (Model Public Library Bill) के अन्तर्गत भी ऐसा प्रावधान किया गया है, लेकिन अभी तक इस दिशा में उचित लिखित दिशा निर्देश नहीं हैं।

भारतीय सार्वजनिक एवं शैक्षणिक ग्रन्थालयों में कहीं-कहीं पर ग्रन्थालयी तथा अन्य स्टाफ से खोई पुस्तक की कीमत वसूल कर ली जाती है। परन्तु यह प्रथा यथोचित नहीं है। कई पुस्तकालयों में 1000 पर 3 पुस्तकों का खो जाना एक सामान्य क्षति मानकर (written off) इस संदर्भ का आदेश दिया जाता है।

## 12.7 सारांश

पुस्तकालय संग्रह का समय-समय पर भौतिक सत्यापन आवश्यक होता है, जिससे अव्यवस्थित पुस्तकें यथास्थान पहुँच पाती हैं। फटी पुस्तकों को जिल्दसाजी के लिए भेज दिया जाता है तथा संग्रह में आयी अनियमितताएँ स्वतः दूर हो जाती है, जिससे



HMDC-019

पुस्तकालयी सेवाओं को प्रभावी तरीके से पूरा किया जा सकता है। पुस्तकालय कर्मियों एवं अधिकारियों को संग्रह सत्यापन से संग्रह की जानकारी भी हो जाती है तथा कमियों का पता चल जाता है।

संग्रह सत्यापन की रिपोर्ट उच्च अधिकारियों को प्रस्तुत करके पायी गई कमियों को पूरा करने का प्रयास करना चाहिये। खोई हुई पुस्तकों के लिए पुस्तकालय कर्मचारियों को जिम्मेदार नहीं मानना चाहिये, बल्कि सुरक्षा व्यवस्था में सुधार करके आगामी क्षति को रोकने का प्रयास करना चाहिये।

## 12.8 अभ्यास प्रश्न

1. पुस्तकालय में वार्षिक सत्यापन क्यों आवश्यक हैं?
2. वार्षिक सत्यापन से क्या लाभ है?
3. वार्षिक सत्यापन की प्रचलित विधियाँ कौन कौन सी हैं?
4. वार्षिक सत्यापन की फलक सूची (Shelf list) विधि का वर्णन करें तथा इसकी विशेषताऐं बताऐं।

## 12.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. त्रिपाठी, एस. एम. (1983) : आधुनिक ग्रन्थालय : व्यवस्था एवं संचालन के मूलतत्व। दिल्ली, अजन्ता पब्लिकेशन्स।
2. मुखर्जी, सुबोध कुमार (1988) : पुस्तकालय विज्ञान। लखनऊ : अपाला प्रकाशन।
3. सुन्देश्वरन, के.एस. (1991) : शैक्षणिक पुस्तकालय : संगठन तथा प्रबंध। नई दिल्ली, एस.एस. पब्लिकेशन्स।
4. अग्रवाल, श्याम सुन्दर (1994) : ग्रन्थालय तथा समाज । जयपुर, आर.बी.एस.ए. पब्लिशर्स।
5. शर्मा, पाण्डेय एस.के. (1995) : पुस्तकालय और समाज। नई दिल्ली, ग्रन्थ अकादमी।

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय
प्रयागराज

# BLIS-102
# पुस्तकालय प्रबन्धन

## खण्ड

## 4

## प्रबन्धन एवं नियोजन


इकाई - 13
पुस्तकालय समिति 245

इकाई - 14
पुस्तकालय वित्त : बजट निर्माण की विधियाँ एवं वित्तीय नियन्त्रण 257

## विशेषज्ञ समिति - पाठ्यक्रम अभिकल्पन

| | |
|---|---|
| **डॉ0 पाण्डेय एस0 के0 शर्मा** | अवकाश प्राप्त मुख्य ग्रंथालयी, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली, |
| **डॉ0 ए0 पी0 गक्खर** | विश्वविद्यालय ग्रंथालयी, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इला0 |
| **डॉ0 यू0 सी0 शर्मा** | एसोसियेट प्रो0 एवं विभागाध्यक्ष, बी0आर0 अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा |
| **डॉ0 सोनल सिंह** | एसोसिएट प्रोफेसर, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन |
| **डॉ0 ए0 पी0 सिंह** | एसोसिएट प्रोफेसर, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी |
| **डॉ0संजीव सर्राफ** | उपपुस्तकालयाध्यक्ष, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी |
| **डॉ0 टी0एन0 दुबे** (सदस्य सचिव) | विश्वविद्यालय ग्रंथालयी, उ0प्र0रा0ट0 मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद |

## सम्पादक मण्डल

| | |
|---|---|
| **डॉ0 टी0 एन0 दुबे** | विश्वविद्यालय ग्रंथालयी, उ0 प्र0 रा0ट0 मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद |
| **श्री आर0 जे0 मौर्य** | सहायक ग्रन्थालयी, उ0 प्र0 रा0ट0 मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद |
| **श्री राजेश गौतम** | प्रवक्ता, पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान विभाग, उ0 प्र0 रा0ट0 मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद |

## लेखक

| | |
|---|---|
| **डॉ0 एच0 के0 चक्रवर्ती** | एसोसिएट प्रोफेसर, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी |

## परिमापक

| | |
|---|---|
| **डॉ0 वेदानन्द त्रिपाठी** | ग्रन्थालयी, नारायण पी0 जी0 कालेज, शिकोहाबाद, (उ0प्र0) |

प्रस्तुत पाठ्य सामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के स्वयं के हैं।

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, **प्रयागराज**

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य-सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।



NMDC-019

# खण्ड परिचय : समिति एवं वित्तिय प्रबन्धन

पुस्तकालय एक सामाजिक संस्था है, जो समाज द्वारा, समाज के लिए तथा समाज का है। अतः इसे अत्यन्त सुचारू रूप से संचालित किया जाना चाहिए, जिससे यह समाज के समक्ष एक आदर्श के रूप में स्थापित हो सके। पुस्तकालय एक आदर्श के रूप में तभी स्थापित होगा, जब वह समाज के समान्य तथा विशिष्ट वर्ग की पठन-पाठन सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सुचारू रूप से कार्य करें। यह तभी सम्भव होगा, जब पुस्तकालय का संगठन एवं प्रबन्धन अत्यन्त सुदृढ़ हो तथा उनके विभिन्न क्रियाकलापों के मध्य सामंजस्य स्थापित हो। जिसके लिए पुस्तकालय प्राधिकरण तथा समिति का होना नितान्त आवश्यक है।

पुस्तकालय प्राधिकरण से अभिप्राय वैधानिक या स्वात्वाधिकार सम्बन्धी शक्ति से होता है, जो एक व्यक्ति विशेष या व्यक्तियों के समूह के पास संस्था या संगठन की सम्पूर्ण प्रबन्धकीय क्रियाकलापों को संचालित एवं नियन्त्रित करने के लिए होती है। प्राधिकरण एक लोकतांत्रिक सत्ता के समान होती है न कि एकांकी सत्ता के समान। पुस्तकालय के सन्दर्भ में प्राधिकरण का विशेष महत्व होता है क्योंकि यह दायित्वों के लिए आधार का कार्य करता है, जो पुस्तकालय में सभी अधीनस्थों एंव कर्मचारियों को एक सूत्र में पिरोकर रखने वाली शक्ति के समान होता है। इसका प्रमुख कार्य पुस्तकालय के लिए नीतियों का निर्धारण तथा आवश्यकतानुसार मार्गदर्शन देना एवं निर्देशों का पालन करना व कराना है। पुस्तकालय प्राधिकरण उनके प्रकार और प्रकृति पर निर्भर करता है। केन्द्रीय विश्वविद्यालय पुस्तकालय के प्राधिकरण में राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति, विश्वविद्यालय के सीनेट सिन्डीकेट, कुलपति तथा कार्य समिति सम्मिलित होते हैं। प्रादेशिक विश्वविद्यालय के प्राधिकरण में राज्यपाल नियन्त्रक के रूप में तथा सम्बन्धित विश्वविद्यालय के कुलपति, सीनेट, कार्यपरिषद तथा पुस्तकालयाध्यक्ष होते हैं तथा महाविद्यालय का पुस्तकालय प्रबन्ध समिति के निर्देशन में संचालित होता है। प्रबन्ध समिति ही प्राधिकरण या नियन्त्रक का कार्य करती है।

पुस्तकालय के संगठन एवं प्रबन्धन का दूसरा पहलू पुस्तकालय समिति है जो व्यक्तियों का ऐसा समूह है, जिसका गठन किसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए पुस्तकालयों में किया जाता है। यह पुस्तकालय सम्बन्धी मामलों में, पुस्तकालयाध्यक्षों को सहायता प्रदान करती है तथा पुस्तकालय नीतियों का निर्धारण करती है। इसका प्रमुख कार्य आदर्श भवन का निर्माण करवाना, बजट का निर्धारण, श्रेष्ठ पाठ्य संग्रह हेतु नीतियों का निर्धारण, पुस्तकालय नियमावली बनवाना, पुस्तकालय आय वृद्धि पर विचार करना, योग्य तथा प्रशिक्षित कर्मचारियों की नियुक्ति तथा उनके कार्यों एवं कर्त्तव्यों का निरीक्षण करना आदि है। इसके अतिरिक्त खण्ड में इसके गठन, आवश्यकता कर्तव्य एवं अधिकार,



HMDC-019

समिति के प्रकार तथा पुस्तकालयाध्यक्ष का समिति के प्रति कर्त्तव्य एवं उत्तरदायित्वों का विस्तृत उल्लेख किया गया है।

पुस्तकालय एक अलाभकारी एवं सामाजिक संस्था है जिसके प्रमुख आधार भवन, पाठक तथा पुस्तक होते हैं। पाठकों की मुख्य आवश्यकता पुस्तकें तथा उसके अधिकतम उपयोग हेतु, व्यवस्थित पुस्तक संग्रह हेतु भवन की आवश्यकता होती है, जिसमें निरन्तर वृद्धि होती रहती है। इन समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु वित्त की आवश्यकता होती है, जो किसी भी पुस्तकालय के पास सीमित रूप से होती है। अतः पुस्तकालयों को अपनी समस्त गतिविधियों को सीमित वित्त में ही संचालित करना होता है, जिसके लिए पुस्तकालय बजट का निर्धारण अत्यन्त आवश्यक है। पुस्तकालय बजट एक ऐसी विवरणिका है, जिसमें पुस्तकालय के समस्त व्यय जैसे वेतन, प्रलेख एवं फर्नीचर क्रय, उपकरण क्रय, भवन मरम्मत व्यय आदि, प्रस्तुत किया जाता है तथा प्रत्येक मद में होने वाले व्यय और उनके कारणों को स्पष्ट रूप से अंकित किया जाता है। खण्ड में पुस्तकालय बजट निर्माण के लिए वित्तीय प्रबन्धन के सिद्धान्तों, स्रोतों, प्रमुख मदों में होने वाले व्यय, उनके आकलन की विधि, बजट निर्माण की विधि, निर्माण के मानदंड एवं मानकों, बजट तैयार करते समय ध्यान देने योग्य कारकों तथा आदर्श बजट के प्रारूप का विस्तृत रूप से विवरण प्रस्तुत किया गया है।

इस खण्ड को दो इकाईयों क्रमशः पुस्तकालय समिति एवं पुस्तकालय वित्त : बजट निर्माण की विधियों एवं वित्तीय नियन्त्रण में विभक्त कर पाठ्यक्रम सम्बन्धी सामग्रियों को प्रस्तुत किया गया है। जिसका अध्ययन कर छात्र/छात्रायें पूर्णतया लाभान्वित होंगे।

# इकाई -13 : पुस्तकालय समिति

## इकाई की रूपरेखा


13.0 उद्देश्य

13.1 विषय परिचय

13.2 पुस्तकालय प्राधिकरण से आशय

13.3 पुस्तकालय प्राधिकरण एवं पुस्तकालय समिति में अन्तर

13.4 पुस्तकालय समिति : अर्थ एवं परिभाषा

13.5 पुस्तकालय समिति की आवश्यकता एवं उद्देश्य

13.6 पुस्तकालय समिति का गठन

13.7 पुस्तकालय समिति के प्रकार

13.8 पुस्तकालय समिति के कार्य एवं अधिकार

13.9 पुस्तकालय का पुस्तकालय समिति के प्रति कर्त्तव्य एवं उत्तरदायित्व

13.10 सारांश

13.11 अभ्यास - कार्य

13.12 संदर्भ ग्रन्थ


## 13.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में पुस्तकालय प्राधिकरण एवं पुस्तकालय समिति को परिभाषित करते हुए, एक पुस्तकालय में पुस्तकालय समिति के गठन की आवश्यकता एवं उद्देश्यों पर प्रकाश डाला गया है। इसके साथ ही इस इकाई में पुस्तकालय समिति के विविध प्रकारों, उसके कार्यों एवं अधिकारों को भी स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

इसी इकाई में पुस्तकालय समिति के प्रति पुस्तकालयाध्यक्ष के कर्त्तव्यों एवं उत्तरदायित्वों को भी स्पष्ट किया गया है। आशा है कि जिज्ञासु पाठक प्रस्तुत इकाई के माध्यम से पुस्तकालय समिति के प्रभावों एवं महत्व को समझने में सक्षम हो सकेंगे।

## 13.1 विषय - परिचय

प्रस्तुत अध्याय में पुस्तकालय समिति के गठन की आवश्यकता, उद्देश्य, समिति के कार्य, प्रकार इत्यादि की विस्तार पूर्वक व्याख्या प्रस्तुत की गयी है।

यह सर्वविदित है कि पुस्तकालय एक सामाजिक संस्था है और जो प्रत्यक्षतः

सामाजिक हितों से सम्बद्ध है। अतः समाज के प्रति पुस्तकालय के उत्तरदायित्व एवं महत्ता को ध्यान में रखते हुए पुस्तकालय के संगठन एवं प्रबन्ध को सुदृढ़ आधार प्रदान करने तथा पुस्तकालय के विविध क्रियाकलापों के मध्य सामंजस्य एवं नियंत्रण बनाये रखने हेतु पुस्तकालय समितियों का गठन किया जाता है।

सामान्यतः पुस्तकालय समिति अध्यक्ष, सचिव एवं कुछ विशिष्ट सदस्यों का एक समूह है, जो पुस्तकालय की गतिविधियों एवं क्रियाकलापों को श्रेष्ठ बनाये रखने हेतु नियमों एवं अधिनियमों का निर्माण करते हैं,साथ ही समय-समय पर पुस्तकालय प्राधिकारियों को पुस्तकालय के सुचारु संचालन हेतु परामर्शात्मक मार्ग दशर्न प्रदान करते रहते है।

पुस्तकालय समिति निरन्तर पुस्तकालय के विविध क्रियाकलापों एवं सेवाओं पर नजर रखती है और भविष्य की आवश्यकताओं का आकलन कर पुस्तकालय को अद्यतन (Up to Date) बनाये रखने के हेतु सुझाव देती है। साथ ही साथ भविष्य में आने वाली समस्याओं के प्रति भी प्राधिकारियों को सावधान करती है।

## 13.2 पुस्तकालय प्राधिकरण से आशय -

प्राधिकरण से तात्पर्य किसी संस्था या संगठन को सुचारू रूप से संचालित करने वाली शक्ति या अधिकार या सत्ता से है। इसके अन्तर्गत एक व्यक्ति विशेष अथवा व्यक्तियों के एक समूह के पास संस्था अथवा संगठन की सम्पूर्ण प्रबन्धकीय क्रिया कलापों को संचालित करने एवं नियंत्रित करने का अधिकार एवं शक्ति होती है। वस्तुतः यह संस्था विशेष में सत्ता के समान होती है, जिसके गठन का प्रमुख उद्देश्य प्रशासकीय कार्यों की व्यवस्था करना तथा अधिनस्थों के मध्य नियन्त्रण एवं सामन्जस्य स्थापित करते हुए उनसे उनके कर्त्तव्यों का पालन कराना होता है।

प्राधिकार वास्तव में प्रबन्धकीय अधिकार होता है, जिसमें कि वैधानिक शक्ति निहित होती है। प्राधिकरण प्रबन्धन की उस अवधारणा पर आधारित है, जिसके अन्तर्गत कहा जाता है कि प्रबन्धन दूसरों के साथ मिल-जुलकर कार्य करने की कला तकनीकि है। दूसरे शब्दों में प्राधिकरण को यह सदैव ध्यान रखना चाहिए कि वह एक लोकतान्त्रिक सत्ता के समान रहें, न कि एकाकी सत्ता के समान। प्राधिकरण को धैर्यपूर्वक प्रयास कर अधिनस्थों के हृदय पर विजय प्राप्त करनी चाहिए, ताकि वे स्वेच्छा से ही प्राधिकरण की शक्ति को स्वीकार कर उनके आदेश का पालन करें।

पुस्तकालय के सन्दर्भ में प्राधिकरण अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं अनिवार्य रूप से आवश्यक है। चूँकि पुस्तकालय को सदैव ही एक सामाजिक एवं शैक्षणिक संस्था की

श्रेणी में रखा जाता है। अतः पुस्तकालयों का संगठन तथा प्रबन्धन जनतन्त्रात्मक सिद्धान्तों के आधार पर होना चाहिए तथा उनके कार्यों में एकाधिकारवाद या सत्तावाद के लिए कोई स्थान नहीं होना चाहिए। इसलिए ऐसी विशिष्ट संस्थाओं के सफल संचालन एवं नियन्त्रण हेतु पुस्तकालय प्राधिकारण का गठन किया जाता है।

साधारणतया पुस्तकालय प्राधिकरण का कार्य पुस्तकालय के लिए नीतियों का निर्धारण करना, आवश्यकतानुसार मार्गदर्शन देना और निर्देशों का पालन करना एवं कराना होता है। संक्षेप में पुस्तकालय प्राधिकरण वास्तव में दायित्वों के लिए आधार का काम करता है और यह पुस्तकालय संगठन में सभी अधिनस्थों एवं कर्मचारियों को एक सूत्र में पिरोकर रखने वाली शक्ति के समान होता है। इस सन्दर्भ में ''मूने महोदय'' ने ठीक ही कहा है कि - ''अधिकार सर्वोच्च समन्वयकारी शक्ति होती है।''

किसी पुस्तकालय प्राधिकरण के अन्तर्गत कौन-कौन प्राधिकारी हो सकता है? यह उस पुस्तकालय के प्रकार एवं प्रकृति पर निर्भर करता है। जैसे-किसी केन्द्रीय विश्वविद्यालय के प्राधिकरण के अन्तर्गत राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति, विश्वविद्यालय की सीनेट, सिन्डीकेट, कुलपति तथा कार्य समिति को सम्मिलित किया जाता है। इनके द्वारा ही संस्था के लिए नीतियों एवं निर्देशों का निर्धारण किया जाता है। इन नीतियों एवं निर्देशों के क्रियान्वयन हेतु पुरस्कार समितियाँ गठित की जाती हैं।

इसी प्रकार किसी प्रादेशिक विशविद्यालय में राज्यपाल अधिकृत नियन्त्रक के रूप में कार्य करता है, तथा उसे विश्वविद्यालय से सम्बन्धित सभी प्रकार की शक्तियाँ प्राप्त होती हैं। इस स्तर के विश्वविद्यालय पुस्तकालय के प्राधिकरण के अन्तर्गत कुलपति, रजिस्ट्रार, सीनेट, सिन्डीकेट, कार्य परिषद्, पुस्तकालयाध्यक्ष इत्यादि सम्मिलित किये जाते हैं। किसी महाविद्यालय का पुस्तकालय प्रबंध समिति के निर्देशन में संचालित होता है। अतः प्रबन्ध समिति ही महाविद्यालय पुस्तकालय में प्राधिकरण या नियन्त्रक का कार्य करती है।

**परिभाषा :-**

### 1. थियो हेमेन के अनुसार -

''प्राधिकरण वह उचित कानूनी शक्ति है जिसे धारण करने वाला अपने अधीन व्यक्तियों से कुछ करने या करने से विरत रहने के लिए कह सकता है और यदि वे इन निर्देशों का अनुसरण न करें तो प्रबन्धक इस स्थिति में होता है कि आवश्यक होने पर अनुशासन की कार्यवाही कर सके। यहाँ तक कि अधीन, व्यक्ति को नौकरी से अलग कर दें।''

HMDC-019

**2. मर्रे के अनुसार -**

"प्राधिकरण से आशय निर्णय करने के स्वत्व से होता है और शक्ति निर्णयों का पालन करने को बाध्य करती है।"

**3. कूण्ट्ज एवं डोनेल के अनुसार -**

"प्राधिकरण से तात्पर्य वैधानिक या स्वत्वाधिकार सम्बन्धी शक्ति से होता है।"

## 13.3 पुस्तकालय प्राधिकरण एवं पुस्तकालय समिति में अन्तर-

| पुस्तकालय प्राधिकरण | पुस्तकाल समिति |
|---|---|
| 1. पुस्तकालय प्राधिकरण कार्यकारिणी शक्ति से सम्पन्न एक परिषद् होता है। | 1. जबकि पुस्तकालय समिति केवल एक परामर्शात्मक निकाय होती है। |
| 2. पुस्तकालय प्राधिकरण, समिति के निर्णय या सुझावों को मानने के लिए बाध्य नहीं होती है। | 2. जबकि समिति प्राधिकरण के निर्णयों एवं निर्देशों को मानने के लिए बाध्य होती है। |
| 3. पुस्तकालय प्राधिकरण का प्राधिकारी या सर्वोच्च अधिकारी केवल एक व्यक्ति भी हो सकता है। | 2. पुस्तकालय समिति एक या एक से अधिक व्यक्ति का समूह होती है। |
| 4. प्राधिकरण किसी निर्धारित नीति को क्रियान्वित करने का विशेष कार्य-कारिणी अधिकार रखती है। | 2. पुस्तकालय समिति केवल किसी कार्य को करने या न करने के लिए परामर्श दे सकती है, परन्तु उसे क्रियान्वित नही कर सकती है। |
| 5. प्राधिकरण का गठन संविधान के अधीन किया जाता है। | 5. जबकि समिति का गठन प्राधिकरण द्वारा किया जाता है। |

## 13.4 पुस्तकालय समिति : अर्थ एवं परिभाषा :-

**अर्थ -**

समिति एक या एक से अधिक विशिष्ट व्यक्तियों का समूह होती है, जिसका गठन किसी विशिष्ट कार्य या उद्देश्य की प्राप्ति हेतु किया जाता है। सामान्यतः समिति के सदस्य सम्बन्धित विषय क्षेत्र के विशेषज्ञ होते हैं, जो किसी घटना या समस्या पर अनुसंधान करके अपनी रिपोर्ट एवं सुझाव समिति के माध्यम से प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुत करते हैं। संक्षेप में - "समिति कुछ विशिष्ट व्यक्तियों का वह समूह होती है, जिसे संस्था के कुछ निर्धारित कार्यों या उद्देश्यों को सामूहिक रूप से निष्पादित करने एवं कराने का अधिकार एवं उत्तरदायित्व सौपा जाता है।


NMDC-019

वर्तमान युग में लगभग सभी प्रकार की संस्थायें अपनी सेवाओं एवं कार्यों के सुव्यवस्थित संचालन एवं नियन्त्रण हेतु संगठन के प्रत्येक स्तर पर अलग-अलग प्रकृति की समितियाँ गठित करती हैं, चूँकि पुस्तकालय भी अन्य सामाजिक संस्थाओं की भाँति एक सामाजिक संस्था है और इनके द्वारा अनेक प्रकार के कार्य एवं सेवायें संचालित किये जाते हैं। अतः पुस्तकालय अपनी विभिन्न गतिविधियों के सफल संचालन एवं नियन्त्रण हेतु कई तरह की समितियों की स्थापना करती है।

पुस्तकालय समिति पुस्तकालय द्वारा संचालित किये जाने वाले विविध कार्यों एवं सेवाओं के लिए नीति निर्धारित करती है तथा विभिन्न व्यवस्थाओं एवं गतिविधियों में सुधार एवं उन्नति करते हुए उन पर नियन्त्रण स्थापित करती है। इस हेतु समिति को प्राधिकरण द्वारा विशेष कार्यकारिणी अधिकार एवं उत्तरदायित्व प्रदान किया जाता है। पुस्तकालय समिति का कार्य मात्र परामर्शात्मक मार्गदर्शन करना होता है, अर्थात् समिति का अधिकार मात्र परामर्श देने तक ही सीमित रहता है, जिसको मानना या नहीं मानना प्राधिकारी पर निर्भर करता है।

**परिभाषा -**

**1. थियोहैमन के अनुसार -**

"समिति कुछ नियुक्त किये हुए या चुने हुए व्यक्तियों का समूह है, जो उस समिति को आवंटित मामलों पर विचार - विमर्श हेतु एकत्र होते हैं। यह एक समूह के रूप में कार्य करती है और इस प्रकार अन्य प्रबंधकीय विधियों से भिन्न है। किसी समिति में व्यक्तियों का एक वर्ग सम्मिलित होता है, जिनके पास सामान्यतः अन्य कार्य होते हैं और उनका कार्य केवल अंशकालिक होता है।"

**2. एल॰ एम॰ हॉरर्ड के अनुसार -**

"पुस्तकालय समिति एक ऐसी समिति है, जो पुस्तकालय सेवा के प्रावधानों के लिए उत्तरदायी होती हैं।"

**3. विल्सन एवं टॉवर के अनुसार -**

"पुस्तकालय समिति पुस्तकालय के पैतृक संस्था की प्रतिनिधि होती है, इसके सदस्य पुस्तकालय की सेवाओं एवं संसाधनों के विकास में अभिरूचि रखने वाले होते हैं तथा इनका कार्य सूचनात्मक तथा परामर्शात्मक सलाहकार की तरह होता है अर्थात् इनकी शक्तियाँ बहुत कम होती हैं।



HMDC-019

## 13.5 पुस्तकालय समिति की आवश्यकता एवं उद्देश्य -

**आवश्यकता-**

पुस्तकालयों में पुस्तकालय समितियाँ गठित करने का प्रमुख कारण पुस्तकालयों के लिए स्पष्ट दिशा-निर्देश प्रदान करते हुए उनका चतुर्दिक विकास करना है। लेकिन इसके अतिरिक्त भी कई अन्य महत्वपूर्ण कारण है, जो पुस्तकालयों मे समितियों की आवश्यकता को प्रकट करते हैं, जो निम्न हैं–

1. पुस्तकालय की पैतृक संस्था एवं सामाजिक उत्तरदायित्वों की पूर्ति हेतु पुस्तकालय समिति का गठन अत्यन्त आवश्यक है।
2. पुस्तकालय के विविध क्रियाकलापों के मध्य सामंजस्य एवं नियन्त्रण स्थापित करने हेतु समिति आवश्यक है।
3. पुस्तकालय को संरक्षण एवं मार्गदर्शन प्रदान करने हेतु समिति आवश्यक है।
4. पुस्तकालय की अर्थव्यवस्था को नियन्त्रित कर, उसकी आय एवं व्यय में सामन्जस्य स्थापित करने हेतु समिति आवश्यक है।
5. पुस्तकालय के नेतृत्व एवं कुशल संचालन हेतु समिति अत्यन्त आवश्यक है।
6. पुस्तकालय कर्मचारियों, पाठकों के साथ ही सामाजिक हितों की रक्षा हेतु पुस्तकालय समिति आवश्यक है।
7. पुस्तकालय की विविध क्रियाकलापों जैसे-उपार्जित आय, खर्चों कर्मचारियों की नियुक्ति, पुस्तक चयन एवं क्रय, भवन, फर्नीचर इत्यादि व्यवस्थाओं में पारदर्शिता एवं विश्वासनीयता बनाये रखने हेतु समिति अत्यन्त आवश्यक है।
8. पुस्तकालय के चतुर्दिक विकास, स्पष्ट दिशा-निर्देश तथा श्रेष्ठ पुस्तकालय सेवा प्रदान करने के लिए पुस्तकालय समिति का गठन आवश्यक है।
9. पुस्तकालय समिति प्राधिकरण एवं समुदाय के समक्ष पुस्तकालय की आवश्यकताओं की व्याख्या करती हैं तथा पुस्तकालय की माँगों का उचित कारण बतलाते हुए उनकी माँगों का समर्थन करती हैं।
10. पुस्तकालय समिति पुस्तकालय की विविध गतिविधियों पर नजर रखती है तथा समय पूर्व ही आने वाली समस्याओं के प्रति सावधान करती है।

**उद्देश्य -**

पुस्तकालय समितियों के गठन का प्रमुख उद्देश्य पुस्तकालयों के लिए नीतियों

का निर्धारण करना और उन नीतियों का क्रियान्वयन करना होता है। परन्तु इसके अतिरिक्त भी पुस्तकालय समिति गठित करने के कई अन्य प्रमुख उद्देश्य हैं, जो निम्नलिखित है-

1. पुस्तकालय में कुशल प्रशासन एवं संचालन का प्रबन्ध करना।
2. पुस्तकालय के आय-व्यय को ध्यान में रखते हुए पुस्तकालय के लिए आदर्श बजट का निर्माण करना तथा वित्तीय नियन्त्रण को बनाये रखना।
3. पुस्तकालय की आय में वृद्धि के विकल्पों पर विचार करते हुए उचित माध्यमों द्वारा पुस्तकालय आय में वृद्धि करना।
4. पुस्तकालय की आवश्यकतानुसार कर्मचारियों को प्रशिक्षण प्रदान कराना तथा नये एवं योग्य कर्मचारियों की नियुक्ति करना अर्थात् नवीन पदों को सृजित कर उन पदों पर योग्य कर्मचारियों की नियुक्ति करना।
5. पुस्तकालय के पाठकों एवं पुस्तकालय कर्मचारियों के हितों की रक्षा करना।
6. पुस्तकालय के प्रशासनिक कार्यों में सहायता प्रदान करना।
7. पुस्तकालय के संरक्षक के रूप में कार्य करना।

## 13.6 पुस्तकालय समिति का गठन

वर्तमान समय में अपने कार्य, प्रकृति एवं स्तर के अनुसार अनेक प्रकार के पुस्तकालय प्रचलित हैं, जैसे शैक्षणिक पुस्तकालय, सार्वजनिक पुस्तकालय तथा विशिष्ट पुस्तकालय। इसलिए इनके दैनिक क्रियाकलाप एवं उद्देश्य भी एक दूसरे से भिन्न है। अतः प्रकृति, कार्य एवं उद्देश्यों की विभिन्नता के कारण पुस्तकालय समितियों के गठन में भी विभिन्नता पायी जाती है।

सामान्यतया पुस्तकालय समितियाँ, पुस्तकालय प्राधिकरण अथवा पैतृक संस्था के नियम / कानूनों द्वारा गठित की जाती है। किसी पुस्तकालय समिति में एक अध्यक्ष एक सचिव तथा आवश्यक संख्या में सदस्यगण होते हैं।

सामान्यतया विश्वविद्यालयों की पुस्तकालय समिति का अध्यक्ष कुलपति, सचिव-विश्वविद्यालय पुस्तकालय का पुस्तकालयाध्यक्ष तथा सदस्य के रूप में संकायाध्यक्ष, विभागों के प्रमुख एवं वरिष्ठ शिक्षक होते हैं। इसी प्रकार महाविद्यालयों के पुस्तकालय समिति का अध्यक्ष- महाविद्यालय का प्राचार्य, सचिव महाविद्यालय पुस्तकालय का पुस्तकालयाध्यक्ष तथा विभिन्न विभागों के अध्यक्ष/ प्राध्यापक इस समिति के सदस्य होते हैं।

किसी सार्वजनिक पुस्तकालय की समिति का अध्यक्ष सरकार का कोई अधिकारी, सचिव- पुस्तकालय का पुस्तकालयाध्यक्ष तथा समाज के गणमान्य व्यक्ति जैसे-समाजसेवी, व्यवसायी, राजनीतिज्ञ, चिकित्सक, वकील, पत्रकार इत्यादि वर्गों में मनोनीत या निर्वाचित व्यक्ति इस समिति के सदस्य होते हैं।

पुस्तकालय समिति का गठन वैज्ञानिक प्रावधाना एवं अधिनियमों के अधीन किया जाता है। समिति की बैठक वर्ष में कितनी बार होगी, इसका स्पष्ट उल्लेख पुस्तकालय अधिनियम में किया जाना चाहिए, समिति की सभी बैठक अध्यक्ष की अनुमति से सचिव द्वारा आयोजित की जाती है। समिति के सभी सदस्यों को बैठक की सूचना बैठक से एक सप्ताह पूर्व प्रेषित कर दिया जाना चाहिए ताकि समिति के सभी सदस्य निश्चित तिथि एवं समय पर बैठक में उपस्थित हो सकें। बैठक की सूचना के साथ ही कार्य सूची भी सदस्यगणों के पास भेजी जाती है, ताकि सदस्यगण उस पर भली भाँति विचार कर सकें। इस कार्य सूची में उन सभी मदों को सम्मिलित किया जाता है, जिस पर बैठक में विचार-विमर्श करना प्रस्तावित होता है।

## 13.7 पुस्तकालय समिति के प्रकार -

ई० वी० कार्बेट के अनुसार समितियाँ छः प्रकार की होती है। पुस्तकालय अपनी आवश्यकतानुसार इनका गठन कर सकती है-

### 1. वैधानिक स्थायी समिति -

इस प्रकार की समिति का गठन संविधान के प्रावधानों के अधीन किया जाता है। यह समिति अपने आप में पूर्ण रूप से स्वतंत्र एवं सर्वशक्ति सम्पन्न होती है। इस समिति को पुस्तकालय को प्रबंधित, संचालित एवं नियन्त्रित करने का अधिकार प्राप्त होता है। वस्तुतः पुस्तकालय का यह अन्तिम प्राधिकरण होता है, जिसके अन्तर्गत पुस्तकालय अपना कार्य करता है।

### 2. कार्यकारी समिति -

इस प्रकार की समिति भी सर्वाधिक शक्तिशाली एवं अधिकारपूर्ण होती है। चूंकि यह समिति सभी मामलों में पूर्ण अधिकार रखती है। अतः इसे पुस्तकालय प्राधिकरण या अन्य किसी अधिकारी को अपने निर्णयों की कोई सूचना देने की बाध्यता नहीं होती है। इस समिति को अपने कार्य के कार्यान्वयन के लिए उप-समितियाँ भी गठित करने का अधिकार प्राप्त होता है।

**3 प्रतिवेदन समिति -**

इस प्रकार की समिति के पास कुछ निश्चित सेवाओं के अन्तर्गत निर्णय लेने की पूर्ण शक्ति प्राप्त होती है। यह समिति जो भी निर्णय लेती है, उस पर प्राधिकारी को टिप्पणी करने का अधिकार नहीं होता है। सामान्यतः यह समिति पुस्तकालय के संचालन हेतु नीतियों एवं नियमों का निर्माण करती है, परन्तु निर्धारित नीतियों या लिये गये निर्णयों की सूचना पुस्तकालय प्राधिकरण को भेजना ही होता है।

**4 तदर्थ समिति -**

इस प्रकार की समिति निश्चित समय के लिए किसी विशिष्ट कार्य को निष्पादित करने हेतु गठित की जाती है। यह एक विशेष प्रकार की तथा स्वतन्त्र रूप से कार्य करने वाली समिति होती है। जिसका सरकारी संस्थाओं से कोई लेना देना नहीं होता है। यह समिति स्वयं में पुस्तकालय प्राधिकरण होती है। अतः पुस्तकालय प्राधिकरण की सारी शक्तियाँ इसमें निहित होती है।

**5 परामर्शदात्री समिति -**

इस प्रकार की समिति पुस्तकालय प्राधिकरण द्वारा किसी विशिष्ट कार्य, विषय या समस्या पर मात्र परामर्श देने के लिए गठित की जाती है। अर्थात् यह समिति किसी विशिष्ट प्रस्ताव सम्बन्धी कार्य पर अपनी अनुशंसा मात्र देती है। इनकी अनुशंसा या परामर्श को स्वीकार करना या न करना प्राधिकरण पर निर्भर करता है। वस्तुतः इस प्रकार की समिति के पास कोई भी वास्तविक शक्ति नहीं होती है।

**6 नामित / निर्वाचित समिति -**

यह एक प्रकार की उप समिति है, जिन्हें प्राधिकरण अपने कार्यों में सहायता प्रदान करने के लिए गठित करती है। इस प्रकार की समिति के सदस्य विषय विशेषज्ञ, तार्किक, अनुभवी एवं दूर-दृष्टि सम्पन्न व्यक्ति होते हैं। प्राधिकरण थोड़े समय के लिए अपनी कुछ शक्तियाँ एवं कार्य इन समितियों के हस्तान्तरित कर देती है। इस प्रकार की समिति लम्बे एवं गैर जरूरी-विचार विमर्श से बचने हेतु गठित की जाती है।

## 13.8 पुस्तकालय समिति के कार्य एवं अधिकार -

सामान्यतया पुस्तकालय समिति केवल नीति-निर्धारण का कार्य करती है तथा उसके सारे निर्णय परामर्शात्मक होते हैं, अर्थात् समिति पुस्तकालय के विविध क्रिया-कलापों पर विचार विमर्श कर प्राधिकारी या कार्यकारिणी परिषद् के समक्ष अपना परामर्शात्मक निर्णय प्रस्तुत करती है। संक्षेप में समिति के कुछ प्रमुख कार्य एवं अधिकार

HMDC-019

निम्नलिखित हैं -

1. पुस्तकालय द्वारा संचालित विविध क्रियाकलापों एवं सेवाओं को ध्यान में रखते हुए पुस्तकालय के लिए आदर्श भवन, उचित एवं पर्याप्त स्थान, वायु, ताप एवं वातानुकुलन की व्यवस्था करना।

2. पुस्तकालय के कुशल संचालन के लिए नीति का निर्धारण एवं उचित मार्गदर्शन प्रदान करना।

3. पुस्तकालय की प्रकृति, स्तर एवं उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए श्रेष्ठ पुस्तक संग्रह नीति का निर्धारण करना।

4. स्थानीय परिस्थितियों एवं पुस्तकालय अधिनियम के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए प्रभावशाली पुस्तकालय नियमावली का निर्माण कर उन्हें लागू करवाना।

5. पुस्तकालय की आय में वृद्धि के विभिन्न विकल्पों पर विचार करना तथा आदर्श प्रयासों के द्वारा पुस्तकालय की आय में वृद्धि करना।

6. पुस्तकालय के लिए आदर्श बजट का निर्माण करना तथा पुस्तकालय के आय-व्यय पर नियन्त्रण बनाये रखना।

7. पुस्तकालय के लिए स्वीकृत मानकों के अनुसार उपकरण एवं उपस्कर की व्यवस्था करना।

8. पुस्तकालय की आवश्यकतानुसार योग्य कर्मचारियों की नियुक्ति, पदोन्नति एवं नए पदों के सृजन सम्बन्धी नियमों का निर्माण करना।

9. पुस्तकालय प्राधिकरण एवं पुस्तकालयाध्यक्ष को परामर्श देना।

10. पुस्तकालय कर्मचारियों के कार्यों एवं कर्त्तव्यों का निरीक्षण करना।

11. पुस्तकालय कर्मचारियों एवं अधिकारियों के मध्य समन्वय स्थापित करना तथा उनके हितों की रक्षा करना।

12. पुस्तकालय सम्पत्ति की सुरक्षा एवं व्यवस्था बनाये रखना।

13. पुस्तकालय की आवश्यकतानुसार उप समितियों की नियुक्ति करना। जैसे-ग्रंथ चयन उपसमिति, कर्मचारी चयन पर उपसमिति, वित्त उपसमिति इत्यादि।

## 13.9 पुस्तकालयाध्यक्ष का पुस्तकालय समिति के प्रति कर्त्तव्य एवं उत्तरदायित्व -



पुस्तकालयाध्यक्ष पुस्तकालय समिति का सचिव होने के साथ पुस्तकालय का

प्रमुख कर्त्ताधर्ता भी होता है। वस्तुतः पुस्तकालयाध्यक्ष एवं पुस्तकालय समिति दोनों एक दूसरे पर निर्भर होते हैं। अतः दोनों को आपसी विचार-विमर्श, सूझ-बूझ एवं परस्पर सहयोग के साथ-साथ अपने उत्तरदायित्वों का निर्वाह करना चाहिए। संक्षेप में पुस्तकालयाध्यक्ष का पुस्तकालय समिति के प्रति निम्नलिखित कर्त्तव्य एवं उत्तरदायित्व है-

1. पुस्तकालय के लिए नीति निर्धारण करने में पुस्तकालय समिति की सहायता एवं सुझाव देना।
2. पुस्तकालय समिति द्वारा निर्धारित नीतियों को क्रियान्वित करवाना।
3. श्रेष्ठ एवं उपयोगी पुस्तकों का चयन कर पुस्तकालय समिति से अनुमोदित करवाना।
4. पुस्तकालय भवन, उपस्कर, उपकरण एवं पुस्तक संग्रह की सुरक्षा व्यवस्था को बनाये रखने में समिति का सहयोग करना।
5. समिति की सभी बैठकों में भाग लेना, अपने सुझाव देना तथा बैठक की कार्यवाही तैयार करना एवं समिति को इससे अवगत करवाना।
6. परामर्शदाता के रूप में पुस्तकालय समिति को सहयोग देना।
7. बैठक की तिथि, समय एवं कार्य सूची से सदस्यों को अवगत करवाना।
8. पुस्तकालय के विभिन्न विभागों एवं कर्मचारियों के मध्य सामंजस्य बनाये रखना।

## 13.10 सारांश -

पुस्तकालय अपनी प्रकृति, स्तर एवं उद्देश्यों के आधार पर अनेक प्रकार के होते हैं, फिर भी सभी प्रकार के पुस्तकालयों को सर्वमान्य रूप से एक सामाजिक संस्था के रूप में जाना एवं माना जाता है। अर्थात् पुस्तकालय एक सामाजिक संस्था है। अतः सामाजिक संगठनों की भाँति पुस्तकालयों का संगठन तथा प्रबन्ध भी जनतन्त्रतात्मक सिद्धान्तों पर आधारित होना चाहिए। अर्थात् उनके कार्यों में, एकाधिकारवाद या सत्तावाद के लिए कोई स्थान नहीं होना चाहिए। अतः पुस्तकालयों का संगठन एवं प्रबन्धन भी अन्य संस्थाओं की भाँति निकायों के माध्यम से होता है। इसके लिए पुस्तकालय समिति एवं प्राधिकरण का गठन किया जाता है। जिसमें से पुस्तकालय समिति प्रमुख रूप से नीति नेर्धारण एवं परामर्श का कार्य करती हैं और प्राधिकरण नीतियों का क्रियान्यन का कार्य करता है, पुस्तकालय समिति कई अन्य नामों से भी जानी जाती है, जैसे-पुस्तकालय मण्डल, पुस्तकालय न्यासी, सलाहकार समिति इत्यादि।



HMDC-019

वस्तुतः पुस्तकालय समिति पुस्तकालय प्रबन्धन का भार कम करने हेतु पुस्तकालय की नीतियों, कार्यक्रमों के निर्धारण और सलाहकार की हैसियत से विभिन्न क्रियाकलापों की देखरेख करती है। अतः पुस्तकालय समिति की महत्ता को ध्यान में रखते हुए समिति के सदस्यों का चयन सावधानी पूर्वक करना चाहिए, अर्थात् समिति के सभी सदस्य ऐसे हों, जो पुस्तकालय के विविध क्रिया-कलापों तथा उनके विकास में रूचि लेते हों। अतः संक्षेप में यदि यह कहा जाए कि किसी भी पुस्तकालय की सफलता का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व पुस्तकालय समिति पर निर्भर होता है तो यह अतिश्योक्ति नहीं होगा।

## 13.11 अभ्यास कार्य -

पुस्तकालय समिति को परिभाषित करते हुए, किसी पुस्तकालय में इसकी आवश्यकता के कारणों को स्पष्ट करें।

2. पुस्तकालय समिति के उद्देश्यों पर विस्तृत रूप से प्रकाश डालिए।
3. पुस्तकालय समितियाँ कितने प्रकार की होती हैं? उनका गठन कैसे किया जाता है? प्रकाश डालिये।
4. पुस्तकालय समिति के कार्यों एवं अधिकारों पर प्रकाश डालते हुए, पुस्तकालयाध्यक्ष के पुस्तकालय समिति के प्रति कर्त्तव्य एवं उत्तरदायित्व को स्पष्ट करें।

## 13.12 संदर्भ-ग्रंथ -


1. त्रिपाठी, एस॰ एम॰ (et al.) (1999), ग्रंथालय प्रबन्ध, आगरा : वाई॰ के॰ पब्लिशर्स।
2. सिंह, दिनेश (2000), ग्रंथालय विज्ञान की रूपरेखा, पटना : नोवेल्टी एण्ड कम्पनी।
3. माथुर, एल॰ आर॰ (2003), लाइब्रेरियन परीक्षा मैनुअल, नई दिल्ली एच॰जी॰ पब्लिकेशन।
4. शर्मा, बी॰ के॰ एवं ठाकुर यू॰ एम॰ (2006), पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान, आगरा : वाई॰ के॰ पब्लिशर्स।

# काई -14 : पुस्तकालय वित्त : बजट निर्माण की विधियाँ एवं वित्तीय नियन्त्रण

## इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य

14.1 विषय परिचय

14.2 पुस्तकालय वित्त

14.3 पुस्तकालय वित्त के सिद्धान्त

14.4 पुस्तकालय आय के विभिन्न स्रोत

14.5 पुस्तकालय व्यय के प्रमुख मद

14.6 पुस्तकालय वित्त की आँकलन विधि

14.7 पुस्तकालय बजट : एक परिचय

14.8 पुस्तकालय बजट निर्माण की विभिन्न विधियाँ

14.9 पुस्तकालय बजट निर्माण हेतु मानदण्ड और मानक

14.10 पुस्तकालय बजट बनाते समय ध्यान रखने योग्य कारक

14.11 आदर्श बजट का नमूना

14.12 सारांश

14.13 अभ्यास कार्य

14.14 सन्दर्भ - ग्रन्थ

## 14.0 उद्देश्य

प्रस्तुत ईकाई में पुस्तकालय वित्त को परिभाषित करते हुए, वित्तीय सिद्धान्तों, वित्तीय आँकलन की विधियों, पुस्तकालय आय स्रोतों, क्रय के विभिन्न मदों इत्यादि पर प्रकाश डाला गया है। तत्पश्चात् बजट के अर्थ, परिभाषाओं, बजट निर्माण के उद्देश्य, उपयोगिता, आवश्यकता एवं विशेषताओं को भी प्रस्तुत किया गया है।

प्रस्तुत इकाई में बजट निर्माण की विभिन्न विधियों, मानकों के साथ ही बजट निर्माण के आवश्यक तत्वों के भी स्पष्ट किया गया। इकाई के अन्त में एक आदर्श बजट का नमूना भी दिया गया है, जिसमें शैक्षणिक एवं सार्वजनिक पुस्तकालयों हेतु अलग-अलग आय एवं व्यय के मदों को प्रस्तुत किया गया है। आशा है कि छात्र प्रस्तुत इकाई के माध्यम से पुस्तकालय वित्त एवं बजटिंग की विभिन्न तकनीकों, मानकों, विधियों

HMDC-019

इत्यादि को समझने में सक्षण हो सकेंगे।

## 14.1 विषय - परिचय

पुस्तकालयों को एक सामाजिक अलाभकारी व व्ययशील संस्था के रूप में जाना जाता है, जिसका प्रमुख उद्देश्य समाज कल्याण हेतु ज्ञान एवं सूचना का संग्रहण एवं प्रचार-प्रसार करना है। पुस्तकालयों के माध्यम से समाज को अधिक से अधिक शिक्षित एवं कार्य कुशल बनाने का प्रयास किया जाता है। वास्तव में पुस्तकालयों के ऊपर एक बड़ी एवं महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है, जिसका निर्वाह करने हेतु पुस्तकालयों को सदैव प्रयासरत रहना चाहिए। समाज के प्रति पुस्तकालयों की एक बड़ी जिम्मेदारी है, जिसकी पूर्ति हेतु सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारक है वित्त। अतः पुस्तकालयों को अपनी वित्तीय आवश्यकताओं का अनुमान कर, अपने क्रियाकलापों, गतिविधियों के लिए बजट तैयार करना, आय के विभिन्न स्रोतों का विकास करना, वित्तीय प्रबन्धन करना, व्ययों का आंकलन करना तथा एक निश्चित समयावधि में वित्त को व्यय करने, इत्यादि अनेक महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व का निर्वाह करना पड़ता है।

अन्य सामाजिक संस्थाओं की भाँति पुस्तकालयों के भी सुव्यवस्थित संचालन हेतु वित्त एक महत्वपूर्ण आवश्यकता होती है। जिसकी उचित व्यवस्था न होने पर पुस्तकालय अपनी किसी गतिविधि या सेवा को संचालित नहीं कर सकता है। अतः पुस्तकालय के सुव्यवस्थित संचालन के लिए वित्त की व्यवस्था करने की क्रियाविधि को वित्तीय प्रबन्धन कहा जाता है। वित्तीय प्रबन्धन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण बिन्दु बजट का निर्माण करना है। यदि पुस्तकालय का बजट, उचित रीति एवं मानकों पर आधारित है तथा उसमे विभिन्न मदों पर धन का आवंटन न्यायपूर्ण ढंग से किया गया है, तो पुस्तकालय की सफलता में किसी प्रकार का संशय नहीं रहता है। वस्तुतः पुस्तकालय बजट पुस्तकालय की एक ऐसी विवरणिका है, जिसमें पुस्तकालय के सभी खर्चों, जैसे - वेतन, प्रलेख एवं फर्नीचर क्रय, उपकरण क्रय, भवन मरम्मत व्यय इत्यादि सभी दर्शाया जाता है, तथा प्रत्येक मद में जो भी व्यय किया जाता है, उसका स्पष्ट एवं तर्कपूर्ण विवरण प्रस्तुत किया जाता है। बजट, पुस्तकालय या किसी संस्था विशेष के लिए अपने प्राधिकारी से धन प्राप्त करने का एक उपकरण अथवा मांगी पर्ची है, जिसका उचित ढंग से प्रस्तुतीकरण किया जाना संस्था विशेष के हित में होता है। पुस्तकालय बजट में ऐसी योजनाओं को प्राथमिकता दी जानी चाहिए, जिसमें कम से कम वित्तीय लागत पर अधिक से अधिक उपयोगिता प्राप्त की जा सके और पुस्तकालय के पाठकों एवं सम्बन्धित प्राधिकारीगण

दोनों को संतुष्ट किया जा सके।



## 14.2 पुस्तकालय वित्त

किसी भी विशिष्ट संस्था, समाज या सामान्य दैनिक कार्यों को संचालित करने के लिए धन (वित्त) प्रमुख तत्व है। बिना धन के कोई भी संस्था या समाज किसी भी प्रकार का कार्य करने में असमर्थ होता है। धन की इस अति महत्ता का प्रभाव अन्य सामाजिक संस्थाओं की भाँति पुस्तकालयों पर भी पड़ना स्वाभाविक है। चूँकि पुस्तकालय समाज की बौद्धिक एवं शैक्षिक आवश्यकताओं का आधार होता है। अतः पुस्तकालयी कार्यों एवं सेवाओं में स्थायित्व, निरन्तरता एवं जन साधारण तक पहुँच बनाये रखने हेतु वित्तीय व्यवस्था का सुदृढ़ आधार का होना अत्यन्त आवश्यक है। वस्तुतः धन ही वह धुरी है जिस पर पुस्तकालय रूपी पहिया घूमता है। परन्तु यहाँ यह स्पष्ट रूप से समझ लेना आवश्यक है कि पुस्तकालय कोई व्यावसायिक संस्था नहीं है जिसका प्राथमिक उद्देश्य लाभ कमाना है, बल्कि यह एक अलाभकारी संस्था है, जिसका प्रमुख उद्देश्य जनसाधारण को अधिकतम पुस्तकालयी सेवायें उपलब्ध करवाते हुए, उनके बौद्धिक एवं शैक्षिक स्तर को उच्च शिखर तक ले जाना होता है। पुस्तकालय के लिए वित्त एक उत्प्रेरक शक्ति होती है, जो पुस्तकालय की सम्पूर्ण गतिविधियों के सफल संचालन के लिए अति आवश्यक होती है। अतः संक्षेप में कहा जा सकता है कि पुस्तकालय के सफल संचालन हेतु वित्तीय व्यवस्था करने के कार्य को ही पुस्तकालय का वित्तीय प्रबन्धन कहा जाता है।

## 14.3 पुस्तकालय वित्त के सिद्धान्त

पुस्तकालय के वित्तीय प्रबन्धन के लिए वित्तीय संसाधनों एवं विविध स्रोतों पर पहले से ही विचार कर लेना चाहिए, पुस्तकालय के लिए वित्तीय व्यवस्था करने लिए कुछ विचारणीय सिद्धान्त प्रचलित है। यदि इन सिद्धान्तों का अनुसरण वित्तीय प्रबन्धन हेतु किया जाय तो यह पुस्तकालय विशेष के लिए लाभकारी सिद्ध हो सकता है। ये सिद्धान्त अग्रलिखित है-

### 1. पुस्तकालय एक व्ययशील संस्था है -

पुस्तकालयों का प्रमुख उद्देश्य किसी व्यावसायिक संस्था की भांति लाभ कमाना नहीं होता है अपितु इनकी स्थापना जनहित में सेवार्थ की जाती है। वस्तुतः यह एक अलाभकारी संस्था होती है जो निरन्तर ज्ञान एवं सूचना के प्रसार हेतु धन व्यय करती रहती है। पुस्तकालय द्वारा खर्च किये गये धन को व्यय करने की अपेक्षा विनियोग (Investment) कहना अधिक श्रेष्ठ होगा। पुस्तकालयों द्वारा विविध प्रकार की सेवाओं



HMDC-019

का आयोजन किया जाता है, जिसके लिए पुस्तकालय को कर्मचारियों, भवन, पुस्तक, पत्र-पत्रिका, फर्नीचर इत्यादि अनेक मदों एवं उपकरणों की व्यस्था करनी पड़ती है और इन सभी के लिए धन की आवश्यकता होती है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि इनके संचालन में मात्र व्यय ही होता है। जबकि प्रत्यक्ष रूप से कोई आय नहीं होती है। अतएव पुस्तकालय वित्त के इस सिद्धान्त को ध्यान में रखते हुए धन अथवा आय के विभिन्न ग स्त्रोतों पर गम्भीरता पूर्वक विचार किया जाना नितान्त आवश्यक है।

**2. पुस्तकालय एक वर्द्धनशील संस्था है -**

डॉ0 एस0आर0 रंगानाथन द्वारा प्रतिपादित पुस्तकालय विज्ञान के पंचम सूत्र 'पुस्तकालय एक वर्द्धनशील संस्था है'' के अनुसार पुस्तकालयो द्वारा समाज के प्रत्येक वर्ग की सूचना आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु पुस्तकें, पत्र-पत्रिकाएँ, फर्नीचर, यंत्र तथा अन्य अनेक प्रकार की आधुनिक पाठ्य - सामग्रियों एवं सहायक उपकरणों को संग्रहित करना पड़ता है। परिणामतः दिन-प्रतिदिन पुस्तकालय द्वारा संग्रहित इन सामग्रियों में वृद्धि होती जाती है और इसका प्रत्यक्ष प्रभाव पुस्तकालय वित्त पर पड़ता है। अतः इस सिद्धान्तानुसार बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए पुस्तकालय वित्त की व्यवस्था का उचित प्रावधान किया जाना चाहिए।

**3. पुस्तकालयों में धन की माँग का सिद्धान्त -**

इस सिद्धान्त के अनुसार पुस्तकालयों में निरन्तर धन की माँग बनी रहती है और समय, परिस्थिति एवं आवश्यकतानुसार ये मांग और भी बढ़ती जाती है। चूंकि पुस्तकालयों द्वारा नित नयी-नयी सेवाओं का आयोजन किया जाता है, जिसके लिए पाठ्य-सामग्रियों तथा विविध सहायक उपकरणों की व्यवस्था करनी पड़ती है। इसके अतिरिक्त पुस्तकालयों में कार्यरत कर्मचारियों का वेतन, बिजली खर्च, बीमा खर्च, इत्यादि अनेक मद हेतु धन की आवश्यकता पड़ती रहती है। एक तरह से यह एक आवर्ती व्यय है, जो निरन्तर बढ़ता ही रहता है। अतः इस सिद्धान्त को ध्यान में रखते हुए पुस्तकालय की वित्त व्यवस्था हेतु सतत् एवं नियमित वित्तीय स्त्रोतों पर विशेष रूप से विचार किया जाना चाहिए।

**4. वित्तीय निरूपण का सिद्धान्त -**

इस सिदान्त के अनुसार पुस्तकालय सेवाओं एवं व्यवस्थाओं को निरन्तर गतिशील बनाये रखने हेतु पुस्तकालय आय के विविध संसाधनों अथवा स्त्रोतों को निश्चित कर लेना चाहिए, साथ ही एकत्रित धन का सदुपयोग करने हेतु प्राथमिकताओं का क्रम निश्चित किया जाना चाहिए, ताकि भ्रम की स्थिति न उत्पन्न हो।


HMDC-019

पुस्तकालयों द्वारा धन की आवश्यकता का सटीक अनुमान लगाने के लिए विश्वसनीय सिद्धान्तों का प्रयोग करने तथा पुस्तकालय के विविध सेवाओं एवं क्रियाकलापों की प्राथमिकता का क्रम निर्धारित कर उपलब्ध वित्तीय संसाधनों का सदुपयोग करने की विधि को ही वित्तीय निरूपण का सिद्धान्त कहा जाता है।

**5. प्रति व्यक्ति विधि का सिद्धान्त-**

इस सिद्धान्त के अनुसार किसी क्षेत्र विशेष के पुस्तकालय को उस क्षेत्र या स्थान में रहने वाले पाठक समुदाय की शैक्षणिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्तर तथा आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए पुस्तकालय सेवा प्रदान करने हेतु प्रति व्यक्ति न्यूनतम व्यय सीमा का निर्धारण किया जाना चाहिए। पुस्तकालय की वित्तीय व्यवस्था का आँकलन करने के लिए प्रति व्यक्ति विधि एक उपयुक्त एवं विश्वसनीय सिद्धान्त है। डॉ॰ एस॰ आर॰ रंगानाथन ने किसी विश्वविद्यालय पुस्तकालय में 20 रु0से लेकर 150 रु0 तक प्रति छात्र तथा 300रु0 प्रति अध्यापक धनराशि व्यय करने का सुझाव दिया है।

अतः इस सिद्धान्त के अनुसार किसी पुस्तकालय विशेष द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं के लिए प्रति व्यक्ति कितना न्यूनतम व्यय किया जाय, इसी का निर्धारण किया जाता है।

## 14.4 पुस्तकालय आय के सिद्धान्त

पुस्तकालय को अपनी विभिन्न सेवाओं, क्रियाकलापों एवं योजनाओं को संचालित करने के लिए निरन्तर धन की आवश्यकता होती है, जैसे - भवन निर्माण, पुस्तकों एवं पत्र-पत्रिकाओं का क्रय, कर्मचारियों का वेतन, फर्नीचर व्यवस्था, बिजली व्यय, बीमा व्यय इत्यादि। पुस्तकालयों द्वारा संचालित सभी सेवायें समाज के लिए अत्यन्त उपयोगी होती हैं, फिर भी इन सेवाओं से पुस्तकालय को प्रत्यक्ष रूप से कोई भी वित्तीय लाभ नहीं प्राप्त होता है।

स्वाभाविक है कि पुस्तकालय के लिए वित्तीय व्यवस्था के कई विकल्प भी मौजूद हैं, परन्तु विभिन्न प्रकार के पुस्तकालयों के लिए अलग-अलग वित्तीय स्रोत उपयोगी एवं महत्वपूर्ण होते हैं। जिनमें से कुछ स्रोत सामान्य रूप से सभी पुस्तकालयों के लिए उपयोगी होते हैं, जैसे-राजकीय अनुदान, उपहार, दान इत्यादि।

अतः पुस्तकालयों की स्थापना, विकास एवं संचालन के लिए आय के ठोस संसाधनों अथवा स्रोतों का निश्चित होना आवश्यक है। किसी भी पुस्तकालय के लिए



HMDC-019

आय के स्त्रोतों को मोटे तौर पर निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है-

**1. शासकीय अनुदान एवं सहायता -**

पुस्तकालय आय का यह एक प्रमुख स्त्रोत है जिसे शासन द्वारा सभी प्रकार के पुस्तकालयों को उपलब्ध करवाया जाता है। शैक्षणिक पुस्तकालयों को पैतृक संस्था के वार्षिक बजट से प्रति वर्ष एक निश्चित धनराशि तथा शासन से अनुदान प्राप्त होता है। सार्वजनिक पुस्तकालयों को सामान्यतः राज्य सरकारें धन उपलब्ध करवाती हैं। सार्वजनिक पुस्तकालयों को स्थानीय निकायों जैसै-नगर निगम, जिला परिषद् इत्यादि से भी धन प्राप्त होता है। शासकीय अनुदान पंचवर्षीय योजनाओं के अधीन पुस्तकालय के स्थापना एवं विकास हेतु उपलब्ध कराये जाते हैं। विद्वानों के मतानुसार शासन द्वारा निम्न पदों के लिए इस प्रकार धनराशि उपलब्ध कराना चाहिए -

1. कर्मचारियों के लिए = 50%
2. पुस्तकालय भवन के लिए = 50%
3. पाठ्य-सामग्री के लिए = कुछ नहीं।

**2. यू॰जी॰सी॰ द्वारा अनुदान -**

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग केवल शैक्षणिक पुस्तकालयों को ही अनुदान प्रदान करता है, वस्तुतः इस संस्था की स्थापना ही इसी उद्देश्य हेतु की गई है। महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय पुस्तकालय की आय का एक बड़ा हिस्सा इसी संस्था के अनुदानों द्वारा प्राप्त होता है। यह संस्था निम्नलिखित रूपों में अपना अनुदान शैक्षिक पुस्तकालयों को प्रदान करता है -

1. मौलिक अनुदान
2. विशिष्ट अनुदान
3. आवर्ती अनुदान
4. अनावर्तक अनुदान
5. तदर्थ अनुदान

**3. पुस्तकालय कर एवं उपकर -**

इस प्रकार का आय स्त्रोत उन पुस्तकालयों के लिए है, जिन राज्यों में पुस्तकालय अधिनियम लागू है। जिन राज्यों में यह अधिनियम लागू है वहाँ की जनता को इस अधिनियम के प्रावधानों के अधीन पुस्तकालय कर अदा करना होता है। इस

प्रकार के कर को लाइब्रेरी सेस कहा जाता है, इस प्रकार का कर सामान्यतः वर्तमान करों पर अतिभार के रूप में आरोपित कर अप्रत्यक्ष रूप से वसूल किया जाता है। इस स्रोत से प्राप्त धन का उपयोग सार्वजनिक पुस्तकालय की स्थापना एवं विकास में किया जाता है। सार्वजनिक पुस्तकालय के लिए यह एक निश्चित एवं प्रमुख आय स्रोत है।

कुछ राज्यों में स्थानीय स्वशासन इकाई द्वारा पुस्तकालय उपकर भी वसूल किया जाता है। इस प्रकार का कर स्थानीय इकाई पर निर्भर करता है कि वह इसे वसूल करे अथवा नहीं। कुछ विद्वानों द्वारा इस प्रकार के उपकर का समर्थन भी किया गया है। इनके अनुसार यदि जनता इससे प्रकार का कर वसूल किया जाता है तो जनता में पुस्तकालय सेवाओं के उपयोग के प्रति रूचि जागृत होगी तथा उनमें पुस्तकालय के प्रति स्वामित्व की भावना का उदय होगा।

### 4. दान एवं उपहार -

विकसित देशों में यह पुस्तकालय आय का एक प्रमुख श्रोत है परन्तु भारत में यह नाममात्र का होता है। पुस्तकालयों को इस प्रकार की धनराशि परोपकारी व्यक्तियों, समाज सेवकों तथा लोक कल्याणकारी संस्थाओं द्वारा दान अथवा उपहार स्वरूप प्राप्त होते हैं, परन्तु आय का यह स्रोत निश्चित नहीं होता है। अतः पुस्तकालयों को इस स्रोत पर निर्भर नहीं रहना चाहिए। इस प्रकार के दान अथवा उपहार में धनराशि के अतिरिक्त, पुस्तकें, पत्र-पत्रिकायें, फर्नीचर, उपकरण, भूमि इत्यादि भी पुस्तकालय को प्राप्त हो सकते हैं।

### 5. पुस्तकालय-शुल्क -

यह पुस्तकालय आय का एक आंशिक मद है। जिसे कुछ विद्वानों के मतानुसार वसूल नहीं किया जाना चाहिए अर्थात् पुस्तकालय सेवा निःशुल्क प्रदान की जानी चाहिए, परन्तु व्यावहारिक रूप से अनेक पुस्तकालयों द्वारा इस प्रकार का शुल्क सदस्य पाठकों से वसूल किया जाता है। इस शुल्क को पंजीकरण शुल्क या पुस्तकालय फीस या काशन मनी इत्यादि के रूप में लिया जाता है। विद्वानों के अनुसार इसे पुस्तकालय आय नहीं माना जाना चाहिए और यदि सम्भव हो तो वसूल नहीं किया जाना चाहिए। कुछ विद्वानों के अनुसार इस प्रकार का शुल्क अवश्य वसूल किया जाना चाहिए क्योंकि पुस्तकालय शुल्क देने से पाठकों मे पुस्तकालय के प्रति अपनत्व की भावना जागृत होती है तथा वे पुस्तकालय सेवाओं के उपयोग के साथ उसकी सुरक्षा का भी ख्याल रखते हैं। अतः यह उचित होगा कि उनसे कुछ शुल्क अवश्य लिये जाएं।

### 6. पुस्तकालय अर्थदण्ड -



HMDC-019

पुस्तकालय कार्य एवं सेवाओं को सुचारू रूप से चलाने के लिए पुस्तकालय नियमों में कुछ अर्थदण्ड का प्रावधान किया जाता है जैसे-पुस्तकें समय पर वापस न लौटाने पर विलम्ब शुल्क, पुस्तकालय में उदण्डता करने पर अर्थदण्ड, पुस्तकालय उपकरण, फर्नीचर या पुस्तकों को नुकसान पहुँचाने पर अर्थदण्ड इत्यादि। अर्थदण्ड से प्राप्त धन को पुस्तकालय का आंशिक आय स्रोत है परन्तु इन्हें आय नहीं माना जाना चाहिए, क्योंकि अर्थदण्ड वसूल करने का उद्देश्य पुस्तकालय के लिए धनराशि एकत्रित करना नहीं होता है, बल्कि इसका उद्देश्य पाठक द्वारा पुस्तकालय सेवाओं का संयमपूर्ण उपयोग एवं नियमों की ओर ध्यान आकर्षित कराने हेतु किया जाता है।

**7. पुस्तकालय सेवाओं से आय -**

आजकल पुस्तकालयों द्वारा अनेक प्रकार की सूचना एवं प्रलेखन सेवायें (जैसे-रिप्रोग्राफी, माइक्रोग्राफी, सारांशीकरण, अनुवाद सेवायें, इन्टरनेट इत्यादि) संचालित की जा रही है। इन सेवाओं के बदले पाठकों से न्यूनतम सेवा शुल्क लिया जाता है। अतः इस प्रकार से प्राप्त धन को भी पुस्तकालय के आंशिक आय की श्रेणी में रखा जा सकता है।

**8. न्यास द्वारा अंशदान -**

वर्तमान समय में कुछ न्यासी (Trusty ) संस्थायें भी पुस्तकालय के लिए धनराशि की व्यवस्था करती हैं। ऐसी संस्थायें एक निश्चित समय के अन्तराल पर निश्चित मात्रा में धनराशि पुस्तकालयों को उपलब्ध कराती है। ऐसी संस्थायें विकसित देशों में अधिक प्रचलित हैं, जैसे - यू॰एस॰ए॰ में 'कार्नेगी ट्रस्ट'। भारत में सार्वजनिक पुस्तकालयों के विकास हेतु राजा राममोहन राय पुस्तकालय प्रतिष्ठान (भारत सरकार द्वारा स्थापित) वित्तिय सहायता प्रदान करती है।

**9. पुस्तकालय आय के अन्य स्रोत -**

पुस्तकालय आय के कुछ और आंशिक स्रोत भी विद्यमान हैं, जैसे-

1. रद्दी की बिक्री से आय,
2. बैंक में जमा धनराशि के ब्याज से आय,
3. विभिन्न कार्यक्रमों के आयोजन से आय
4. पुस्तकालय प्रकाशनों से आय
5. पुस्तक मेला के आयोजन से आय

6. पुस्तकालय सम्पत्ति का कुछ अंश किराये पर देने से प्राप्त आय



## 14.5 पुस्तकालय व्यय के प्रमुख रद्द

पुस्तकालय एक अलाभकारी एवं व्ययशील संस्था मानी जाती है। पुस्तकालय समाज के सभी वर्गों को बिना किसी भेदभाव के अपनी सेवायें प्रदान करता है तथा साथ ही उनकी विभिन्न सूचना आवश्यकता की पूर्ति हेतु तत्पर रहता है। पुस्तकालयों के मानवीय संसाधनों, पाठ्य सामग्रियों तथा उपयोगी उपकरणों इत्यादि को सदैव सक्षम एवं सबल बनाये रखना पड़ता है और इन सभी क्रियाकलापों को प्रबन्धित एवं संचालित करने हेतु धन की उपलब्धता सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारक होती है।

पुस्तकालयों द्वारा जनहित को ध्यान में रखते हुए, विभिन्न स्रोतों से प्राप्त आय को विभिन्न स्रोतों के आयोजन एवं प्रबन्धन हेतु उचित सिद्धान्त के आधार पर विभिन्न मदों में धन को आवंटित किया जाता है। पुस्तकालयों द्वारा अनेकानेक कार्य एवं सेवायें संचालित की जाती हैं तथा उन पर धन भी खर्च किया जाता है। पुस्तकालय द्वारा किये जाने वाले व्ययों को प्रमुख रूप में दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है- प्रथम आवर्ती व्यय जैसे - कर्मचारियों का वेतन, पाठ्य सामग्रियों का क्रय इत्यादि। द्वितीय अनावर्ती व्यय, जैसे - फर्नीचर क्रय, भवन मरम्मत एवं सुधार, आकस्मिक व्यय इत्यादि। पुस्तकालय कुछ प्रमुख व्यय के मदों का संक्षिप्त वर्णन निम्नानुसार प्रस्तुत है-

### 1. कर्मचारियों का वेतन -

यह पुस्तकालय का सर्वाधिक अनिवार्य एवं महत्वूपर्ण व्यय मद है, जो आवर्ती व्यय की श्रेणियों में आता है अर्थात् वह व्यय जो निश्चित होती है तथा जिसका प्रबन्ध प्रतिमाह अनिवार्य रूप से करना पड़ता है। कोई भी पुस्तकालय चाहे वह कितना ही समृद्ध एवं अद्यतन सूचनाओं एवं पाठ्यसामग्रियों से पूर्ण क्यों न हो, यदि वहाँ कर्मचारियों की उचित व्यवस्था हेतु धन की व्यवस्था नहीं की गयी है, तो सब व्यर्थ है। अतः पुस्तकालय विज्ञान के प्रमुख विद्वानों एवं कुछ प्रतिष्ठित संस्थाओं द्वारा इस मद पर पुस्तकालय बजट का 50 प्रतिशत धन व्यय करने का सुझाव दिया जाता है। वेतन वस्तुतः प्रोत्साहन राशि होती है, जिससे कर्मचारियों का मनोबल सकारात्मक बना रहता है और वे श्रेष्ठ पुस्तकालयी सेवायें प्रदान करते हैं।

### 2. पाठ्य - सामग्रियों का क्रय -

पुस्तकालय व्ययों में दूसरा सर्वाधिक महत्वपूर्ण मद है- पाठ्य सामग्रियों का क्रय। वस्तुतः पाठ्य - सामग्रियाँ ही किसी पुस्तकालय की विभिन्न गतिविधियों का प्रमुख



HMDC-019

आधार होती हैं, जिसके बिना किसी पुस्तकालय के अस्तित्व की भी कल्पना नहीं की जा सकती है। पुस्तकालय बजट बनाते समय इस मद पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। यह आवर्ती व्यय की श्रेणी में आता है। अतः इस मद हेतु पर्याप्त धनराशि की व्यवस्था होनी चाहिए, जिससे वर्ष भर पाठ्य सामग्रियों का क्रय किया जा सकें तथा पुस्तकालय को आज के प्रतिस्पर्धी युग में अद्यतन् एवं सफल बनाया जा सकें। प्रतिष्ठित विद्वानों के मतानुसार इस मद हेतु पुस्तकालय के कुल बजट का 40 से 50 प्रतिशत तक धन आवंटित किया जाना चाहिए।

**5. अन्य व्यय मद -**

उपरोक्त आवर्ती मदों के अतिरिक्त पुस्तकालय के अनेकानेक आवर्ती एवं अनावर्ती व्यय मद और भी है। जिनके लिए भी बजट में पर्याप्त मात्रा में धनराशि आवंटित किया जाना नितान्त आवश्यक है। पुस्तकालय सेवाओं की सफलता में इन मदों का भी अपना एक महत्वपूर्ण स्थान एवं योगदान होता है, जिन्हें नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है, इस प्रकार के व्ययमद निम्नलिखित हैं-

1. जिल्दसाजी एवं स्टेशनरी व्यय
2. बिजली व्यय
3. बीमा व्यय
4. फर्नीचर एवं साज-सज्जा सामग्री व्यय
5. भवन निर्माण एवं मरम्मत व्यय
6. पाठ्य-सामग्री अनुरक्षण व्यय
7. उपकर व्यय
8. पत्राचार एवं प्रकाश व्यय
9. आकस्मिक व्यय इत्यादि

## 14.6 पुस्तकालय वित्त की आँकलन विधि -

वर्तमान समय में किसी पुस्तकालय की सफलता का सम्पूर्ण दारोमदार वित्त की पर्याप्तता एवं निरंतर उपलब्धता पर निर्भर करता है। अतः पुस्तकालय में वित्त व्यवस्था सुदृढ़ बनाये रखने हेतु उचित एवं प्रभावशाली आँकलन विधि का अनुसरण किया जाना चाहिए। वित्त का आँकलन कोई नयी प्रथा या तकनीक नहीं है, अपितु यह सर्वत्र किसी न किसी रूप में विद्यमान होता है। एक सामान्य व्यक्ति, परिवार, समिति, संगठन से

लेकर सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाओं तक यह प्रयुक्त किया जाता है।

पुस्तकालय एक सामाजिक एवं जिम्मेदार संस्था के रूप में समाज में प्रतिस्थापित होता है। अतः जनहित को ध्यान में रखते हुए उत्कृष्ट पुस्तकालयी सेवाओं हेतु पुस्तकालय को भी अपने वित्तीय आवश्यकता का उचित रीति द्वारा आँकलन करना चाहिए। वित्तीय आंकलन हेतु पुस्तकालयों द्वारा समितियाँ गठित की जाती हैं तथा उसमें योग्य, अनुभवी एवं विशेषज्ञ व्यक्ति को नियुक्त किया जाता है। पुस्तकालय की वित्तीय आवश्यकताओं का आँकलन करने हेतु निम्न विधियाँ हैं-

## 1. प्रति व्यक्ति विधि -

यह सबसे सरल, वास्तविक एवं न्याय संगत विधि है। इसके द्वारा किसी भी पुस्तकालय के लिए कुल वार्षिक व्यय का आँकलन किया जा सकता है। इस विधि के अन्तर्गत मानक पुस्तकालय सेवा प्रदान करने हेतु प्रति व्यक्ति की दर से न्यूनतम धनराशि निश्चित की जाती है। यह आँकलन समुदाय के शैक्षणिक एवं सांस्कृतिक स्तर, भविष्य की आवश्यकताओं, समाज के प्रति व्यक्ति की आय, पाठ्य-सामग्रियों का औसत मूल्य इत्यादि के आधार पर किया जाता है।

यू॰जी॰सी॰ के द्वारा गठित रंगनाथन समिति (1975) के अनुसार वित्तीय आँकलन की प्रति व्यक्ति विधि के अन्तर्गत प्रति व्यक्ति पर व्यय की जाने वाली धनराशि का निर्धारण लागत लेखाविधि द्वारा किया जाता है, जिसमें पाठ्य सामग्री के क्रय करने से लेकर पाठक के हाथों में पहुँचने तक लगनें वाले कुल व्यय की धनराशि को 100 से भाग देने पर जो लब्धांक प्राप्त होता है, वह उस पाठ्य-सामग्री का लागत खर्च माना जाता है।

प्रति व्यक्ति व्यय निर्धारित करने के लिए कई प्रतिष्ठित विद्वानों ने अपने-अपने सुझाव दिये हैं, जैसे-डॉ॰ रंगनाथन ने सन् 1965 में प्रति छात्र 20 रुपये और प्रति अध्यापक 300 रु0 निर्धारित करने का सुझाव दिया था। इसी प्रकार पैरी समिति की रिपोर्ट के अनुसार 3000 पूर्व स्नातक छात्र, 1000 शोध छात्र तथा 500 अध्यापकों पर प्रतिवर्ष 98.005 पौण्ड व्यय करने की संस्तुति की थी। परन्तु वर्तमान परिस्थिति एवं मंहगाई दर को ध्यान में रखते हुए इन संस्तुतियों में आवश्यक सुधार के बाद लागू किया जाना चाहिए।

## 2. अनुपात विधि -

इस विधि के अनुसार पुस्तकालय को अपने प्राधिकारी अथवा पैतृक संस्था के

कुल बजट का एक निश्चित अनुपात में धनराशि प्राप्त होनी चाहिए। आवश्यकतानुसार इसकी एक विशेष न्यूनतम सीमा निर्धारित की जा सकती है। भारत में कुल बजट की न्यूनतम सीमा निर्धारित करने के लिए विभिन्न विद्वानों, संस्थाओं एवं समितियों ने विभिन्न तर्कों के आधार पर अपनी सिफारिशें की हैं, जो निम्नलिखित हैं-

1. विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग के अनुसार - विश्वविद्यालय के पुस्तकालय के विकास की अवस्था पर विचार करते हुए कुल बजट का 6.5 प्रतिशत हो सकता है।

2. विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अनुसार - कुल बजट का 6 प्रतिशत से लेकर 10 प्रतिशत तक।

3. रंगानाथन के अनुसार - कुल बजट का 10 प्रतिशत (शैक्षणिक पुस्तकालय) तथा 6 प्रतिशत (सार्वजनिक पुस्तकालय) निर्धारित करने का सुझाव दिया है।

परन्तु व्यवहार में यह देखा गया है कि भारत के अधिकांश विश्वविद्यालय अपने पुस्तकालय पर बहुत कम धन खर्च करते हैं। यदि विश्वविद्यालय अपने विचारों में परिवर्तन लाते हुए प्रस्तावित न्यूनतम प्रतिशत भी नियमित रूप से लागू करें तो निश्चय ही भारतीय पुस्तकालयों का भविष्य उज्जवल होगा।

### 3. विस्तार विधि -

इस विधि के अनुसार पुस्तकालय के विभिन्न व्ययशील मदों जैसे-कर्मचारियों का वेतन, पाठ्य सामग्री का मूल्य, जिल्द-बंदी खर्च, बिजली खर्च, बीमा खर्च, अनुरक्षण खर्च इत्यादि को जोड़ लिया जाता है और इस प्रकार जोड़ी गई सम्पूर्ण धनराशि को विभिन्न प्राथमिकताओं के अनुसार विभिन्न मदों में आवंटित किया जाता है। आवंटन हेतु विभिन्न विद्वानों के फार्मूला या सिफारिशों का अनुसरण किया जा सकता है। भारत सरकार द्वारा इसी विधि को सार्वजनिक पुस्तकालयों में लागू किया गया है। विद्वानों के अनुसार यह एक सर्वमान्य विधि है, फिर भी वर्तमान परिस्थिति, आवश्यकता एवं उपयोक्ताओं की मांग के आधार पर इस विधि में उचित तालमेल या सुधार किया जा सकता है।

### 4. वित्त आँकलन की अन्य विधियाँ -

उपरोक्त, विधियों के अतिरिक्त कई अन्य माध्यम भी है जिनके आधार पर पुस्तकालय के लिए वित्तीय आँकलन उचित ढंग से किया जा सकता है, जैसे-

1. पुस्तकालय के विभिन्न विभागों की सांख्यिकीय एवं अन्य स्रोत से प्राप्त आँकड़ों के आधार पर आँकलन किया जा सकता है।
2. यू॰जी॰सी॰ द्वारा संस्तुति प्राप्त स्टाफ फार्मूला के आधार पर वित्त आँकलन किया जा सकता है।
3. भूतकालीन खर्चों की समीक्षा के अधार पर आँकलन।

## 14.7 पुस्तकालय बजट : एक परिचय :-

**उत्पत्ति -**

बजट शब्द का उद्भव सन् 1733 में हुआ, ऐसा माना जाता है कि इंग्लैण्ड के तत्कालीन वित्त मंत्री 'सर राबर्ट बाल पेन' महोदय ने वित्तीय प्रस्ताव संसद मे रखने के लिए वित्तीय प्रपत्रों को एक चमड़े के थैले में रखकर ले गए थे। चूँकि फ्रेंच शब्द कोष के अनुसार बजट शब्द का अर्थ 'चमड़े का थैला' होता है। सम्भवतः तभी से वित्तीय आय-व्यय को बजट कहा जाता है।

**अर्थ -**

भविष्य की आवश्कताओं को ध्यान में रखते हुए एक निश्चित समय के लिए वर्तमान में वित्तीय पूर्वानुमान करना ही आय-व्ययक अथवा बजट कहलाता है, यह भूतकाल की योजनाओं एवं परिणामों के आधार पर तैयार किया जाता है। वस्तुतः बजट किसी कार्य को सफलतापूर्वक सम्पन्न करने के लिए बनायी गयी वित्तीय योजना है।

प्रबन्धन की भांति बजट भी एक व्यापक शब्द है, जिसका अर्थ एवं विस्तार व्यापक क्षेत्र तक फैला हुआ है जो मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रचलित एवं उपयोगी है। परन्तु यहाँ यह अवश्य ध्यान रखा जाना चाहिए, कि बजट प्रबन्धन का न तो स्थानापन्न है और न ही विकल्प, बल्कि यह (बजट) प्रबन्धन का एक अभिन्न अंग एवं उपकरण है।

''बजट'' एक ऐसा मानदण्ड है, जो संस्था की कार्य क्षमता की जानकारी के लिए तैयार किया जाता है, तो भूत, वर्तमान एवं भविष्य को श्रृंखलाबद्ध करता है। बजट में मौद्रिक एवं वित्तीय पक्षों को सम्मिलित किया जाता है और संस्था के उपलब्ध वित्तीय साधनों का संस्था के निश्चित अवधि के लिए निर्धारित उद्देश्यों से समन्वय स्थापित किया जाता है।



NMDC-019

वस्तुतः बजट तैयार करना एक नियोजित प्रक्रिया है, जिसमें किसी संस्था के व्यय और आय का एक विशेष समयावधि के लिए लेखाकरण किया जाता है। बजट एक योजनाबद्ध प्रलेख एवं एक वित्तीय विवरण है, जो प्रस्तावित आय एवं एक निश्चित समयावधि के लिए व्यय के उपयोग का विवरण प्रदान करता है। बजट आय और व्यय पर निरीक्षण एवं नियंत्रण करने का साधन है, न कि कितनी धनराशि प्राप्त होनी चाहिए और किस प्रकार व्यय की जानी चाहिए।

**परिभाषा -**

1. विल्सन एवं टाबर के अनुसार - "बजट एक निश्चित समय के लिए किसी संस्था के अनुमानित आय एवं व्यय का वित्तीय लेखा है।"

2. ब्राउन एवं हाबर्ड के अनुसार - "बजट एक निश्चित अवधि की प्रबन्ध नीति का एक पूर्व निर्धारित विवरण होता है, जो वास्तविक परिणामों से तुलना के लिए एक प्रमाप प्रदान करता है।"

3. हाइनर के अनुसार - "बजट उन कार्यक्रमों एवं क्रियाओं की विस्तृत योजना का मानचित्र होता है, जिन्हें मुद्रा में व्यक्त किया जाता है।"

4. मारिस एफ. टाग एवं लुईस के अनुसार - "बजट भविष्य को पहचानने की कला है।"

5. प्रो॰जी॰के॰ के अनुसार - "बजट वह परिपत्र है, जिसमें समस्त सरकारी आय-व्यय के अनुमान एवं पूर्वानुमान होते हैं, गत धन संग्रह एवं खर्च करने का भी आदेश है।"

6. Oxford Dictionary के अनुसार - "Budget is the annual estimate of revenue and expenditure of the library".

7. Webster's Dictionary के अनुसार - "Budget is the estimate of the financial position of the library for a definite period of time".

**14.7.1 बजट की आवश्यकता -**

किसी भी पुस्तकालयी सेवाओं के परिचालन में वित्त की भूमिका अत्यन्त॰ महत्वपूर्ण होती है। समुचित वित्त के बिना पुस्तकालय सेवा को न तो संचालित किया जा सकता है और न ही उनमें स्थायित्व ही लाया जा सकता है। अतएव वित्त के महत्ता के

आधार पर किसी पुस्तकालय विशेष में बजट की आवश्यकता के निम्न कारण स्पष्ट किये जा सकते हैं-

1. सीमित वित्तीय संसाधनों को विभिन्न मदों में खर्च करने तथा उन पर नियन्त्रण रखने के लिए बजट आवश्यक है।
2. पुस्तकालय के लिए भविष्य की योजना तैयार करने तथा समुचित ढंग से प्रबन्धन हुए बजट आवश्यक है।
3. पुस्तकालय के प्रत्येक विभाग तथा प्रत्येक सेवा एवं कार्य हेतु तार्किक ढंग से धनराशि निर्धारित करने हेतु बजट आवश्यक है।
4. वर्तमान एवं भविष्य में दी जाने वाली सेवाओं के विस्तार हेतु बजट आवश्यक है।
5. पुस्तकालय की आय एवं व्यय में उचित सन्तुलन बनाये रखने हेतु बजट आवश्यक है।
6. पुस्तकालय की कुल आय एवं व्यय की सटीक जानकारी हेतु बजट आवश्यक है।
7. पुस्तकालय के अनावश्यक खर्चों पर रोक लगाने के लिए बजट एक आवश्यक उपकरण है।

### 14.7.2 बजट का उद्देश्य -

पुस्तकालय बजट निर्माण का प्रमुख उद्देश्य शोधकर्ताओं, पाठकों एवं शिक्षकों को श्रेष्ठ एवं सतत् पुस्तकालयी सेवायें प्रदान करना एवं पुस्तकालय के विकास की बाधाओं तथा अनावश्यक व्ययों में कटौती करना भी होता है। वस्तुतः बजट पुस्तकालय के विभिन्न मदों पर होने वाले खर्चों को नियन्त्रित, समन्वित तथा उनकी प्राथमिकता को निर्धारित करता है।

संक्षेप में पुस्तकालय विशेष में बजट निर्माण के निम्न प्रमुख उद्देश्य होते हैं-

1. एक निश्चित समयावधि के लिए पुस्तकालय के लिए अनिवार्य आय एवं व्यय का विवरण देना।
2. पुस्तकालय के आय एवं व्यय में उचित सन्तुलन बनाये रखना।
3. भविष्य के लिए नीति निर्धारण करने तथा योजना बनाने में सहायता करना।



HMDC-019

4. पुस्तकालय के आय एवं व्यय पर नियन्त्रण बनाये रखना।

5. पुस्तकालय के प्राधिकारियों को पुस्तकालय के वित्तीय क्रियाकलापो की जानकारी देना।

6. पुस्तकालय के निधारित उद्देश्यों की प्राप्ति से सम्बन्धित परिणामों के मूल्यांकन में एक साधन के रूप में कार्य करना।

7. पुस्तकालय की सीमित आय का सर्वोत्तम उपयोग करवाना।

8. बजट एक प्रकार का माँग पत्र होता है, जिसके द्वारा ग्रन्थालयी पुस्तकालय प्राधिकारी से आवश्यक धन एवं विभिन्न मदों पर खर्च करने की अनुमति माँगता है।

9. भविष्य की आवश्यकताओं के लिए वर्तमान में वित्तीय प्रबन्धन करना।

10. पुस्तकालय के विकास हेतु प्रयासरत रहना।

11. बजट के माध्यम से आवश्यक एवं उपयोगी मदों पर नियोजित ढंग से धनराशि व्यय करना।

### 14.7.3 आदर्श बजट के विशिष्ट लक्षण -

पुस्तकालय के लिए बजट तैयार करते समय कुछ विशिष्ट तथ्यों को अवश्य ध्यान में रखा जाना चाहिए। यदि इनको उचित रूप से ध्यान में रखकर आय-व्यय तैयार किया जाए तो निश्चय ही एक श्रेष्ठ बजट का निर्माण हो सकता है। आदर्श बजटिंग के कुछ प्रमुख लक्षण या विशेषताएँ अग्रलिखित हैं-

**1. उद्देश्यतात्मक विशेषता -**

पुस्तकालय के लिए बजट तैयार करते समय पुस्तकालय के पूर्वनिर्धारित आदर्शों एवं उद्देश्यों को अवश्य ही ध्यान में रखा जाना चाहिए, जिससे बजट निर्माण के उद्देश्यों एवं पुस्तकालय के उद्देश्यों को समन्वित किया जा सके।

**2. समय सम्बन्धी विशेषता -**

बजट सामान्यतः एक निश्चित अवधि के लिए तथा उस अवधि से पूर्व ही तैयार की जाती है। समय पूर्व ही उनके विभिन्न पक्षों पर विचार-विमर्श करके संस्तुति कर ली जाती है। साधारणतया बजट एक वर्ष की अवधि के लिए तैयार किया जाता है।

**3. बजट की विवरणात्मक विशेषता -**

बजट का निर्माण इस प्रकार किया जाना चाहिए कि वह संस्था के प्रत्येक विभाग एवं प्रत्येक कार्य का पूर्ण विवरण उपलब्ध करवाता हो। इसके लिए विभिन्न विभागों में कार्यों का विश्लेषण किया जाना चाहिए तथा प्राप्त निष्कर्षों के अधार पर उचित कार्य हेतु उचित धनराशि का आवंटन किया जाना चाहिए। यदि बजट का निर्माण विभाग वार किया जाय तो वह सर्वाधिक श्रेष्ठ माना जाता है।

**4. गतवर्ष पर आधारित -**

बजट तैयार करते समय पिछले वर्ष के आय एवं व्यय को ध्यान में रखा जाना चाहिए। यदि पिछले वर्ष भी बजट का निर्माण किया गया हो तो उसकी सफलता एवं उपयोगिता का उचित मूल्यांकन करते हुए आगामी बजट तैयार किया जाना चाहिए।

**5. आय स्त्रोत का सुदृढ़ आधार -**

बजट में प्रस्तुत किये गये आय के विभिन्न स्त्रोतों का आधार सुदृढ़ होना चाहिए तथा वे स्थायी प्रवृत्ति के होने चाहिए। बजट में आय के उन स्त्रोतों का विवरण नहीं देना चाहिए, जो अस्थायी अथवा मात्र सम्भावित हो, अर्थात बजट में केवल उन्हीं आय स्त्रोतों का वर्णन किया जाना चाहिए जिनसे धन मिलने की पूर्ण सम्भावना हो।

**6. व्यय मदों पर उचित तर्क -**

बजट में दिखाये गये खर्चों का उचित कारण एवं तर्क अवश्य स्पष्ट किया जाना चाहिए ताकि भविष्य के लिए विवरण उपलब्ध हो सके तथा कमियों को आगामी बजट में सुधारा जा सके।

**7. वार्षिक प्रतिवेदन -**

बजट के साथ ही पुस्तकालय का वार्षिक प्रतिवेदन भी प्रस्तुत किया जाना चाहिए जिससे कि पुस्तकालय प्राधिकारी पुस्तकालय में किये गये कार्यों का अवलोकन कर सकें तथा बजट के लिए धन का प्रावधान करते समय गम्भीरता पूर्वक विचार-विमर्श कर उचित निर्णय ले सकें।

**8. बजट का मूल्यांकन -**

बजट का निर्माण कुछ इस तरह किया जाना चाहिए, जिससे एक वर्ष का बजट कई चरणों में मूल्यांकित किया जा सके, जैसे बजट को तीन - तीन माह के चरणों में विभाजित कर लेना चाहिए तथा प्रत्येक तीन माह पर बजट का मूल्यांकन किया जाना चाहिए। जिससे बजट निर्माण में कोई त्रुटि दृष्टिगोचर हो तो उनका सुधार किया जा सके।

HMDC-019

इस प्रकार बजट को आवश्यकतानुसार लचीला होना चाहिए।

## 14.8 पुस्तकालय बजट : निर्माण की विभिन्न विधियाँ :-

पुस्तकालय विकास के प्रारम्भिक काल में बजट निर्माण की कोई विशेष विधि प्रचलन में नहीं थी, केवल प्राथमिकताओं का ध्यान रखा जाता था। परन्तु समय के साथ पुस्तकालयों के विकास में तीव्रता आयी, सेवायें बढ़ गई, कार्य बढ़ गया। पुस्तकालयों की माँग एवं आवश्यकता में भी वृद्धि हुई। फलस्वरूप पुस्तकालयी वित्त का नियोजन एवं प्रबन्धन किया जाने लगा। इसके लिए सिद्धान्त, नियम, विधियाँ इत्यादि निर्धारित की गयी। वर्तमान में पुस्तकालय समिति द्वारा बजट का निर्माण किया जाता है। पुस्तकालय के वरिष्ठ सदस्यों, पुस्तकालय विद्वानों, समाज सेवियों, विषय विशेषज्ञों, अर्थशास्त्रियों इत्यादि गणमान्य व्यक्ति पुस्तकालय समिति के सदस्य होते हैं। बजट किसी प्रचलित विधि द्वारा तैयार किया जाता है। इन्हें कई चरणों में जांचने परखने के पश्चात् पुस्तकालय की कार्यकारी समिति के द्वारा अनुमोदित किया जाता है। वर्तमान समय में पुस्तकालय बजट बनाने हेतु अनेक परम्परागत एवं आधुनिक विधियाँ प्रचलन में हैं। पुस्तकालय अपनी आवश्यकता के अनुरूप उनमें से श्रेष्ठ विधि का चयन करते हैं। बजट निर्माण करने की कुछ प्रमुख विधियाँ अग्रलिखित हैं –

### 1. लाइन प्रति लाइन बजट -

बजट निर्मित करने की यह सर्वाधिक सामान्य एवं परम्परागत विधि है। जिसके अन्तर्गत विगत वर्षों के व्यय के अधार पर वर्तमान बजट तैयार किया जाता है। इस विधि में सर्वप्रथम पुस्कालय व्यय के विभिन्न मदों के विस्तृत भागों में विभाजित कर लिया जाता है, जैसे-कर्मचारियों का वेतन, पाठ्य सामग्रियों का क्रय, अनुरक्षण व्यय, उपकरण एवं फर्नीचर व्यय इत्यादि। इन्हें आवश्यकतानुसार विभागों एवं उप-विभागों के रूप में वर्गीकृत कर लिया जाता है। इस विधि द्वारा वर्गीकृत विभिन्न मदों में विगत वर्ष कितनी धनराशि आवंटित थी, इसे ध्यान में रखते हुए उस धनराशि में 5 से 10 प्रतिशत तक वृद्धि कर, बजट तैयार कर लिया जाता है। इस विधि में पुस्तकालय के क्रिया-कलापों, गतिविधियों तथा सेवाओं का मूल्यांकन नहीं किया जाता है और न ही भविष्य के लिए कोई भी नवीन योजना प्रस्तुत की जाती है। इस विधि का प्रमुख गुण, इसका निर्माण एवं प्रस्तुतीकरण का सरल होना है परन्तु इस प्रकार की विधि में लचीलापन नहीं होता है।

जिस कारण एक मद के लिए आवंटित धन किसी अन्य मद में खर्च नहीं किया जा सकता है।

**2. प्रोग्राम बजट -**

यह विधि "हूबर कमीशन रिपोर्ट" के आधार पर प्रतिपादित की गयी है। इस विधि में तीन प्रमुख चरण हैं -

1. अभिकरण (पुस्तकालय) के उद्देश्यों का वक्तव्य।
2. वैकल्पिक तरीकों पर पूर्ण विचार।
3. प्रभावशीलता तथा कार्यकुशलता के आधार पर सर्वोत्तम तार्किक चयन।

यह विधि किस उद्देश्य के लिए धन खर्च किया जा रहा है? तथा प्रत्येक कार्यक्रम के लिए कैसे संसाधनों को परिनियोजित किया जाए? जैसे प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास करती है। यह विधि कार्य इकाइयों अथवा कार्यभार के आधार पर वित्तीय योजना प्रस्तुत करती है।

यह विधि पुस्तकालय योजनानुसार जिन कार्यों एवं सेवाओं को किया जाना होता है, उनके लिए वित्त निर्धारित करने पर केन्द्रित है, अर्थात् इस विधि में बजट निर्माण का मुख्य केन्द्र बिन्दु पुस्तकालय के क्रियाकलाप होते हैं। इसमें व्यय हेतु धनराशि का अनुमान सेवाओं के लागत के आधार पर निश्चित किया जाता है। इस प्रकार के बजट निर्माण हेतु पुस्तकालय अपने प्रोग्रामों को विभिन्न वर्गों में विभाजित कर लेते हैं जैसे- प्रशासनिक, तकनीकी, पाठक सेवाएँ, सामयिक सेवा, इत्यादि। तत्पश्चात् प्रत्येक वर्ग के क्रिया-कलापों के लिए धनराशि एवं उसके व्यय का प्रावधान किया जाता है। यह विधि विभिन्न विभागों के अध्यक्षों को अपनी आवश्यकताओं को मापने तथा अपने व्ययों की निगरानी करने का अवसर प्रदान करती है।

**3. परिसूत्र आधारित बजट -**

यह एक नवीन प्रकार की बजट निर्माण करने की विधि है, जो उपलब्ध संसाधनों का बंटवारा दो अथवा दो से अधिक विशेषताओं के मध्य ज्ञात अथवा स्वीकृत किए गए सम्बन्धों पर आधारित है। इसके अन्तर्गत वित्तीय आँकलन के लिए एक सूत्र या फार्मूला मान्य किया जाता है। ऐसा फार्मूले समय-समय पर विभिन्न विशेषज्ञों, आयोगों या समितियों द्वारा निर्धारित किए जाते हैं। इसके अन्तर्गत संस्था विशेष द्वारा



HMDC-019

अपने पुस्तकालय के लिए किसी मान्य फार्मूला के आधार पर धन उपलब्ध करवाया जाता है। ऐसे फार्मूलों के लिए आवश्यक सूचनायें एवं आंकड़े छात्रों के पंजीकरण, शैक्षणिक प्रोग्राम, संकायों एवं विभागों की संख्या, उपलब्ध संग्रह तथा अन्य अनेक तथ्यों से प्राप्त किये जाते हैं। यह एक विस्तृत एवं गतिशील विधि है, इससे समय एवं श्रम की बचत होती है।

**4. परफॉर्मेन्स बजट -**

यह विधि प्रोग्राम बजट के ही समान है, केवल अन्तर इस बात का है कि इसमें प्रोग्रामों पर बल न देकर, उपलब्धियों पर बल दिया जाता है। इसमें व्यय करने का आधार पुस्तकालय के क्रियाकलापों को करने में कर्मचारियों की कार्यक्षमता पर अधिक बल दिया जाता है। इस विधि में किसी एक निश्चित समय में पुस्तकालय के सभी क्रियाकलापों से सम्बन्धित परिमापात्मक तथ्यों का संग्रह करने की आवश्यकता होती है। इसके अन्तर्गत पुस्तकालय तथा उसके कर्मचारियों की उपलब्धियों को ज्ञात करने के लिए लागत लाभ विश्लेषण तथा मूल्यांकन करने के स्थापित एवं मान्य सिद्धान्तों को उपयोग में लाया जाता है। इस प्रकार के बजट में गुण की अपेक्षा परिणाम पर विशेष बल दिया जाता है।

**5. प्लानिंग प्रोग्रामिंग बजट पद्धति -**

बजट निर्माण की यह विधि सर्वप्रथम यू॰एस॰डी॰ओ॰डी॰ (1961) द्वारा प्रस्तावित की गई। इस विधि को दो मूल तत्व-बजट निर्माण तथा प्रणाली विश्लेषण है। इस विधि को प्रोग्राम बजटिंग तथा परफॉमेन्स बजटिंग, दोनों की ही विशेषताओं को सम्मिलित करके बनाया गया है। इस विधि का केन्द्र बिन्दु योजना पर आधारित है। यह विधि पुस्तकालय के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को लेकर प्रारम्भ होती है तथा प्रोग्रामों एवं सेवाओं की स्थापना पर समाप्त होती है। यह विधि नियोजन, गतिविधियों, कार्यक्रमों तथा सेवाओं इत्यादि को साकार परियोजना में अनुवादित करने के कार्यों को संयुक्त करती हैं और अन्त में आवश्यकताओं को बजटीय पदों में प्रस्तुत करती है।

**6. शून्य आधारित बजट -**

इस विधि का प्रतिपादन सन् 1970 ई0 में अमेरिका के पीटर फॉयर द्वारा किया गया। इस प्रकार के बजट में पुस्तकालयाध्यक्ष को बजट का विवरण विस्तार से देना पड़ता है तथा व्यय को न्यायोचित भी सिद्ध करना पड़ता है। यह विधि परम्परागत विधियों की तुलना में अच्छी है। वास्तव में इस विधि के द्वारा प्रस्तुत किये गये बजट पुस्तकालय की बजट सम्बन्धी आवश्यकताओं, गतिविधियों एवं सेवाओं का एक पूर्ण विवरण प्रदर्शित करते हैं।

इस प्रकार के बजट निर्माण में पिछले वर्ष में क्या हुआ है, इस पर ध्यान नहीं

दिया जाता है, बल्कि वर्तमान सामयिक गतिविधियों पर अधिक ध्यान दिया जाता है तथा प्रत्येक प्रोग्राम अथवा क्रियाकलाप का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया जाता है। जो वित्तीय व्यवस्था में पिछले वर्ष का सन्दर्भ दिये बिना प्रस्तुत की जाती है। दूसरे शब्दों में इस विधि में वित्तीय मांगों को प्रत्येक वर्ष नये सिरे से प्रस्तुत किया जाता है।

**7. आपरेटिंग बजट -**

ऐसा बजट जो किसी निश्चित अवधि जैसे एक वर्ष के लिए पुस्तकालय के अनुमानित आय एवं व्यय का विवरण प्रस्तुत करता है, आपरेटिंग बजट कहलाता है। इसमें पुस्तकालय के वार्षिक व्यय जैसे वेतन, प्रलेख, क्रय एवं अन्य खर्चों को भी दर्शाया जाता है।

भारत में लगभग सभी पुस्तकालय बजट की पारम्परिक विधियों का अनुसरण करते हैं। परन्तु हाल के वर्षों में कुछ नई विधियों की ओर पुस्तकालयों का ध्यान आकर्षित हुआ है। चूंकि पुस्तकालय के क्रियाकलाप एवं सेवायें सतत् प्रकृति के होते हैं और भूतकाल के प्रसंग के बिना किसी भी तरह के वित्तीय निर्धारण नहीं किये जाते हैं, इसीलिए नवीन विधियों को सावधानी पूर्वक परीक्षण के बाद ही लागू करने की स्थिति में होते हैं। नवीन तकनीकियों के माध्यम से सेवा में गुणवत्ता एवं सुधारों को भी नहीं नकारा जा सकता है। अतः इन नवीन बजटीय विधियों को और अधिक उद्देश्यपूर्ण मूल्यांकन कर विकसित किया जाना चाहिए, साथ ही भारतीय पुस्तकालयों से यह आशा की जानी चाहिए कि वे इन नवीनतम विधियों द्वारा बजट तैयार करना आरम्भ करेंगे और इनके संचालन में पर्याप्त अनुभव अर्जित कर लेंगे।

## 14.9 पुस्तकालय बजट निर्माण हेतु मानदंड और मानक :-

पुस्तकालय के लिए वित्तीय नियोजन एवं बजट तैयार करने के लिए विशेषज्ञों, समितियों एवं आयोगों द्वारा कुछ मानक एवं मानदण्ड स्थापित किये गये हैं। ये मानक वित्तीय आँकलन, वित्तीय व्यवस्था, वित्तीय आवंटन को न्याय संगत बनाने तथा व्ययों पर नियंत्रण स्थापित करने में पुस्तकालयों की सहायता करते हैं।

इन मानकों में सर्वप्रथम पुस्तकालय के लिए वित्तीय आँकलन की विधियों का विवरण प्रस्तुत किया जाता है। वित्तीय आँकलन की इन विधियों का अध्ययन इसी इकाई में पहले किया जा चुका है। इस मान के अन्तर्गत दूसरा महत्वूपर्ण पक्ष है, वित्त का विभिन्न व्यय मदों में न्यायसंगत आवंटन। पुस्तकालय व्यय के विभिन्न मदों में वित्त के आवंटन से सम्बन्धित मानक निम्न प्रकार है-

**(क) कर्मचारियों का वेतन व्यय -**

(1) सार्वजनिक पुस्तकालय के संदर्भ में मानक - सार्वजनिक पुस्तकालयों के संदर्भ

NMDC-019

में कर्मचारियों के वेतन हेतु निम्न मानक प्रस्तुत किये गये हैं-

(i) ग्रेट ब्रिटेन (1962) = कुल बजट का 44% -

(ii) संयुक्त राज्य अमेरिका (1962) = कुल बजट का 70%

(iii) भारत में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, विश्वविद्यालय एवं शिक्षा समितियों तथा डॉ0 एस॰आर॰ रंगानाथन की संस्तुतियों के आधार पर मानक - कुल बजट का 50%

(iv) दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी = कुल बजट का 52.2 %

(v) भारतीय राष्ट्रीय पुस्तकालय (1968) = कुल व्यय का 65.3%

(2) शैक्षणिक पुस्तकालय के सन्दर्भ में मानक - शैक्षणिक पुस्तकालयों के संदर्भ में कर्मचारियों के वेतन हेतु मानक प्रस्तुत किये गये हैं -

(i) यू॰जी॰सी॰ के अनुसार (1975) = कुल बजट का 50%

(ii) डॉ॰ रंगनाथन के अनुसार = कुल बजट का 50%

(iii) दिल्ली विश्वविद्यालय (1966-67) = कुल बजट का 31.2%

**(ख) पुस्तक एवं अन्य पाठ्य-सामग्रियों पर व्यय -**

पुस्तकें ही पुस्तकालय का आधार होती है। अतएव इनके बिना किसी भी पुस्तकालय की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। पुस्तकों एवं अन्य पाठ्य-सामग्रियों के इस महत्व को ध्यान में रखते हुए पुस्तकालयों को अपने पाठ्य-सामग्री संग्रह को विकसित एवं अद्यतन रखने हेतु उचित एवं निरन्तर धन की व्यवस्था करनी चाहिए। पुस्तकालय में पाठ्य सामग्रियों के महत्व के आधार पर विभिन्न समितियों एवं विशेषज्ञों ने वित्त व्यवस्था हेतु निम्न मानक संस्तुत किये हैं-

**(1) सार्वजनित पुस्तकालय के संदर्भ में मानक -**

(i) ग्रेट ब्रिटेन (1930) =

| | |
|---|---|
| पुस्तक कुल बजट का | 23.75% |
| पत्र-पत्रिका, कुल बजट का | 2.50% |
| मरम्मत एवं अनुरक्षण, कुल बजट का | 3.75% |
| कुल व्यय | 30% |

(ii) संयुक्त राज्य अमेरिका (1957) -

| | |
|---|---|
| पुस्तकें कुल बजट का | 79.7% |
| पत्र - पत्रिका | 7.25% |
| मरम्मत एवं अनुरक्षण | 13.5% |
| कुल व्यय | 100% |



HMDC-019

(iii) डॉ॰ रंगानाथन के अनुसार = कुल व्यय का 40%

(iv) दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी (1965 - 66) -

| | |
|---|---|
| पुस्तक पर | 23.54% |
| पत्र - पत्रिका पर | 0.70% |
| मरम्मत एवं अनुरक्षण कुल बजट का | 5.97% |
| ग्रामोफोन रिकार्डर्स इत्यादि पर | 0.44% |
| कुल व्यय | 30.65% |

**(2) शैक्षणिक पुस्तकालय के सन्दर्भ में मानक** - शैक्षणिक पुस्तकालयों के संदर्भ में निम्न मानक प्रस्तुत किये गये हैं-

(i) डॉ0 रंगनाथम के अनुसार

| | |
|---|---|
| पुस्तक एवं पत्र-पत्रिका पर | 40.0% |
| मरम्मत इत्यादि | 10.0% |

(ii) दिल्ली विश्वविद्यालय पुस्तकालय में (1966-67)

| | |
|---|---|
| कुल व्यय का | 3.75% |
| कुल व्यय | 30% |

(iii) यू॰जी॰सी॰ के अनुसार

| | |
|---|---|
| पुस्तक | 30.0% |
| पत्र–पत्रिका | 3.0% |
| जिल्दसाजी | 7.0% |
| अन्य | 10.0% |
| कुल व्यय | 40.0% |

**(ग) अन्य विविध व्यय -**

पुस्तकालय व्यय का सर्वाधिक भाग कर्मचारियों के वेतन एवं पाठ्य-सामग्रियों पर खर्च किया जाता है, परन्तु इसके अतिरिक्त भी कुछ अन्य महत्वपूर्ण मद हैं, जिन पर गम्भीरतापूर्वक विचार किया जाना चाहिए जैसे - फर्नीचर, लेखन - सामग्री, बिजली व्यय, बीमा व्यय, आधुनिक तकनीकी जैसे - कम्प्यूटर तकनीकी, संचार तकनीकी, टाईपिंग मशीन, श्रव्य-दृश्य उपकरण इत्यादि। आधुनिक पुस्तकालयों में उपरोक्त व्यय मद भी अत्यन्त महत्वूपर्ण एवं उपयोगी है। अतः बजट निर्माण करते समय इन पक्षों पर भी आवश्यक धनराशि आवंटित की जानी चाहिए। साधारणतः अभी तक इस मद में विभिन्न संस्तुतियों के आधार पर कुल बजट का लगभग 10 से 20 प्रतिशत तक वित्त का आवंटन किया जाता है।

## 14.10 पुस्तकालय बजट बनाते समय ध्यान रखने योग्य कारक

पुस्तकालय के बजट के निर्माण के समय निम्नलिखित कारकों को ध्यान में रखा जाना चाहिए, क्योंकि इन कारकों का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव बजट पर पड़ता है-

**(अ) पुस्तकालय का प्रकार –**

1. शैक्षणिक पुस्तकालय
2. सार्वजनिक पुस्तकालय
3. विशिष्ट पुस्तकालय

**(ब) पुस्तकालय का स्तर-**

1. अविकसित
2. अर्द्धविकसित
3. विकसित

**(स) पाठकों के प्रकार–**

1. शिक्षित पाठक
2. शोधरत पाठक
3. विशेषज्ञ पाठक
4. सामान्य पाठक
5. अशिक्षित

**(द) पाठ्य-सामग्रियों का संग्रह -**

1. पाठ्य- पुस्तकें
2. शोध - पत्रिकायें
3. सन्दर्भ ग्रन्त
4. पत्र-पत्रिकायें
5. अन्य पाठ्य सामग्री

**(य) पुस्तकालय का स्थान -**

1. ग्रामीण क्षेत्र
2. शहरी क्षेत्र

**(र) अन्य-**

1. आधारभूत नीतियाँ
2. पुस्तकालय द्वारा संचालित सेवायें
3. पुस्तकालय का आर्थिक स्थिति
4. पुस्तकालय की पैतृक संस्था
5. पुस्तकालय कर्मचारी

NMDC-019

| आय | | | व्यय | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आय के स्रोत | वास्तविक 2007-2008 | अनुमानित 2008-2009 | आय के स्रोत | वास्तविक 2007-2008 | अनुमानित 2008-2009 |
| 1. सरकारी अनुदान | 4000000 | 430000 | 1. कर्मचारियों का वेतन | 450000 | 500000 |
| 2. पुस्तकालय उपस्कर | 4000000 | 440000 | 2. पुस्तकें | 300000 | 30000 |
| 3. उपहार दान, भेंट | 30000 | 33000 | 3. पत्र पत्रिकायें | 50000 | 56000 |
| 4. अर्थदण्ड इत्यादि | 22000 | 35000 | 4. जिल्द बंदी | 40000 | 45000 |
| 5. रजिस्टेशन, काशन मनी | 2500 | 3700 | 5. प्रकाश तथा वायु | 25000 | 28000 |
| 6. सेमीनार कक्ष का किराया | 13000 | | 6. लेखन सामग्री | 15000 | 18000 |
| 7. विविध आय | 10000 | 25000 | 7. अन्य व्यय | 20000 | 23000 |
| **कुल योग** | **900000** | **1000000** | **कुल योग** | **900000** | **1000000** |

## ( A ) सार्वजनिक पुस्तकालय बजट

| आय | | | व्यय | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आय के स्रोत | वास्तविक 2007-2008 | अनुमानित 2008-2009 | आय के स्रोत | वास्तविक 2007-2008 | अनुमानित 2008-2009 |
| 1. यू0जी0सी0 | 4500000 | 500000 | 1. वेतन | 450000 | 500000 |
| 2. राज्य सरकार | 380000 | 430000 | 2. पुस्तक | 300000 | 30000 |
| 3. उपहार भेंट इत्यादि | 400000 | 43000 | 3. पत्र पत्रिकाये | 50000 | 56000 |
| 4. रजिस्ट्रेशन शुल्क | 10000 | 12000 | 4. पुस्तक मरम्मत | 40000 | 45000 |
| 5. अर्थदण्ड इत्यादि | 10000 | 10000 | 5. बिजली खर्च | 25000 | 28000 |
| 6. रद्दी की बिक्री, ब्याज इत्यादि | 10000 | 10000 | 6. कम्प्यूटर | 15000 | 18000 |
| | | | 7. फर्नीचर्स | 20000 | 23000 |



NMDC-019

## 14.12 सारांश

किसी पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्र के सुनियोजित संचालन के लिए एक उपयुक्त बजट का निर्माण आवश्यक होता है। एक संतुलित एवं उपयोगी बजट का निर्माण करना प्रबन्धन का महत्वपूर्ण कर्त्तव्य एवं उत्तरदायित्व है। बजट में पुस्तकालय के विभिन्न मदों में होने वाले व्यय को समुचित ढंग से प्रकट किया जाना चाहिए तथा यथा सम्भव व्यय से सम्बन्धित तर्कों एवं आवश्यकता पर विस्तारपूर्वक विवरण प्रस्तुत किया जाना चाहिए।

पुस्तकालय बजट पुस्तकालय का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण आधार स्तम्भ है, जिस पर पुस्तकालय की सम्पूर्ण गतिविधियाँ पूर्णरूपेण निर्भर होती है और जो पुस्तकालय की सफलता एवं असफलता का भी प्रमुख कारक माना जाता है। अतः पुस्तकालय बजट का निर्माण सदैव विशेषज्ञों की राय के आधार पर तथा प्रचलित मानकों के अनुसरण पर आधारित होना चाहिए साथ ही पुस्तकालयाध्यक्ष का योग्य, कुशल, कर्मठ तथा नवीन तकनीकियों का जानकार होना चाहिए, उसमें बजट को प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुत करने तथा उसमें दिये गये विवरणों को स्पष्ट करने की योग्यता एवं क्षमता होनी चाहिए तभी वह अपनी माँगों को प्राधिकारी के समक्ष उचित ढंग से प्रस्तुत कर सकेगा।

प्रस्तुत इकाई में आपके अध्ययन के लिए पुस्तकालय वित्त एवं बजट से सम्बन्धित तथ्यों, विचारधाराओं, सिद्धान्तों एवं मानकों को प्रस्तुत किया गया है। जिसमें पुस्तकालय वित्त से आशय, वित्तीय सिद्धान्त, आय के स्त्रोतों, बजट से आशय तथा निर्माण विधि पर विस्तार पूर्वक चर्चा की गयी। इसी इकाई में आदर्श बजट निर्माण हेतु एक नमूना भी प्रस्तुत किया गया है। आशा है कि आप पाठकगण द्वारा इस इकाई के अध्ययन से लाभान्वित होंगे।

## 14.13 अभ्यास कार्य

1. पुस्तकालय वित्त को परिभाषित करते हुए, इसके विभिन्न सिद्धान्तों की विवेचना करें।
2. पुस्तकालय आय के विभिन्न स्त्रोतों एवं व्यय के प्रमुख मदों पर प्रकाश डालिये।
3. पुस्तकालय की वित्तीय आवश्यकताओं के आँकलन के लिए विभिन्न विधियों की गणना करें।

NMDC-019

4. पुस्तकालय बजट से आप क्या समझते हैं? इसके आवश्यकता, उद्देश्य एवं विशेषता पर प्रकाश डालिये।

5. पुस्तकालय बजट तैयार करन की विभिन्न विधियाँ का उल्लेख कीजिए।

6. पुस्तकालय बजट निर्माण हेतु मान्य मापदण्ड, मानकों एवं कारकों पर एक निबन्ध लिखिये।

## 14.14 सन्दर्भ – ग्रन्थ -


1. अग्रवाल, श्याम सुन्दर (1996), ग्रन्थालय प्रबन्धन के मूल तत्व, जयपुर : राज पब्लिशिंग हाऊस।

2. त्रिपाठी, एस॰ एस॰ (et.al.) (1999), ग्रन्थालय प्रबन्ध, आगरा : वाई॰ के॰ पब्लिशर्स।

3. शर्मा, बी॰के॰ एवं ठाकुर, यू॰ एम॰ (2006), पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान, आगरा : वाई॰ के॰ पब्लिशर्स।

4. Indira Gandhi National Open University, (2003), School of Social Sciences. BLIS-02 : Library Finance and Budget. New Delhi : IGNOU.

5. माथुर, एल॰आर॰ (et.al) (2003), लाइब्रेरियन परीक्षा मैनुअल, नई दिल्ली : एच॰जी॰ पब्लिकेशन।

## NOTE

# NOTE

# NOTE

# NOTE